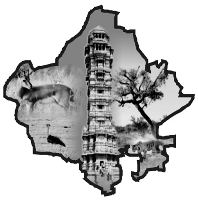

राजस्थान अध्ययन
भाग–2

कक्षा–10

संयोजक एवं लेखक
प्रो. एन. डी. माथुर
आर्थिक प्रशासन एवं वित्तीय प्रबन्ध विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय
जयपुर

लेखकगण

डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल
से.नि. संयुक्त निदेशक,
कॉलेज शिक्षा, राजस्थान,
ई–2/211, चित्रकूट, जयपुर

डॉ. हरिमोहन सक्सेना
से.नि. संयुक्त निदेशक,
कॉलेज शिक्षा, राजस्थान,
बी–1, एम.बी.एस.नगर कोटा जंक्शन, कोटा

डॉ. पी.डी. गुर्जर
विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग,
राज. ला.व.शा. स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
कोटपूतली, जयपुर

डॉ. कुमारी कमलेश माथुर
विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग,
जे बी.शाह स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
झुंझुनू

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर

प्रकाशक
राजस्थान राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल, जयपुर

विषय सूची

1.	स्वतन्त्रता पूर्व राजस्थान में सामाजिक सुधार	1 – 6
2.	स्वतन्त्रता पूर्व राजस्थान का शैक्षिक परिदृश्य	7 – 17
3.	परम्परागत जल प्रबंधन	18 – 26
4.	विरासत का संरक्षण	27 – 40
5.	राष्ट्रीय उद्यान एवं वन्य जीव अभयारण्य	41 – 50
6.	पशुधन एवं डेयरी विकास	51 – 56
7.	लघु उद्योग, हस्तशिल्प, खादी एवं ग्रामोद्योग	57 – 69
8.	पंचायतीराज एवं ग्रामीण विकास	70 – 82
9.	महिला सशक्तिकरण	83 – 100
10.	उपभोक्ता संरक्षण	101 – 108

अध्याय – 1

स्वतन्त्रता पूर्व राजस्थान में सामाजिक सुधार

पृष्ठ भूमिः

19 वीं सदी में भारत ने पुनर्जागरण के युग में प्रवेश किया, समाज सुधार आन्दोलन हुए, राजस्थान भी इस जागरण से अछूता नहीं रहा। प्राचीन काल से ही कुछ प्रथाऐं और परम्पराये विकसित हुई कुछ नई प्रथाओं ने जन्म लिया कुछ पुरानी प्रथाओं ने विकृत स्वरूप ग्रहण कर लिया था, फलस्वरूप समाज को एक नई क्रांन्ति की आवश्यकता हुई। राजपूताना का समाज कई धर्मो मुख्यतः हिन्दू,जैन, मुस्लिम और सिक्खों से संगठित समुदाय था। हिन्दू समाज की वर्ण व्यवस्था जातिगत स्वरूप में स्थापित थी, जातियाँ उपजातियों में विभक्त थी। प्राचीन काल में समाज में वर्ण व्यवस्था श्रम और कार्य विभाजन पर आधारित एक सकारात्मक व्यवस्था थीं, लेकिन कालान्तर में यह जातीय स्वरूप ग्रहण करते हुए कार्य विभाजन नकारात्मक स्वरूप सोपान व्यवस्था में बदल गई। विवाह संस्था सामाजिक संगठन की सबसे मजबूत व्यवस्था रही है, लेकिन इसमें भी बालविवाह, अनमेल विवाह, जैसे तत्त्व जुड़ गये। इसी प्रकार कुछ अन्य कुप्रथाऐं सती प्रथा, दासप्रथा, मानव व्यापार, डाकन प्रथा, समाधि, मृत्यु,आदि प्रथाये अपनी जड़ें जमाने लगी थी। योग, दर्शन, मन, बुद्धि और शरीर को स्वस्थ रखने वाला महान भारतीय दर्शन है, लेकिन कुछ लोगों ने योगिक क्रियाये सीखकर इसका दुरुपयोग करने का प्रयत्न किया। इस प्रकार 19 वीं सदी के राजपूताना में अनेक कुप्रथायें स्थापित थी। पुरातनपंथी विचारों से इन्हें संरक्षण भी मिल रहा था। राजनीतिक और आर्थिक ढ़ांचा इस व्यवस्था से प्रभावित था।

ब्रिटिश सर्वोच्चता काल

1818 – 15 अगस्त 1947 राजपूताना में 1818 के ब्रिटिश कम्पनी से सन्धियों और 1857 के बाद ब्रिटिश ताज की सर्वोच्चता स्थापित होने के बाद स्थितियाँ बदलने लगी। यद्यपि प्रारम्भ में 1844 तक अहस्तक्षेप की नीति अपनाने के कारण कम्पनी सीधे जनसाधारण से संबन्ध और धार्मिक मामलों मे हस्तक्षेप नहीं करना चाहती थी सामाजिक सुधारों के लिये कम्पनी उपयुक्त वातावरण तैयार करना चाहती थी। अंग्रेजो ने पहले प्रशासनिक, न्यायिक और आर्थिक धार्मिक परिवर्तन कर उपयुक्त वातावरण बनाया, शिक्षा को प्रोत्साहित किया, तत्पश्चात् सामाजिक जीवन में प्रचलित कुप्रथाओं के निवारण के लिये समाज सुधारकों ने भी अहम् भूमिका निभाई, विवेकानन्द और दयानन्द सरस्वती की राजपूताना यात्रा इस दृष्टि से अपूर्व रही इन सुधारकों के अतिरिक्त 1919 –1947 तक सुधार कार्य राजनीतिक आन्दोलन कारियों के मार्गदर्शन में चला, जिसमें सामान्य जन भी जुड़ गया और क्रान्तिकारी परिवर्तन होने लगे।

3. विभिन्न सामाजिक कुप्रथायें व सुधार कार्य

सती प्रथा :–

यह प्रथा भारत के अन्य क्षेत्रों के साथ राजपूताना में भी प्रचलित थी। मध्यकाल में मुहम्मद बिन तुगलक और अकबर ने भी इस प्रथा को रोकने का प्रयास किया। ब्रिटिश सर्वोच्चता काल में सामाजिक और सरकारी दोनों दृष्टि से सती प्रथा को रोकने के प्रयत्न हुये हैं राजा राममोहन राय के प्रयास से प्रेरित होकर लार्ड विलियम बैंटिंक ने 1829 में कानून बनाकर

सती प्रथा को रोकने का प्रयास किया। गर्वनर जनरल विलियम बैटिक ने राजपूताना रियासतों को अनेक पत्र लिखे जिसमें उन्होंने सती प्रथा को बन्द करने के लिये प्रेरित किया। अभिलेखागार में इस सम्बन्ध में अनेक दस्तावेज उपलब्ध है। 1844 तक ब्रिटिश अधिकारी विधि निर्माण के लिये दबाव की अपेक्षा परामर्श और प्रेरणा की नीति का अनुसरण करते रहे, यह प्रयास असफल रहे। इस अवधि में दक्षिण पूर्व राजस्थान की बूंदी, कोटा और झालावाड़ के शासकों व रियासतों के कैप्टन रिचर्डसन ने खरीता (आदेश) भेजा और सती प्रथा रोकने के कानून बनाने के निर्देश दिए। ब्रिटिश कम्पनी अभी प्रत्यक्ष हस्तक्षेप की नीति के विरोध में थी। अतः रिचर्डसन के खरीता भेजने के प्रयासों को ब्रिटिश अधिकारियों ने विरोध किया। यद्यपि इस अवधि में कम्पनी अपनी स्थिति रियासतों में मजबूत होने के कारण अहस्तक्षेप की नीति त्यागकर हस्तक्षेप की नीति अपनाने पर विचार कर रही थी। इसी परिप्रेक्ष्य में 1839 में पोलिटिकल एजेन्ट जयपुर की अध्यक्षता में एक संरक्षक समिति गठित की गई और सती प्रथा निषेध के लिये मंथन किया, इसके लिये उन्होंने सामन्तों और स्थानीय अधिकारियों का सहयोग लेनाा उचित समझा।

सती प्रथा उन्मूलन के प्रयास :–

1844 में जयपुर संरक्षक समिति ने एक सती प्रथा उन्मूलन हेतु एक विधेयक पारित किया यह प्रथम वैधानिक प्रयास था जिसका समर्थन नहीं तो विरोध भी नहीं हुआ अतः इससे प्रोत्साहित होकर एजेन्ट टू द गर्वनर जनरल (ए.जी.जी.) ने उदयपुर, जोधपुर, बीकानेर, सिरोही, बांसवाड़ा, धौलपुर, जैसलमेर, बूंदी, कोटा और झालावाड़ में स्थित ब्रिटिश पोलिटिकल एजेन्ट को निर्देश दिये कि वे अपने व्यक्तिगत प्रभाव का उपयोग करते हुए शासकों से सती उन्मूलन हेतु नियम पारित कराने का प्रयास करे। यह प्रयास कई रियासतो में सफल रहा, डूंगरपुर, बांसवाड़ा और प्रतापगढ़ ने 1846 में सती प्रथा को विधि सम्मत नहीं माना। इसी क्रम में 1848 में कोटा और जोधपुर में भी और 1860 में अनेक प्रयासो के बाद मेवाड़ ने भी सती प्रथा उन्मूलन हेतु कानून बनाये गये। उक्त कानून का उल्लंघन करने पर जुर्माना वसूल करने की व्यवस्था की गई। 1881 में चार्ल्स वुड भारत सचिव बना, वुड ने कुरीतियों को रोकने के करने के प्रयासों को प्रभावहीन मानते हुए ए.जी.जी. राजपूताना को गश्ती पत्र भेजकर निर्देश दिये कि कुरीतियों को रोकने के लिये जुर्माने की अपेक्षा बन्दी बनाने जैसे कठोर नियम लागू किये जायें। अतः 1861 में ब्रिटिश अधिकारियों ने शासकों को नये कठोर नियम लागू करने की सूचना दी, जिसके अनुसार सती सम्बन्धित सूचना मिलने पर कारावास का दण्ड दिया जा सकता है, जुर्माने के साथ शासक को पद से हटाने और उस गाँव को खालसा किया जा सकता है। यदि शासक इन नियमों की क्रियान्विति में लापरवाही दिखाते हैं तो उन्हें दी जाने वाली तोपों की सलामी संख्या घटाई जा सकती है। इस प्रकार ब्रिटिश सरकार की दबाव, नीति और स्थानीय अधिकारियो के सहयोग से 19′ वीं सदी के अन्त तक यह कुरीति नियंत्रित हो गई कुछ छुट–पुट घटनाये अवश्य हुई। सरकार के अतिरिक्त सामाजिक जागृति के भी प्रयास हुये। स्वामी दयानन्द सरस्वती का राजस्थान आगमन इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रहा। उन्होने सती प्रथा को अनुचित एवं अमानवीय मानते हुए निन्दनीय कृत्य बताया। उन्होंने शास्त्रों के आधार पर इसका विरोध किया और समाज को एक नई दिशा प्रदान की। आजादी के बाद भी सितम्बर 1987 में राजस्थान उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में सती प्रथा को विधि सम्मत नहीं माना। न्यायालय ने अपने मत के समर्थन में पर्याप्त प्रसंगों को उद्धृत किया।

कन्या वध :–

19वीं सदी का राजपूताना यदा–कदा कन्या वध की कुप्रथा से अभिशप्त था। कर्नल जेम्स टोड़ ने दहेज प्रथा को इसका एक प्रमुख कारण माना। दहेज और कन्या वध दोनों समाज के नासूर थे और एक दूसरे से जुड़े हुए थे।

कन्या वध उन्मुलन के प्रयास :–

कन्या वध को रोकने के लिये अनेक कदम उठाये गये सर्वप्रथम मेवाड़ क्षेत्र में कन्या वध को रोकने के लिये महाराणा ने ब्रिटिश एजेन्ट पर दबाब डालकर कानून बनवाया। मेवाड़ के क्रम मे ही कोटा ने भी कन्या हत्या निषेध बनाया। 1839 मे जोधपुर महाराजा ने कोड ऑफ रूल्स बनाये। 1844 मे जयपुर महाराजा ने कन्या वध अनुचित घोषित किया। यद्यपि बीकानेर में कानून तो नहीं बनाया लेकिन 1839 में गया यात्रा के समय महाराजा ने सामन्तो को शपथ दिलाई कि वे अपने यहां कन्या वध नहीं होने देंगे। 1888 के बाद कन्या वध की घटनाये लगभग समाप्त सी मानी जाती है।

अनमेल व बाल विवाह :–

छोटी उम्र की कन्याओं का उनसे कई अधिक बड़ी उम्र के व्यक्ति से विवाह कर दिया जाता था। इस प्रकार के विवाह के पीछे मुख्य कारण आर्थिक परेशानियाँ थी। दासी प्रथा भी एक कारण था। इसके अनेक दुष्परिणाम थे। अनमेल विवाह के बाद लड़की अक्सर विधवा हो जाती थी और उसे पूरा जीवन कठिनाइयों में गुजारना पड़ता था।

अवयस्क अवस्था के लड़की–लड़कों का विवाह की कुप्रथा भी सामान्य थी जिससे समाज के स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ा।

अनमेल व बाल विवाह उन्मूलन के प्रयास :–

अतः अनमेल एवं बाल–विवाह जैसी कुप्रथाओं को प्रतिबन्धित करने के लिये समाज सुधारक दयानन्द सरस्वती ने आवाज उठाई। 10 दिसम्बर 1903 में अलवर रियासत ने बाल विवाह और अनमेल विवाह निषेध कानून बनाया, राजपरिवारों से भी इसका कड़ाई से पालन करवाया गया।

दास–प्रथा :–

भारत में दास प्रथा प्राचीन काल से अस्तित्व में थी, राजपूताना भी इससे अछूता नहीं रहा। कालान्तर में यह व्यवस्था अधिक विकसित हुई, यहाँ दासों की संख्या के साथ कुल एवं परिवार की प्रतिष्ठा का आकलन होने लगा था। दास मुख्यतः चार प्रकार के होते थे– बन्धक जो युद्ध के अवसर पर बंदी बनाये गये, स्त्री और पुरुष। दूसरे विवाह के अवसर पर दहेज दिये जाने वाले स्त्री पुरुष, तीसरे स्थानीय सेवक सेविकाये, चौथे – वंशानुगत सेवक और सेविकाये थे जो कि स्वामी की अवैध संतान होते थे उनसे उत्पन्न पुत्र–पुत्री वंशानुगत रूप से सेवा करते रहते थे। इनकी सामाजिक स्थिति अच्छी नहीं थी बिना शासक की अनुमति के ये विवाह नहीं कर सकते थे।

डाकन–प्रथा :–

डाकन प्रथा को ब्रिटिश अधिकारियों ने एक गंभीर कुप्रथा माना। यह लोगों का अन्धविश्वास था। 1853 में डाकन प्रथा की जानकारी मिलने पर ए.जी.जी. राजपूताना ने अमानवीय प्रथा को प्रतिबन्धित करने हेतु कानून बनाने के लिये शासको पर दबाव बनाया ।

1853 में मेवाड़ रेजीडेन्ट कर्नल ईड़न के परामर्श पर मेवाड़ महाराणा जवान सिंह ने डाकन प्रथा को गैर कानूनी घोषित किया।

सामाजिक सुधार के प्रयत्न :–

कुप्रभावों के रोकथाम हेतु प्रयास :

प्रचलित कुप्रथाओं को रोकने के लिये दो तरफा प्रयास हुये एक सरकारी प्रयास और दूसरे सामाजिक प्रयास। सरकारी प्रयासों मे समय समय पर रियासतों में कानून बनाने के अतिरिक्त मेवाड़ में देश हितेषिणी सभा और सम्पूर्ण राजपूताना में ए.जी.जी. वाल्टर के नेतृत्व में वाल्टर हितकारणी सभा के माध्यम से कानून बनाये गये।

देश हितेषिनी सभा :–

कवि श्यामलदास ने वीर विनोद में 2 जुलाई 1877 में उदयपुर में स्थापित देश हितेषिणी सभा का उल्लेख किया है।, वह स्वंय इस संस्था के सदस्य थे। यह मेवाड़ रियासत तक ही सीमित थी, इस सभा का उद्देश्य विवाह सम्बन्धित कठिनाइयों का समाधान करना था, इसमें राजपूतानों के वैवाहिक कार्यो पर दो प्रकार से प्रतिबन्ध लगाये–

प्रथम विवाह खर्च सीमित करना।

दूसरा बहुविवाह निषेध के नियम बनाये।

मेवाड़ की देश हितेषिणी सभा का उपरोक्त प्रयत्न पूर्ण सफल नहीं हो पाया क्योंकि इसमें ब्रिटिश सरकार का पूर्ण सहयोग नहीं मिला था। कमिश्नर रिपोर्ट से पता चलता है कि 1886 में मेवाड़ रेजीडेन्ट द्वारा ए.जी.जी. को भेजी गई रिपोर्ट मे मेवाड़ के देश हितेषिणी सभा के नियमों में कुछ परिवर्तन करके अन्य रियासतो ने विवाह प्रथा में सुधार सम्बन्धित कदम उठाये है। इस प्रकार सामाजिक सुधार सम्बन्धित रियासत का पहला आंशिक सफल कदम था, बाद में मेवाड़ की तर्ज पर अन्य रियासतो में भी हितेषिणी सभा बनाई गई।

2. वाल्टर कृत हितकारिणी सभाः–

1887 ई में वाल्टर राजपूताना का ए.जी.जी. नियुक्त हुआ। उसने अक्टूबर 1887 में रियासतों मे नियुक्त पोलिटिकल एजेन्ट को राजपूतों के विवाह खर्च पर नियम बनाने के लिए परिपत्र लिखा। 10 मार्च 1888 को अजमेर में भरतपुर, धौलपुर और बांसवाड़ा को छोड़कर कुल 41 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन में लड़के और लड़कियों की विवाह आयु निश्चित करने और मृत्यु भोज पर खर्च नियंत्रित करने के प्रस्ताव रखे गये। जनवरी 1889 में वाल्टर ने दूसरा सम्मेलन आयोजित किया जिसमे पुराने सदस्यों में से केवल 20 सदस्य आये । इस सम्मेलन में इस कमेटी का नाम ''वाल्टरकृत राजपूत हितकारिणी सभा'' रखा गया। एक सप्ताह के सम्मेलन में आंकड़ो सहित सुधारो की प्रगति सम्बन्धी रिपोर्ट तैयार की गई और प्रति वर्ष सम्मेलन के आयोजन की व्यवस्था की, जिसमें सुधार कार्यो का आकलन करके प्रशासनिक रिपोर्ट के लिये भेजा जाये। 1936 के वाल्टर सभा भंग करदी गई।

1889 से 1938 के मध्य वाल्टर सभा के मुख्य कार्य निम्न थेः–

1. बहुविवाह प्रथा पूर्णतः समाप्त कर दी जाये।
2. विवाह आयु निश्चित करदी गई, लड़की कम से कम 14 वर्ष और लड़का कम से कम 18 वर्ष का होना चाहिये।

3. टीके का आशय लड़की के पिता पक्ष की ओर ने भेजे गये उपहार से था। रीत का तात्पर्य लड़के के पिता पक्ष की ओर से भेजे गये उपहार से था। विवाह के समय प्रचलित उक्त टीका और रीत प्रथा पर पूर्णत प्रतिबन्ध लगा दिये गये।

इसके अतिरिक्त भी अनेक ऐसे सामाजिक नियमों का गठन किया गया जिनसे कुप्रथाओं का यदि अन्त न होता हो तो उनमें कमी अवश्य आये। वाल्टर कृत हितकारणी सभा ने अपने कार्यकाल में सुधार सम्बन्धित अनेक कदम उठाये, लेकिन यह नौकरशाही व्यवस्था मात्र बन कर रह गई। सामाजिक सुधार हेतु कोई सक्रिय प्रभावशाली भूमिका नही निभा पाई लेकिन शासक वर्ग को सुधार हेतु मानसिक रूप से प्रभावित कारने में सक्षम थी।

सामाजिक कुप्रथाओं को रोकने के लिये सामाजिक प्रयत्न भी महत्त्वपूर्ण रहे, स्वामी विवेकानन्द की 1891 में यात्रा से नई जागृति आई जिसके परिणामस्वरूप धर्म से जुड़कर जो कुप्रथाये प्रचलित हो गई थी उन्हें तर्क के आधार पर समझकर लोगों ने मानने से इन्कार किया। राजपूताना मे सर्वाधिक प्रभाव स्वामी दयानन्द और उनके आर्यसमाज संगठन का पड़ा। दयानन्द स्वामी एक सन्त थे जो ईश्वर और आध्यात्मिकता के साथ साथ सामाजिक जीवन में व्यक्ति के अस्तित्व और उसके उत्तरदायित्व को समझाने का विवेक लोगों में विकसित कर पाये। उन्होंने सामाजिक अन्याय से संघर्ष का साहस और उत्साह पैदा किया। उन्होंने वाद–विवाद और गोष्ठियों को प्रोत्साहित किया जिससे समाज में तार्किक शक्ति विकसित हो। उन्होंने महिलाओं की शिक्षा पर बल दिया जिससे वे अपने साथ होने वाले अन्याय से लड़ सकती है। उन्होंने जाति–प्रथा, छूआ छूत, बाल विवाह, अनमेल विवाह का विरोध किया तथा विधवा विवाह का समर्थन किया एवं राष्ट्रीय भावना को भी प्रोत्साहित किया। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने सामाजिक चेतना अभियान में शासक और कुलीन वर्ग की भूमिका पर विशेष बल दिया। आम जन को समाज सुधार के लिये संगठित रूप से कार्य करने हेतु आर्य समाज और परोपकारिणी सभा के सदस्य सक्रिय हुए।

समाज सुधारकों द्वारा किये कार्यो का प्रभाव काल 1840–1919 माना जाता है 1919 – 1947 तक समाज सुधार कार्य राजनीतिक आन्दोलन के मार्गदर्शन में चला गया। राजस्थान आन्दोलन के सेवा संघ, कांग्रेस के नेतृत्व में ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रो तक में सामाजिक सुधार हेतु समर्पित हो गये। उन्होने जगह जगह शिक्षक संस्थायें खोली, गांधी जी ने स्वदेशी आन्दोलन चलाते हुए व्यावसायिक शिक्षा को भी स्वावलम्बन का माध्यम बनाया हरिजनों को शिक्षित करने के अतिरिक्त उन्हें मन्दिरों में प्रवेश हेतु भी आन्दोलन किये तथा कार्य कर्ताओं ने परवाने तक साफ किये, जिससे कार्य की महत्ता सिद्ध हो जातिगत आधार पर कोई कमजोर या हीन नहीं माना जाये विधवाओं का और वेश्याओं का विवाह आदि कार्यक्रमों को केवल जागृति कार्यक्रम के रूप में नही चलाये, वरन् अनेक कार्यकर्ताओं ने इनसे विवाह करके समाज के समक्ष उदाहरण भी रखे। 1919–1947 के मध्य जो राजनीतिक आन्दोलन के साथ सामाजिक सुधार हुये थे वे इस दृष्टि से महत्वूर्ण थे कि यह उपदेशात्मक नहीं थे, वरन् प्रयोगात्मक थे। स्वंय कार्यकर्ता कुरीतियों को समाप्त करके एक अंहिसात्मक समाज स्थापित करने के लिये गाँधी के रचनात्मक आन्दोलन के इस सिद्धान्त से प्रेरित थे कि ''अंहिसात्मक राष्ट्र भक्ति और समूह जीवन की एक आवश्यक शर्त है।''

अभ्यासार्थ–प्रश्न

1. वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. ब्रिटिश सरंक्षक समिति ने सती उन्मूलन हेतु विधेयक किस वर्ष पारित किया?
   (क) 1843 (ख) 1844
   (ग) 1845 (घ) 1846 ( )
2. अनमेल विवाह के लिये कौन सा कारण उत्तरदायी माना जाता है।
   (क) आर्थिक (ख) सामाजिक
   (ग) राजनीतिक (घ) उपरोक्त में से कोई नहीं ( )
3. अनमेल विवाह और बालविवाह निषेध अधिनियम सबसे पहले अलवर रियासत ने किस वर्ष बनाया ?
   (क) 5 दिसम्बर 1902 (ख) 5 नवम्बर 1903
   (ग) 10 अक्टूबर 1904 (घ) 10 दिसम्बर 1903 ( )
4. देश हितेषिणी सभा की स्थापना किस रियासत में हुई
   (क) जयपुर (ख) कोटा
   (ग) अलवर (घ) उदयपुर ( )

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न :

1. किस ब्रिटिश अधिकारी ने कोटा, बूंदी, झालावाड़ के शासकों को आदेश भेजकर सती प्रथा को गैर कानूनी घोषित करने को कहा।
2. 1844 ई. में किस रियासत में संरक्षक समिति ने प्रथम सती उन्मूलन हेतु विधेयक पारित किया।
3. पहली जनगणना कब हुई।
4. मेवाड़ महाराणा ने ब्रिटिश सरकार पर दबाव डालकर किस समाज में कन्या वध निषेध कानून बनवाया।

लघूत्तरात्मक प्रश्न :

2. सती प्रथा पर स्वामी दयानन्द के विचारों का क्या प्रभाव पड़ा।
6. बाल–विवाह रोकथाम हेतु आपकी भूमिका लिखें।
7. वाल्टरकृत हित कारणी सभा की स्थापना किस उद्देश्य से की गई।

निबन्धात्मक प्रश्न :

1. सती प्रथा के निवारण हेतु किये गये प्रयत्नों पर प्रकाश डालिये।
2. देशहितेषी सभा और वाल्टर कृत हितकारणी सभा क्यो स्थापित की गई वह अपने उद्देश्य में कहां तक सफल रही।

प्रोजेक्ट –

1. आदिवासी क्षेत्र में प्रचलित कुप्रथाएँ क्या हैं, उनके निवारण हेतु आप क्या समाधान बता सकते है?
2. कन्या संरक्षण हेतु कोई पोस्टर अथवा स्लोगन का निर्माण करें।
3. वर्तमान की कुप्रथाओं पर चर्चा करें।

अध्याय – 2

स्वतन्त्रता पूर्व राजस्थान का शैक्षिक परिदृश्य

शिक्षा मानव विकास को धरातल प्रदान करता है इस दृष्टि से शिक्षा का इतिहास सभ्यता और संस्कृति को विभिन्न चरणों से अवगत कराता है। राजपूताना में भी शिक्षा विभिन्न काल क्रमों से गुजरी है। 1818 से पूर्व प्रचलित शिक्षा के ब्रिटिश दस्तावेजों में देशी शिक्षा (इंडिजिनियस एज्यूकेशन) सम्बोधित किया हैं और उसके बाद में विकसित होने वाली शिक्षा प्रणाली को अंग्रेजी, शिक्षा, पाश्चात्य शिक्षा या आधुनिक शिक्षा के नाम से सम्बोधित किया है लेकिन इसमें अंग्रेजी पाश्चात्य और भारतीय शिक्षा तत्त्वों के तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण के समावेश होने के कारण इसे आधुनिक शिक्षा कहना उपयुक्त होगा।

देशी शिक्षा

अर्थ एवं उद्देश्य :—

प्रचलित मान्यताओं और ब्रिटिश दस्तावेजों के अनुसार देशी शिक्षा से तात्पर्य धर्म से प्रभावित शिक्षा से लिया जाता है लेकिन यह उपयुक्त नहीं है क्योंकि प्राचीन काल से ही धर्म के साथ–साथ वैज्ञानिक दृष्टिकोण अर्थात तर्क पर आधारित शिक्षा का प्रचलन था, निसंदेह कालान्तर में वैज्ञानिक दृष्टिकोण सीमित हो गया। अब धर्म, ज्ञानार्जन, व्यक्तिगत कल्याण, और जीवन निर्वाह के साधन उपलब्ध कराने से शिक्षा प्रेरित थी। राजपूताना में हिन्दू, जैन और मुस्लिम जनसंख्या की बहुलता थी, अतः शिक्षण व्यवस्था भी अपने व्यवसाय, धर्म और जाति से प्रभावित थी, परिवार ही शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था।

विभिन्न देशी शिक्षण संस्थायें :—

देशी शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति का साधन विभिन्न शिक्षा के केन्द्र थे। परिवार अनौपचारिक शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था। औपचारिक शिक्षा धार्मिक संस्कार–हिन्दुओं में उपनयन और मुसलमानों में बिस्मिल्लाह रस्म के बाद प्रारम्भ होती थी अभिलेखागार सामग्री और प्राच्य विद्यमान प्रतिष्ठानों की पाण्डुलिपियों के अध्ययन के आधार पर शिक्षा व्यवस्था को दो भागों में विभक्त करके अध्ययन किया जा सकता हैं पहला प्राथमिक और दूसरा उच्च शिक्षा। प्राथमिक शिक्षा के रूप में हिन्दुओं की पाठशाला, चटशाला, जैनियों के उपाषरा, वानिका और मुसलमानों के मकतब थे। इनके अतिरिक्त मंदिर, मस्जिद के आंगन, चौपाल, किसी विशिष्ट शिक्षक एवं व्यक्ति का घर, बरामदा कुछ स्थानों पर दूकाने आदि शिक्षण केन्द्र थी। उच्च शिक्षा के केन्द्र के रूप में हिन्दुओं के मठ, जैनियों के उपाषरा और मुसलमानों के मदरसे प्रमुख स्थल थे। पाठशाला और चटशाला आदि के शिक्षक को गुरु एवं जोशी जी, तथा मठ एवं अस्थल के आचार्या व महन्त, उपाषरा के भट्टारक एवं जाति तथा मकतब एवं मदरसे के शिक्षक मौलवी एवं उलेमा कहलाते थे। परिवार प्राथमिक और व्यावसायिक शिक्षा के प्रमुख केन्द्र होते थे, वंशानुगत आधार पर माता–पिता व परिवार के वरिष्ठ सदस्य बालक को शिक्षित करते थे।

पाठ्यक्रम

पाठ्यक्रम भी दो भागों में विभक्त था धार्मिक एवं गैर धार्मिक। प्राथमिक शिक्षा लिखना, पढ़ना और हिसाब (गणित) तक सीमित थी। पाठशाला में हिन्दी एवं संस्कृत, उपाषरा में हिन्दी एवं प्राकृत, और मकतब में फारसी एवं उर्दू पढ़ाई जाती थी, इसके अतिरिक्त राजस्थान महत्त्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग होने के कारण स्थानीय भाषा और फारसी प्रशासनिक भाषा होने के

कारण उर्दू को अध्ययन का प्रचलन भी शिक्षण संस्थाओं में था। गणित के अन्तर्गत 01 से 100 तक गिनती और 1/2 (आधा) से 11 तक के पहाड़े पढ़ाते तथा दूसरे सोपान में ढ़य्या (2=1/2) एवं सवाया 1=1/4 और दस के आगे के पहाड़े, माप–तोल, गुणा ब्याज, राशि, लब्धि वर्गीकरण के सूत्र तथा बही–खाता रखने की विधि सिखाई जाती थी। बही–खाता विधि को महाजनी लिपि या वाणियावाटी लिपि गणित भी कहा जाता था क्योंकि इसमें व्याकरण की कठिनाइयों से बचने के लिये संकेत भाषा का प्रयोग किया जाता था।, उदाहरणार्थ संवत् के लिये (√) निशान होता था। पाठ्यक्रम का दूसरा भाग धार्मिक शिक्षा से प्रेरित था, जिसमें देवी देवताओं की कथा, त्योहार, जीवनापयोगी वस्तुएँ, पूजा सामग्री विधि, खान–पान, शृंगार, वस्त्रों के फलों के नाम, नैतिक शिक्षा आदि मदरसों में कुरान, फातिहा (दफनाने के समय पढ़ा जाता है) हकीकत, करीमा, तारीखें आदि पाठ्यक्रम का भाग थे। उस समय पढ़ाने की विधि आज के समान चित्रात्मक नहीं थी वरन् लयात्मक पद्वति थी।

देशी–उच्च शिक्षा :

उच्च शिक्षा का पाठ्यक्रम भी धार्मिक और गैर धार्मिक में विभाजित था। धार्मिक शिक्षा उच्च आध्यात्मिक शिक्षा से सम्बद्ध थी मठ में कर्मकाण्ड, अस्थल में धर्म की किसी विशेष शाखा का अध्ययन, वेदों और ग्रंथों का मदरसों में इस्लामिक कानून, इलाही आदि का अध्ययन कराया जाता था। धर्म के अतिरिक्त उच्च शिक्षा केन्द्रों पर भूगोल, इतिहास, भाषा विज्ञान, अंक गणित, बीज गणित, रेखा गणित, खगोल विद्या, आयुर्वेद और यूनानी चिकित्सा का भी ज्ञान दिया जाता था। तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में जयपुर स्थित जन्तर मन्तर महत्वपूर्ण उपलब्धि थी, कृषि केन्द्र क्षेत्र में हराईयां जुताई के चिन्ह्, अभियांत्रिक क्षेत्र में विशाल महल, किले, जलमहल, नहरों, पुल, कुओं, बावड़ियों का निर्माण तकनीकी शिक्षा का परिणाम था। धातु पिघलाने की तकनीकी भी महत्त्वपूर्ण ज्ञानार्जन था।कर्नल टोड को दक्षिणी राजस्थान जावर क्षेत्र में जस्ता, धातु, ताम्बे, टिन और लोहा पिघलवाने वाले बकयंत्र या भमके मिट्‌टी के बने नदी के किनारे मिले थे।

महिला शिक्षा

महिलाओं की शिक्षा औपचारिक और अनौपचारिक दोनों ही प्रकार की थी अधिकाशंतः राजपरिवार, कुलीन वर्ग, चारण महिलाओं, जैन साध्वियों उपाषरों में और राजपरिवार से सम्बद्ध दास दासियों में शिक्षा का प्रचलन था, राजकीय अभिलेखागार में जनानी ड्योढ़ी तहरीर नाम से पृथक् वर्ग का संग्रह है जिससे पता चलता है कि राजपरिवारों से सम्बन्ध महिलायें सांस्कृतिक मूल्यों और सैन्य शिक्षा लेती थी। अनेक विदुषी चारण महिलायें हुई है। महिला शिक्षा का सबसे मजबूत स्तम्भ उपाषरा में अध्ययनरत जैन महिलायें साध्वियां थी, वे भाषा, साहित्य एवं अनुवाद के कार्य में निपुण होती थी। व्यावसायिक परिवारों से सम्बद्ध महिलायें परिवार में ही रहते हुये अपने पारिवारिक व्यवसाय की शिक्षा ग्रहण करती थी।

प्रशासनिक व्यवस्था

व्यवस्था में एक निश्चित प्रशासनिक व्यवस्था का अभाव था। संस्था में प्रवेश, समय सारणी, परीक्षा, उत्तीर्ण प्रमाण पत्र शुल्क की आज के समान व्यवस्था नही थी। शुल्क के रूप में सीधा प्रथा अर्थात् शिक्षक के लिये अन्न व अन्य भोजन सामग्री लाते थे, शिक्षा पूर्ण होने पर गुरु दक्षिणा भेंट की जाती थी। शासक शिक्षा को प्रोत्साहन देने के लिये विधि द्वारा बाध्य नहीं था, वह अपनी स्व–प्रेरणा से शिक्षण कार्य करने वालों को भू–अनुदान करते थे, जिसे हिन्दुओं

की माफी जागीर और मुसलमानों की मदद ए माश जागीर कहलाती थीं, यह कर मुक्त जागीर होती थी।

आधुनिक शिक्षा से तात्पर्य :–

ब्रिटिश सर्वोच्चता काल 1818 – 15 अगस्त 1947 में संस्थाओं के पारस्परिक स्वरूप में परिवर्तन आया, इस क्रम में देशी शिक्षा भी आधुनिक शिक्षा का स्वरूप ग्रहण करने लगी। आधुनिक शिक्षा से तात्पर्य हम उस शिक्षा पद्धति से लेते हैं तो तर्क पर आधारित वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करें, जिसमें एक निश्चित कक्षाक्रम, परीक्षा प्रणाली, निश्चित पाठ्यक्रम, योग्यता के आधार पर नियुक्त शिक्षक आदि व एक निश्चित प्रशासनिक व्यवस्था लिये हो। सर्वोच्चता काल में विकसित व्यवस्था को केवल अंग्रेजी या केवल पाश्चात्य शिक्षा कहना उपयुक्त नहीं है, क्योंकि इसमें अंग्रेजी, पाश्चात्य और भारतीय तत्त्व मौजूद थे इसे आधुनिक शिक्षा कहना ही उपयुक्त होगा।

आधुनिक शिक्षा की आवश्यकता :

औपनिवेशिक साम्राज्य के लोगों को सभ्य बनाना इस्ट इण्डिया कम्पनी का एक लक्ष्य था। 1824 में कम्पनी ने कोलकाता में जनरल कमेटी ऑफ पब्लिक इंस्ट्रक्शन को राजपूताना में चार स्कूल खोलने के निर्देश दिये। राजपूताना को सभ्य बनाने की नीति के अन्तर्गत रियासतों के शासकों को पत्र लिखकर यह निर्देश दिये कि सामाजिक और आर्थिक सुधार केवल सरकारी तन्त्र से सम्भव नहीं है बल्कि शिक्षा द्वारा जन–चेतना के माध्यम से ही सम्भव है लेकिन विभिन्न अभिलेखों के अध्ययन से कम्पनी का अप्रत्यक्ष लक्ष्य भी उभरता है जिसके अनुसार एक तो उन्हें व्यावहारिक प्रशासनिक कठिनाइयाँ आ रही थीं उन्हें शासकों से पत्र व्यवहार, वार्तालाप, गुण मंत्रणा में कठिनाई आती थी दूसरा प्रशासनिक परिवर्तन के कारण कार्यालयों में ऐसे कर्मचारी चाहिये थे जो कि उनकी भाषा, रीति नीति को समझ कर क्रियान्वित करने में सहायक हो। तीसरा कारण यह भी था कि राजपूताना एक प्रमुख व्यापारिक केन्द्र था एवं सुरक्षा की दृष्टि से एक सम्पर्क भाषा की आवश्यकता थी। जिससे औपनिवेशिक हित पूरे हो सकें, चौथा मनोवैज्ञानिक कारण भी था जिसके अनुसार विजेता के सिद्धान्तों पर आधारित शिक्षा का प्रचलन, सांस्कृतिक सुगमता का सरल मार्ग होता है, पाँचवा कारण स्थानीय नागरिकों को नई व्यवस्था से उत्पन्न स्थितियों का लाभ उठाना था। अब नियुक्तियां वंशानुगत को स्थान पर योग्यता के आधार पर होने लगी। अतः आधुनिक शिक्षा के प्रति स्वाभाविक आकर्षण बढ़ने लगा।

आधुनिक शिक्षा

आधुनिक शिक्षा का विकास मूलतः तीन संस्थाओं के माध्यम से हुआ पहला ब्रिटिश सर्वोच्चता, मिशनरी, तीसरा निजी एवं सार्वजनिक संस्थाऐं थी, सर्वोच्च काल दो अवधियों में विभक्त रहा, पहला 1818–1857 तक ईस्ट इण्डिया कम्पनी का और 1858–15 अगस्त 1947 तक ब्रिटिश ताज का शासन काल रहा। प्रान्तों पर इनका सीधा प्रशासन था लेकिन देशी रियासतों में वे परामर्शदाता थे, वस्तुतः राजाओं की स्थिति अधीनस्थ सहयोग की थी अतः ब्रिटिश सरकार के नियमों की क्रियान्विति शासकों के माध्यम से होती थी। अभिलेखागार दस्तावेजों में राजस्थान की रियासतों के लिये राजपूताना और अजमेर मेरवाड़ा के लिये केन्द्र शासित क्षेत्र उल्लेखित किया गया है। 1932 से पूर्व तक कुछ रियासतें मध्य भारत रेजीडेन्ट के अधीन थी, 1932 में सभी रियासतें अजमेर मेरवाड़ा के अधीन कर दी गई, अब अजमेर में सुपरिंटेंडेन्ट के स्थान पर एजेन्ट टू द गर्वनर जनरल (ए.जी.जी.) नियुक्त किया गया और उसके अधीन सभी

रियासतों में रेजीडेन्ट की नियुक्ति हुई जो कि शासकों को परामर्श देते थे, सर्वोच्चता काल में विकसित शिक्षा प्रणाली उपरोक्त प्रशासनिक तन्त्र से प्रभावित हुई। नई शिक्षा में जो कक्षाक्रम व्यवस्था बनी वह थी स्कूल शिक्षा और दूसरा कॉलेज शिक्षा। प्रथम स्कूल शिक्षा तीन सोपानों में विभक्त थी। प्राथमिक मिडिल और हाई स्कूल प्राथमिक स्कूल वह वर्नाकुलर स्कूल थे, ग्रामीण और तहसील स्तर पर वर्नाकुलर मिडिल स्कूलों का उल्लेख किया गया है, दूसरे स्तर पर एंगलों वर्नाकुलर थे, यह भी दो भागों में विभक्त थे एक मिडिल स्कूल एवं दूसरा हाईस्कूल था, प्राइमरी में 1 से 5 तक मिडिल में 6 से 8 वीं तक और हाई स्कूल में 9 वीं और 10 वीं कक्षा तक पढ़ाया जाता था। दूसरा भाग कॉलेज शिक्षा का था जिसमें 11 वीं एवं 12 वीं इंटरमीडिएट और तेरहवी एवं स्नातक (बी.ए) और 15 वीं एवं 16 वीं स्नातकोत्तर (एम.ए.) कक्षाओं का पाठ्यक्रम एवं परीक्षा व्यवस्था थी। इस प्रकार कक्षा क्रम व्यवस्था 10+2+2+2 की थी। इसके अतिरिक्त व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा भी एक व्यवस्थित स्वरूप में विकसित होने लगी।

राजपूताना में आधुनिक शिक्षा का प्रारम्भ :

आधुनिक शिक्षा की ओर प्रारम्भिक कार्य केन्द्र शासित अजमेर मेरवाड़ा क्षेत्र से प्रारम्भ हुआ। 1819 में रेजीडेन्ट आक्टरलोनी के निर्देश पर जेवन कैरी ने पहले अजमेर में और बाद में पुष्कर भीनाय, और केकड़ी में अंग्रेजी भाषा के स्कूल खोले, लेकिन 1931 में जनता के विरोध के कारण ये स्कूल बन्द करने पड़े। 1835 ई. में कम्पनी ने अंग्रेजी को राजकीय भाषा के रूप में मान्यता दी, परिणामस्वरूप अंग्रेजी ज्ञान की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुये 1836 में अजमेर में पहला सरकारी स्कूल खोला गया। यह 1868 में इन्टरमीडिएट और 1869 में स्नातक कॉलेज बना। रियासतों की दृष्टि से सर्वप्रथम अलवर महाराज बन्ने सिंह की प्रेरणा से प. रूपनारायण ने 1842 ई. में और कुछ समय बाद भरतपुर के महाराज बलवन्त सिंह ने स्कूल खोले। 1844 में सर्वप्रथम इसी स्कूल ने आधुनिक परीक्षा प्रणाली को अपनाया। 1847 में यह इंटरमीडिएट, 1888 में स्नातक और 1900 में स्नातकोत्तर कॉलेज के रूप में क्रमोन्नत हुआ। 1844 में जयपुर 1867 में जोधपुर में दरबार स्कूल और 1883 में टोंक नवाब ने सरकारी स्कूल प्रारम्भ किये। 19वीं सदी के अन्त तक जैसलमेर को छोड़कर राजपूताना की सभी रियासतों में राजकीय शिक्षण संस्थायें प्रारम्भ हो चुकी थी।

प्राथमिक और मिडिल स्कूल क्रमोन्नत होते हुये हाई स्कूल बने इनमें सबसे पहले 1836 में अजमेर का सरकारी स्कूल 1851 मे हाई स्कूल बना, रियासतों में जयुपर 1844 में हाई स्कूल की पढ़ाई प्रारम्भ हुई, यह हवामहल के सामने मदन मोहन मंदिर में संचालित होता था, इसमें हिन्दू मुस्लिम सभी विद्यार्थी अध्ययन करते थे 1870 मे अलवर, भरतपुर 1876 में सर प्रताप हाई स्कूल जोधपुर और 1882 मे उदयपुर में हाई स्कूल कक्षाओं की पढ़ाई प्रारम्भ हो गई थी। यह क्रम राजपूताना की रियासतों में वहां की जागीरों और ग्रामीण क्षेत्र तक 1947 तक निरन्तर बढ़ता रहा स्कूल शिक्षा क्रमोन्नत होते हुये महाविद्यालय स्तर पर पहुंची। महाविद्यालय शिक्षा का प्रथम सोपान इंटरमीडिएट, कक्षाएं, ग्यारहवी एवं बारहवीं सबसे पहले केन्द्र शासित अजमेर में 1868 और इसी वर्ष रियासतों में जयपुर के महाराजा कॉलेज (स्कूल) इंटरमीडिएट कॉलेज बना, 1853 में जोधपुर इंटरमीडिएट कॉलेज 1922 में उदयपुर और 1928 में बीकानेर का डूंगर कॉलेज इंटरमीडिएट कॉलेज और भरतपुर में 1941 में महारानी जया कॉलेज क्रमोन्नत हुये। कॉलेज शिक्षा के दूसरे सोपान, स्नातक शिक्षा में भी अजमेर गवर्मेन्ट इंटरमीडिएट कॉलेज स्नातक कॉलेज में क्रमोन्नत हुआ। रियासतों में जयपुर का महाराजा कॉलेज 1888 में जोधपुर में

1893 में जसवन्त कॉलेज, बीकानेर में 1928 में और उदयपुर में 1935 में स्नातक कॉलेज के रूप में क्रमोन्नत हुए। कॉलेज शिक्षा का तीसरा सोपान स्नातकोत्तर (पी.जी) की पढ़ाई सर्वप्रथम 1900 ई. में जयपुर रियासत में प्रारम्भ हुई। तत्पश्चात् 1942 व बीकानेर में उदयपुर में स्नातकोत्तर कक्षाएँ प्रारम्भ हुई। प्राथमिक से उच्च शिक्षा तक की प्रारम्भिक स्वरूप कालान्तर में विशाल स्वरूप ग्रहण करता गया, शिक्षा का विकास का क्रम विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से हुआ। विभिन्न क्षेत्रों में अर्थात् महिला, शिक्षा, कमजोर वर्ग की शिक्षा, शासक वर्ग की शिक्षा, शासक एवं सामन्तों (नोवल्स) की शिक्षा में हुआ।

महिला शिक्षा

1861 में मिशनरी संस्था कन्या वर्नाकुलर स्कूल प्रारम्भ किया। सरकार द्वारा 1866 ई. में पुष्कर अजमेर मेरवाड़ा केन्द्र शासित क्षेत्र में प्रथम सरकारी कन्या स्कूल खुला। सरकारी प्रयत्न उत्तर–पश्चिम प्रान्त के डायरेक्टर (पब्लिक इंस्ट्रक्शन) के उस पत्र से प्रेरित थे जिसमें उन्होंने पीसागन स्कूलों का निरीक्षण करते समय वहां दो ओसवाल छात्राओं को लगन पूर्वक पढ़ते हुये देखने का उल्लेख किया और उसी से प्रेरित होकर राजपूताना में पृथक् महिला शिक्षण संस्थाएं खोलने को प्रोत्साहित किया। देशी रियासतों में महिला शिक्षा को प्रोत्साहित करने का प्रथम कदम जयपुर महाराजा रामसिंह ने 7 मई 1866 को कान्तिचन्द्र मुखर्जी के परामर्श पर कन्या विद्यालय स्थापित करके किया। यहां छात्राओं को सिलाई सिखाई जाती थी। 7 सितम्बर 1866 को भरतपुर में, इसी वर्ष उदयपुर में, 1872 में अलवर व कोटा में, 1883 में झालावाड़ में कन्या स्कूल खोले गये, 1886 ई. में जोधपुर में महाराजा के लोकप्रिय संरक्षक हेवसन की अचानक मृत्यु हो जाने पर उनकी स्मृति में हेवसन कन्या विद्यालय स्थापित किया गया। टोंक रियासत में 1885 में मुस्लिम कन्याओं के लिये और 1888 में बीकानेर में लेडी एलिगन की यात्रा के समय स्कूल खोले गये।

मिशनरी प्रयत्न :

महिला शिक्षा को संस्थापित करने में मिशनरी संस्थाओं का भी योगदान रहा है। 1861 में नसीराबाद मे स्थापित प्रथम गर्ल्स वर्नाकुलर स्कूल अन्य कई मायनों में प्रथम था यह राजपूताना का प्रथम स्कूल था जहां गर्ल्स स्काउट गाइड प्रारम्भ हुई, यहां से पहली बार 1894 में तीन छात्राओं को छात्रवृति देकर आगरा मेडिकल कॉलेज में पढ़ने हेतु भेजा गया, 1910 में गर्ल्स नार्मल कक्षायें शिक्षक प्रशिक्षण कक्षाएं प्रारम्भ की। पुष्कर में भी 1866 में मिशनरी विलेज स्कूल प्रारम्भ की। अजमेर में भी एक केन्द्रीय स्कूल और उसकी 7 ब्रांच विभिन्न मोहल्लों में खोली गई। महिला शिक्षा को प्रोत्साहित करने में मिशनरी संस्थाओं ने अग्रणी भूमिका निभाई।

दयानन्द सरस्वती ने महिला शिक्षा के महत्त्व को स्वीकारते हुये सत्यार्थ प्रकाश के तीसरे अध्याय में विस्तार से लिखा है अजमेर में परोपकारिणी सभा की स्थापना की, जिसके माध्यम से शिक्षा प्रचार का कार्य किया गया। अजमेर, उदयपुर, भरतपुर और शेखावाटी में आर्य समाज ने शिक्षा के प्रसार हेतु बहुत कार्य किये। यह प्रचलित मान्यताएँ रही है। कि अजमेर में 1913 में स्थापित सावित्री कॉलेज और उदयपुर का महिला महाविद्यालय आर्य समाज से प्रेरित थे।

सार्वजनिक शिक्षण संस्थायें :

स्वतत्रंता आंदोलन के दौरान सार्वजनिक स्वयं सेवी शिक्षण संस्थायें स्थापित की गई, इसका प्रारम्भ बिजोलिया किसान आन्दोलन के समय से ही हो गया था, लेकिन गांधी के नेतृत्व में राष्ट्रीय आन्दोलन ने इसे रचनात्मक कार्यक्रम के अन्तर्गत एक व्यवस्थित स्वरूप प्रदान किया।

1921 में शेखावाटी में संगासी सम्मलेन में महिला शिक्षा को एक कार्यक्रम के रूप में अपनाया। 1927 में हटुण्डी अजमेर में गांधी आश्रम की स्थापना हुई, 1945 में यह महिला शिक्षा सदन बना। 1927–1945 तक यह राजपूताना के राष्ट्रवादियों और रचनात्मक कार्यकर्ताओं की कर्म भूमि रहा। नवम्बर 1938 में उदयपुर में महिला मण्डल की स्थापना हुई। आदिवासी क्षेत्र में कन्याओं को शिक्षित करने के लिये उदयपुर में आवासीय स्कूल भी चलाया। इन कारणों से आदिवासी अपने क्षेत्र से निकलकर बाहरी समाज की प्रगति से परिचित हो सका तथा उनका संर्वागीण विकास हो सका। महिला शिक्षा के क्षेत्र में अक्टूबर , 1935 में प्रारम्भ वनस्थली विद्यापीठ का नाम प्रतिष्ठित है। यह अपनी पंचमुखी शिक्षा 1. ड्रील, योग खेल–कूद आदि 2. व्यावहारिक शिक्षा, 3. सौंदर्य अभिव्यक्ति चित्रकला संगीत आदि 4. नैतिक शिक्षा–नित्य प्रार्थना, वार्ता, विचार, 5. बौद्धिक शिक्षा, आदि के लिये जाना जाता है। इसके अतिरिक्त यहां चरखा और खादी पर विशेष बल दिया गया है। भीलवाड़ा की महिला परिषद और शेखावाटी का जाट छात्रावास भी महिला शिक्षा के प्रमुख केन्द्र रहे है। गांधीवादी विचारधारा से प्रभावित शिक्षण संस्थाओं में बुनियादी शिक्षा को आधार बनाया गया जहां महिलाओ को चरखा निर्माण, चरखा चलाना, खादी का निर्माण व उपयोग कुटीर उद्योग, कुओं का निर्माण आदि कार्य सिखाये जाते थे, जिससे व्यक्ति स्वावलम्बी बन सकें।

महिला शिक्षा का पाठ्यक्रम :–

प्रारम्भ मे यह सिलाई, बुनाई बच्चेगान जैसे घरेलू कार्यो की शिक्षा तक सीमित था, इससे छात्राओं की संख्या घटने लगी। 1875 में थ्री आर अर्थात रीडिंग, राइटिंग, अर्थमेटिक को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया तथा भाषा भी पढ़ाई जाने लगी। 1937 में राष्ट्रीय महिला समिति के तीसरे अधिवेशन में एक प्रस्ताव पारित करके छात्र और छात्राओं के लिये समान पाठ्य क्रम लागू करने का प्रस्ताव भेजा, इसके आधार पर बोर्ड ने प्राथमिक शिक्षा से ही समान पाठ्यक्रम लागू कर दिया इससे पूर्व हाई स्कूल और कॉलेज स्तर का पाठ्यक्रम समान था।

महिला शिक्षा के विकास में बाधायें :–

अभिलेखागार में उपलब्ध दस्तावेजों के आधार पर महिला शिक्षा के विकास में अनेक बाधायें थी– जैसे पर्दा प्रथा, बाल विवाह, प्रारम्भ में योग्य शिक्षिकाओं का अभाव, प्राकृतिक आपदाये एवं भौगोलिक दूरियां आदि। इन बाधाओं के कारण अनेक बालिकाएं शिक्षा से वंचित रह जाती थी। उत्तरोतर ऐसा समाज विकसित होने लगा जिसमें महिलाएं शिक्षाविहीन हो गई।

उपरोक्त कठिनाईयों का समाधान कालान्तर में हुआ, विशेषकर प्रथम महायुद्ध के बाद विदेश से लौटकर आये सैनिकों का दृष्टिकोण व्यापक हो गया था, दूसरा राष्ट्रीय आन्दोलनकारियों और समाज सुधारकों ने महिला शिक्षा के महत्त्व को आमजन तक पहुंचाया एवं महिलाओं ने भी स्वालम्बन के महत्व को समझा।

कमजोर वर्ग के लिये शैक्षणिक कार्य :

राजपूताना का दक्षिणी क्षेत्र वर्तमान में उदयपुर, चित्तौड़, डूंगरपूर बांसवाड़ा और प्रतापगढ़, सिरोही मेरवाड़ा आदि क्षेत्र आदिवासी बहुल है। इन क्षेत्रों में ईसाइ मिशनरी, आर्य समाज और राष्ट्रीय आन्दोलन कर्ताओं ने अहम् भूमिका निभाई। मिशनरियों द्वारा शिक्षा कार्य –पहाड़ी लोगों को शिक्षित करने का पहला कदम ईसाई मिशनरी संस्था ने दिसम्बर 1863 में टौडगढ़ में रोवर्स स्कूल स्थापित करके उठाया। मेरवाड़ा क्षेत्र में 1882 तक राजकीय और गैर राजकीय शिक्षण संस्थाओं की संख्या 16 तक पहुंच गई थी। अजमेर मेरवाड़ा से सम्बद्ध मेवाड़

के आदिवासी भी नव शिक्षा से प्रभावित हो रहे थे। अतः मेवाड़ के महाराणा सज्जन सिंह ने 1875 में ऋषदेव और जावर में 1883 में पड़ना एवं बारापाल में स्कूलें प्रारम्भ की। इसी क्रम में बांसवाड़ा में 1901 तक और कुशलगढ़ में 10 स्कूले संचालित थी। यहां एक एंगलों वर्नाकुलर और तीन वर्नार्कुलर स्कूल चल रहे थे। डूंगरपुर में एक स्कूल था। 1940 तक खेरवाड़ा में एक स्कूल और सार्वजनिक पुस्तकालय स्थापित किये गये।

शासक एवं कुलीन वर्ग के लिये शिक्षा :

उद्देश्य :

ब्रिटिश सम्प्रभुताकाल में देशी रियासते दो प्रकार से शिक्षा से सम्बद्ध हुई, एक तो अपने राज्य में शिक्षण संस्थाये संचालित करना और दूसरा स्वयं को आधुनिक शिक्षा से शिक्षित करना। इस नीति के तहत उन्होनें शासकों के लिये पृथक् शिक्षण संस्थायें खोलकर शासकों को आमजन से अलग करने की नीति अपनाई। जिससे भविष्य में जनता और शासकों का संयुक्त संघटन ब्रिटिश राज के विरुद्ध खड़ा नहीं हो सके। सर वाल्टर ने विदेश सचिव को एक पत्र में परिवर्तित स्थिति में पृथक शिक्षण संस्थाओं के लाभ दर्शाते हुये लिखा था वह यह नहीं समझते कि इससे सीधा लाभ होगा, किन्तु जब हमारा अगला संघर्ष होगा, साम्राज्य खतर में पड़ जाएगा तब हम देशी राज्यों की और देखेगे। वाल्टर के इन विचारों का वायसराय मेयों ने समर्थन किया, इसी दृष्टि से शासकों के लिये खोले जाने वाली शिक्षण संस्थाओं के लिये ब्रिटिश पब्लिक स्कूल की रूपरेखा को स्वीकार किया गया। बाद में लार्ड कर्नल ने भी शासकों के लिये पृथक् एवं पब्लिक स्कूल व्यवस्था को एक सफल नीति के रूप में स्वीकार किया। उक्त ब्रिटिश नीति क्रियान्वित होने से यद्यपि कुछ शासकों ने अपने यहां राजपरिवार के सदस्यों की शिक्षा हेतु व्यवस्था की थी। 1861 में जयपुर महाराजा ने अपने यहां शासक एवं सामन्त परिवारों के लिये स्कूल खोला, 1936 के बाद यह कम उपस्थिति की समस्या से जुझता रहा और 1944 में इसे बन्द कर दिया गया। 1877 में उदयपुर महाराणा ने भी सरकारी स्कूल में ही कुलीन वर्ग के लिये पृथक् कक्षाएँ चलाई, 1871 में अलवर में ठाकुर स्कूल खोला, लेकिन उपरोक्त प्रयत्न किसी नीति पर आधारित पूर्ण पृथक् व्यवस्था नहीं थी। वरन् एक प्रयास मात्र रहा।

शिक्षण संस्थायें :–

1870 में जब लार्ड मेयो ने वायसराय का कार्यभार सम्भाला तब उन्होनें 1869 की वाल्टर की योजना को क्रियान्वित किया, सबसे पहले राजकोट में एक कॉलेज खोला, अण्डमान में लार्ड मेयों की हत्या के बाद अजमेर में उनके नाम पर मेयो कॉलेज खुला, बाद में इस क्रम में 1886 में एचीसन कॉलेज लाहौर और डेली कॉलेज इंदौर स्थापित किये गये, इस प्रकार पूरे भारत में 4 कॉलेज शासक परिवारों के लिये प्रारम्भ किये। इसी क्रम में रियासतों में नोबल स्कूल खोले गयें। 1872 में स्थापित मेयों कॉलेज स्कूल का प्रथम सत्र 1875–76 में हुआ, इस सत्र में 23 छात्र थे। इस प्रकार की शिक्षण संस्थाओं का पाठ्यक्रम अलग से तैयार किया जाने लगा, यहां अन्य विषयों के अतिरिक्त कृषि भू लगान, धार्मिक और घुड़सवारी आदि की भी शिक्षा दी जाती थी।

मिशनरी संस्थाये :

राजपूताना में आधुनिक शिक्षा के प्रसार में ईसाई मिशनरी संस्थाओं का विशेष योगदान रहा। राजपूताना में निम्न मिशनरी संस्थायें शिक्षा के क्षेत्र में सक्रिय थी प्रेसब्रिटेरियन, रोमनकैथोलिक द मेथोडिस्टस, द चर्च मिशनरी सोसाइटी, द एंगलिकन चर्च और सोसायटी फार

द प्रोपगेशन ऑफ द गोसपल मिशन आदि। इन संस्थाओं के माध्यम से अजमेर, ब्यावर, नसीराबाद, कोटा के निकट पिपलोदा, अलवर में राजगढ़ और बांदीकुई आदि अनेक स्थानों पर मिशनरी स्कूल खोले गये।

आर्य समाज :

ईसाई मिशनरियों के बाद आर्य समाज शिक्षा के क्षेत्र में सक्रिय रहा। उदयपुर में आर्य समाजियों की मांग पर सरकारी स्कूल में संस्कृत की कक्षाएं प्रारम्भ की। 1891 में पृथक संस्कृत स्कूल स्थापित किया। 1930 में यह संस्कृत कॉलेज बना। इसके अतिरिक्त अजमेर, चित्तौड़, मांडल आदि अनेक स्थानों पर बालकों तथा बालिकाओं के लिये स्कूल प्रारम्भ किये गये जिनमें से अनेक स्कूल कालान्तर में कॉलेज के रूप में क्रमोन्नत हुये। इन स्कूलों में गुरुकुल प्रणाली पर आधारित शिक्षा व्यवस्था प्रचलित थी।

अन्य निजी शिक्षण संस्थायें :

धनाढ़्य वर्ग और समाज सेवी वर्ग ने भी शिक्षा के विकास में योगदान दिया। शेखावाटी में बिड़ला एज्यूकेशन ट्रस्ट ने शिक्षण संस्थायें स्थापित की।

बगड़, फतेहपुर, रामगढ़, नवलगढ़, सीकर आदि में संस्थायें स्थापित हुई। जयपुर में खण्डेलवाल वैश्य अग्रवाल स्कूल, महेश्वरी स्कूल, जैन, पारीख स्कूल, कायस्थ स्कूल जातियों के आधार पर भी खोले गये। जोधपुर में लाछू मेमोरियल स्कूल, सोमानी स्कूल, गांधीवादी बुनियादी शिक्षा में विद्या भवन, राजस्थान विद्यापीठ, वनस्थली विद्यापीठ सावित्री कॉलेज अजमेर, महिला विद्यापीठ भीलवाड़ा हटुण्डी महिला विद्यालय प्रमुख है।

तकनीकी शिक्षा

20 वीं सदी के प्रारम्भ में भारत तकनीकी शिक्षा में पिछड़ा हुआ था। 1901 में लार्ड कर्जन ने शिमला में शिक्षा सम्मेलन में तकनीकी शिक्षा को शिक्षा का अभिन्न अंग बनाने पर बल दिया। लेकिन प्रथम महायुद्ध के बाद तकनीकी शिक्षा प्रारम्भ हुई और द्वितीय विश्वयुद्ध (1939–1945) के बाद विकसित हुई। इसका मुख्य कारणथा बिगड़ी आर्थिक स्थिति में भारत से कच्चा माल इंग्लैण्ड ले जाना कठिन था। अतः यहीं कल कारखाने स्थापित करना आवश्यक हो गया ब्रिटिश सरकार के सुझाव पर 3 फरवरी 1945 को राजपूताना और मध्य भारत की कुछ रियासतों के विद्वानों का एक सम्मेलन हुआ, जिसमें प्रत्येक रियासत में एक प्रस्तावित तकनीकी कॉलेज खोलने का प्रस्ताव रखा, लेकिन उक्त प्रस्ताव क्रियान्वित नहीं हो सका। राजपुताना में जिन क्षेत्रों में तकनीकी शिक्षा का विकास हुआ वह थी, शिक्षक–प्रशिक्षण कृषि, अभियांत्रिकी, चिकित्सा आयुर्वेद, आयुर्विज्ञान, पशु चिकित्सा, कानून, जंगलात व मच्छी पालन आदि।

शिक्षक–प्रशिक्षण :

शिक्षकों को प्रशिक्षित करने के लिये सबसे पहले नसीराबाद और ब्यावर में मिशनरियों द्वारा नार्मल कक्षाएं प्रारम्भ की। तत्पश्चात रियासतों में भी नार्मल कक्षाएं प्रारम्भ हुई। कॉलेज स्तर पर सर्वप्रथम विद्याभवन एज्यूकेशन सोसायटी ने टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज 1941 में प्रारम्भ हुआ। दूसरा टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज राजपूताना, मध्य भारत और ग्वालियर संयुक्त बोर्ड के अध्यक्ष डॉ. जे.सी. चटर्जी के प्रयत्नों से अजमेर में 1941 में खोला गया। तीसरा टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज 1946 में बीकानेर में खोला गया।

कृषि तकनीकी :

राजपूताना कृषि प्रधान क्षेत्र होने के कारण नई कृषि तकनीकी के अध्ययन को स्कूल शिक्षा में अपनाया गया। शिक्षा बोर्ड के गठन के बाद 1936 में माध्यमिक और उच्च माध्यमिक

स्कूलों के पाठ्यक्रम में इसे अनिवार्य विषय के रूप में सम्मिलित किया गयां 1938–39 में कृषि इंटरमीडिएट कॉलेजों में तकनीकी वैकल्पिक विषय के रूप में सम्मिलित किया गया। मेवाड़ में किसानों को कृषि की नई तकनीकी की जानकारी के उद्देश्य से गांवो में रात्रि कालीन कक्षाएं भी चलाई। 1944 में सचिव भारत सरकार ने सिलोन योजना लागू करने हेतु प्रारूप शासकों को भेजे, इसे अनेक रियासतों में लागू किया गया। सिलोन योजना के अनुसार किसी एक विद्यालय को बागवानी, सब्जी उगाने और अनाज व खेती सम्बन्धी आधुनिक तकनीकी नये नये औजार, नल कूप की व्यवस्था और प्रयोग सिखाया जाता था।

आयुर्वेदिक चिकित्सा कॉलेज :

1933 में उदयपुर में पहला तकनीकी कॉलेज आयुर्वेद चिकित्सा का प्रारम्भ किया गया। इसे आयुर्वेद–मण्डल कानपुर से सम्बन्ध किया गया। इसमें शल्य चिकित्सा का अध्यापन नहीं कराया जाता था केवल जांच एक दवाओं से सम्बन्धित अध्ययन कराया जाता था। जयपुर में भी एक आयुर्वेदिक चिकित्सालय खोला गया।

आयुर्विज्ञान चिकित्सा :

आयुर्विज्ञान चिकित्सा के क्षेत्र में सबसे पहले जयपुर के महाराजा रामसिंह ने डॉ. ब्रुर के सहयोग से 1947 में सवाई मानसिंह मेडिकल कॉलेज खोला। इससे पूर्व तक चिकित्सकीय पढ़ाई के लिये ब्रिटिश सर्वोच्चता द्वारा प्रत्येक रियासत से निर्धारित 4 विद्यार्थी कोटे के अनुसार भेजे जाते थे। 1894 में नसीराबाद से 4 छात्राओं को आगरा मेडिकल कॉलेज में भेजकर पहली बार महिला डॉक्टर की पढ़ाई के क्षेत्र में राजपूताना ने कदम रखा। नर्सिंग ट्रेनिंग के क्षेत्र में अजमेर मेडिकल होम स्कूल, और बीकानेर में स्कूल संचालित थे।

विधि शिक्षा :

1946 में भूपाल नोबल्स कॉलेज उदयपुर में एल.एल.बी. की कक्षाएं प्रारम्भ की गई। राजस्थान विश्वविद्यालय की स्थापना के बाद पृथक् विधि कॉलेज खोलने का प्रस्ताव लाया गया। इस आधार पर महाराजा कॉलेज में रात्रिकालीन विधि विद्यालय प्रारम्भ किया गया। महाराजा भूपाल कॉलेज के अतिरिक्त निम्न 4 कॉलेजों में विधि अध्ययन की व्यवस्था की गई लॉ कॉलेज जयपुर, जसवन्त कॉलेज जोधपुर राज ऋषि कॉलेज अलवर, डूंगर कॉलेज बीकानेर।

प्रशासन :

आधुनिक शिक्षा का प्रशासन क्रमिक रूप से निश्चित ढ़ांचागत स्वरूप की ओर बढ़ा। प्रारम्भ में आधुनिक ब्रिटिश कम्पनी और 1858 से ब्रिटिश ताज की नीति और व्यवस्था से प्रेरित और प्रभावित रही। 1871 में ब्रिटिश ताज द्वारा अजमेर मेरवाड़ा का प्रशासन उत्तर पश्चिम प्रान्त से स्थानान्तरित करके फोरेन पोलिटिकल विभाग के अधीन कर दिया, इसके साथ ही अजमेर में कमिश्नर व्यवस्था प्रारम्भ हो गई , शिक्षा विभाग भी कमिश्नर के अधीन आ गया। धीरे–धीरे रियासतों में भी सुपरिडेन्टेड एज्यूकेशन या डायरेक्टर एज्यूकेशन नियुक्त किये जाने लगें, जिन्हें सरिश्ते तालीम भी कहा जाता था। प्रारम्भ में इस पद पर किसी भी विभाग के अधिकारी को नियुक्त कर दिया जाता था। 1854 में पहली बार वुड डिस्पेच में देशी रियासतों में स्कूलें खोलने के परामर्श के आधार पर अजमेर मेरवाड़ा में कम्पनी के प्रतिनिधि शिक्षण कार्य हेतु सक्रिय हुये। वूड डिस्पेच के प्रस्ताव पर कलकत्ता विश्वविद्यालय 1854 में स्थापित हुआ। राजपूताना की शिक्षण संस्थायें उसी से सम्बन्ध थी। 23 सितम्बर 1887 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय की घोषणा

की गई। राजपूताना की शिक्षण संस्थायें कलकत्ता के स्थान पर अब इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सम्बन्ध होने लगी। वित्त व्यवस्था हेतु प्रथम प्रयास 1866 में भरतपुर में बन्दोबस्त (सेटलमेन्ट) व्यवस्था लागू करने के साथ प्रारम्भ हुआ। भू–लगान का एक निश्चित प्रतिशत शिक्षा के लिये रखा जाने लगा। यह व्यवस्था अन्य राज्यों में भी बन्दोबस्त व्यवस्था के साथ लागू की गई।

शिक्षा बोर्ड की स्थापना :

1921 में सेलेडर कमीशन की रिपोर्ट के आधार पर विद्यालय को 1929 में आवासीय शिक्षण संस्था कॉलेज शिक्षा के कार्य सम्पादन तक सीमित कर दी गई। परिणामस्वरुप राजपूताना की हाईस्कूल एवं इंटरपीजिए तक की शिक्षा यूनाइटेड प्रॉविन्सेज के अधीन कर दी गई। लेकिन यह इतने बड़े क्षेत्राधिकार में कार्य करने के लिये अपने को असमर्थ मानते हुये राजपूताना के लिये पृथक् बोर्ड का सुझाव दिया। फलस्वरूप जुलाई 1929 में बोर्ड ऑफ हाई स्कूल एण्ड इंटरमीडिएट एज्यूकेशन राजपूताना अजमेर मेरवाड़ा सेन्ट्रल इंडिया एण्ड ग्वालियर बोर्ड की स्थापना की गई, जिसका मुख्यालय अजमेर में रखा गया। बोर्ड के प्रथम अध्यक्ष जयपुर के विशिष्ट शिक्षा अधिकारी के.पी. किचलू को तीन वर्ष के लिये नियुक्त किया गया। बोर्ड का मुख्य उत्तरदायित्व पाठ्यक्रम निर्धारण एवं परीक्षाओं का आयोजन कराना था। 1930 में बोर्ड ने पहली बार परीक्षाओं का आयोजन कराया, जिसमें 70 हाईस्कूल व 12 इंटरमिडिएट कॉलेज के विद्यार्थी परीक्षार्थी थे। इस प्रकार बोर्ड की स्थापना के बाद रियासतों की स्कूल शिक्षा में एकरूपता प्रारम्भ होने लगी।

विश्वविद्यालय शिक्षा :

जनवरी 1947 में जयपुर में राजपूताना विश्वविद्यालय स्थापित किया गया, दिसम्बर 1946 में उदयपुर, जोधपुर, बीकानेर, अलवर और जयपुर ने मिलकर उक्त विश्वविद्यालय की स्थापना का निर्णय लिया। इस दृष्टि से भारत में यह एक ऐसा विश्वविद्यालय था जिसे रियासतों के सामूहिक सहयोग से स्थापित किया गया। राजपूताना का गौरव मानते हुये विश्वविद्यालय का एक मुख्य उद्देश्य कला संस्कृति के अध्ययन को विकसित करना था।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. देशी शिक्षा में जैनियों की शिक्षण स्थल को कहा जाता था।
   (क) मठ (ख) उपाषरा
   (ग) मकतब (घ) गुरुद्वारा ( )
2. राजपूताना में निजी सार्वजनिक इंजीनियरिंग तकनीकी शिक्षण संस्था किस ने खोली।
   (क) बिड़ला एज्यूकेशन ट्रस्ट (ख) राजस्थान विद्या पीठ
   (ग) विद्या भवन सोसायटी (घ) वनस्थली विद्यापीठ ( )
3. राजस्थान में पहला विधि कॉलेज खोला गया।
   (क) उदयपुर (ख) कोटा
   (ग) बीकानेर (घ) अलवर ( )

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न :

1. देशी शिक्षा के प्राथमिक शिक्षा केन्द्रों के नाम उल्लेख कीजिये।

2. आधुनिक शिक्षा से क्या तात्पर्य है?
3. मिशनरी द्वारा कहां–कहां शिक्षण संस्थाएं स्थापित की गई?

लघूत्तरात्मक प्रश्न :

1. देशी शिक्षा में गणित का पाठ्यक्रम क्या था।
2. देशी शिक्षा व्यवस्था में महिला शिक्षा की क्या स्थिति थी।
3. वनस्थली विद्यापीठ में अपनाई पंचमुखी शिक्षा क्या है?
4. 1929 में स्थापित शिक्षा बोर्ड का पूरा नाम क्या था।

निबन्धात्मक प्रश्न :

1. देशी शिक्षा का अर्थ बताते हुये, शिक्षा व्यवस्था का मूल्यांकन कीजिये।
2. महिला शिक्षा के विकास को दर्शाते हुय, उसके विकास में आने वाली बाधाओं पर प्रकाश डालिये।
3. कमजोर वर्ग की शिक्षा के लिये किये गये प्रयत्नों की विश्लेषण कीजिये।

प्रोजेक्ट –

1. शिक्षा महिला सशक्तिकरण का एक मुख्य उपकरण है, चर्चा करें।
2. आपके परिक्षेत्र में महिला निवासियों की शैक्षिक योग्यता का शिक्षक के निर्देशन में सर्वे करें।
3. महिला शिक्षा के लिये आपकी भूमिका क्या हो? लेख तैयार करें।

अध्याय – 3
परम्परागत जल प्रबन्धन

पृष्टभूमिः–

जल प्रबन्धन की परम्परा प्राचीन काल से हैं। हड़प्पा नगर में खुदाई के दौरान जल संचयन प्रबन्धन व्यवस्था होनें की जानकारी मिलती है। प्राचीन अभिलेखों में भी जल प्रबन्धन का पता चलता है। पूर्व मध्यकाल और मध्यकाल में भी जल सरंक्षण परम्परा विकसित थी। पौराणिक ग्रन्थों में तथा जैन बौद्ध साहित्य में नहरों, तालाबों, बाधों, कुओं और झीलों का विवरण मिलता है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में जल प्रबन्धन का उल्लेख मिलता है। चन्दगुप्त मौर्य के जूनागढ़ अभिलेख में सुदर्शन झील के निर्माण का विवरण प्राप्त है। भारत में जल संसाधन की उपलब्धता एवं प्राप्ति की दृष्टि से काफी विषमताएँ मिलती हैं, अतः जल संसाधन की उपलब्धता के अनुसार ही जल संसाधन की प्रणालियाँ विकसित होती हैं। जैसे हिमालय में नदी से जल संचयन की प्रणाली विकसित हुई, जबकि राजस्थान में केवल जल वर्षा से संचयन किया जाता है। अतः भारत में जल प्रबन्धन प्रणालियाँ वहाँ के भौगोलिक परिवेश के अनुरूप विकसित हुई।
राजस्थान में पानी के लगभग सभी स्रोतों की उत्पत्ति से सम्बन्धित लोक कथाएँ प्रचलित है। बाणगंगा की उत्पत्ति अर्जुन के तीर मारनें से जोड़ते हैं वही भीम द्वारा जमीन में पैर मारकर पानी का फव्वारा निकलाने की कथा कहते हैं। राजस्थान के लोगों ने पानी के कृत्रिम स्रोतों का निर्माण किया हें, ये ही पानी के पारम्परिक स्रोत हैं। नाडी, तालाब, जोहड़, बांध, सागर–सरोवर आदि। कुआँ और बावडी भी पानी का महत्वपूर्ण स्रोत है। कुएँ का मालिक एक अकेला या परिवार होता था, जबकि बावडी धार्मिक दृष्टिकोण से निर्मित करवाई जाती थी। वह सभी लोगों के लिए होती थी।

राजस्थान में जल सरंक्षण की परम्परागत प्रणालियाँ स्तरीय है। यहाँ जल संचय की परम्परा सामाजिक ढाँचे से जुड़ी हुई हैं। जल स्रोतों को पूजा जाता है। यहाँ के लोगों ने पानी के कृत्रिम स्रोतों का अविष्कार किया है जिसके आधार पर कठिन जीवन को भी सहज बना दिया है। राजस्थान के अनेक क्षेत्रों में जल महत्व की लोक कथाएँ प्रचलित हैं।पिछले कुछ समय से जल संरक्षण (प्रबन्धन) शब्द महत्वपूर्ण हो गया है। कई विकासात्मक योजनाएं तथा उद्योग जगत जल सरंक्षण अवधारणा से प्रभावित हुआ है। अतः तेजी से कम होता जल एवं जल सरंक्षण संसाधन को पुनर्जिवित किया जाए, इसकी आज महती आवश्यकता है। परम्परागत जल प्रबन्धन की प्रणालियों को विकसित किये जाने से ही इस समस्या का समाधान है। जल जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करता है। जल सरंक्षण ही विकास की प्रक्रिया से जुड़ा हुआ है। राजस्थान क्षेत्रफल की दृष्टि से देश का सबसे बड़ा राज्य हैं और जनसंख्या की अवधारणा से 8 वें नम्बर पर है। देश की 5.5 प्रतिशत जनसंख्या राजस्थान में निवास करती है, परन्तु देश में उपलब्ध जल का मात्र एक प्रतिशत जल ही राजस्थान में प्राप्त है। इसलिए परम्परागत जल स्रोतों को पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है।

राजस्थान में परम्परागत जल स्त्रोत–

तालाबः–

तालाब में वर्षा का पानी को एकत्रित किया जाता है। प्राचीन काल से तालाबों का अस्तित्व रहा है। तालाबों के समीप कुआँ भी होता था। इनकी देख–रेख की जिम्मेदारी समाज की होती थी।

धार्मिक तालाबों की सुरक्षा व सरंक्षण अच्छा हुआ है। अनेक तालाबों का शहरीकरण हो गया है। राज्य में स्थित तालाबों पर तत्काल ध्यान रखने की आवश्यकता हैं क्योंकि इनसे अनेक कुओं एवं बावडियों को पानी मिलता है।

मुख्य तालाबों की जिलेवार स्थिति –

(1.) सवाई माधोपुर : सुखसागर तालाब, कालासागर तालाब, जंगली तालाब।

(2.) पाली : हेमावास, दांतीवाड़ा, मुथाना तालाब।

(3.) भीलवाड़ा : सरेरी, खारी, मेजा तालाब।

(4.) उदयपुर : बागोलिया तालाब।

(5.) चित्तौड़गढ़ : पद्मीनी तालाब, वानकिया, मुरालिया, सेनापानी तालाब।

(6.) बूंदी : कीर्ति मोरी, बरडा, हिण्डोली तालाब।

(7.) भरतपुर : पार्वती, बारेठा तालाब।

(8.) जैसलमेर : गढ़सीसर तालाब।

(9.) डूंगरपुर : एडवर्ड सागर।

(10.) प्रतापगढ़ : रायपुर, गंधेर, खेरोट, घोटार्सी, ढ़लमु, अचलपुर, जाजली, अचलावदा, सांखथली, तथा तेजसागर तालाब।

झीलेः–

राजस्थान में परम्परागत जल सरंक्षण सर्वाधिक झीलों में होता है। यहाँ पर प्रसिद्ध झीले हैं। यहाँ के राजा, सेठों व बनजारों और जनता ने झीलों का निर्माण करवाया है। लालसागर झील, (1800 ई.) केलाना झील (1872 ई.) तखतसागर झील (1932 ई.), और उम्मेदसागर झील (1931 ई.) आकार की दृष्टि से विशाल है। इनमें 70 करोड़ घन फिट जल तक आ सकता है। पुष्कर झील का धार्मिक महत्व है। झीलों का सिचाईं के रूप में भी प्रयोग होता है और कहीं पेयजल के रूप में।

झीलों की जिलेवार स्थिति–

(1) अजमेर : आनासागर, फॉय सागर, पुष्कर झील!

(2) अलवर : जयसागर, मानसरोवर, विजय सागर।

(3) उदयपुर : फतहसागर, पिछोला, जयसंमद, उदयसागर, स्वरूप सागर।

(4) करौली : नाग तलाई, जुग्गर, ममचेड़ी, नीदर।

(5) कोटा : जवाहर सागर

(6) चित्तौड़गढ़ : राणा प्रताप सागर, भूपाल सागर झील।

(7) चुरू : ताल छापर झील,

(8) जयपुर : सांभर झील,छापरवाड़ा झील जमवारामगढ़

(9) जालौर : बांकली बांध, बीठल बांध

(10) जैसलमेर : गढ़सीसर ,उम्मेदसागर, प्रतापासागर

(11) जोधपुर : बालसंमद,उम्मेदसागर, प्रतापसागर

(12) झालावाड़ : मानसरोवर

(13) झुन्झुनू : अजीत सागर बांध।

(14) टोंक : बीसलपुर,टोरडी सागर

(15) डूंगरपुर : गैब सागर,सोमकमला

(16) दौसा : कालख सागर।
(17) धोलपुर : रामगसागर,तालाबशाही।
(18) नागौर : डीडवाना,भांकरी मोलास।
(19) पाली : सरदार संमद।
(20) बाड़मेर : पंचबद्रा
(21) बारां : उम्मेद सागर,अकलेरा सागर।
(22) बांसवाड़ा : माही, बजाज सागर बांध
(23) बीकानेर : लूणकरणसर, अनूप सागर, गजना झील।
(24) बूंदी : नवलख सागर, जेतसागर, सूरसागर।
(25) भरतपुर : मोती झील।
(26) भीलवाड़ा : मांडलताल, खारी बांध, जैतपुरा बांध।
(27) राजसमंद : राजसंमद झील।
(28) सवाईमाधोपुर : पाँचना बांध, मोरेल बांध।
(29) सिरोही : नक्की झील
(30) सीकर : रायपुर बाँध।
(31) श्रीगंगानगर : शिवपुरहैड झील।
(32) हनुमानगढ़ : तलवाड़ा झील।
(33) प्रतापगढ़ : ....

नाडी : —

यह एक प्रकार का पोखर होता है। इसमें वर्षा का जल एकत्रित होता है। यह विशेषकर जोधपुर की तरफ होती है। 1520 ई. में राव जोधाजी ने सर्वप्रथम एक नाड़ी का निर्माण करवाया था। पश्चिमी राजस्थान के प्रत्येक गांव में नाड़ी मिलती है। रेतीले मैदानी क्षेत्रों में ये नाडियाँ 3 से 12 मीटर तक गहरी होती है। इनमे जल निकासी की व्यवस्था भी होती है। यह पानी 10 महिने तक चलता है। एल्युवियल मृदा (मिट्टी) वाले क्षेत्रों की नाड़ी आकार में बड़ी होती है। इनमें पानी 12 महिने तक एकत्र रह सकता है। एक सर्वेक्षण के अनुसार नागौर, बाड़मेर व जैसलमेर में पानी की कुछ आवश्यकता का 38 प्रतिशत पानी नाड़ी द्वारा पूरा किया जाता है। नाड़ी वस्तुतः भूसतह पर बना एक गड्ा होता है जिसमें वर्षा जल आकर एकत्रित होता रहता है। समय समय पर इसकी खुदाई भी की जाती है, क्योंकि पानी के साथ गाद भी आ जाती है जिससे उसमें पानी की क्षमता कम हो जाती है। कई बार छोटी–छोटी नाड़ियों की क्षमता बढ़ाने के लिए दो तरफ से उनको पक्की कर दिया जाता है। नाड़ी बनाने वाले के नाम पर ही इनका नाम रख दिया जाता है। अधिकांश नाड़िया आधुनिक युग में अपना अस्तिव खोती जा रही है। इन्हें सुरक्षा की आवश्यकता है।

बावड़ी:—

राजस्थान में बावड़ी निर्माण की परम्परा भी प्राचीन है। प्राचीन काल, पूर्वमध्यकाल एवं मध्यकाल सभी में बावड़ियों के बनाये जाने की जानकारी मिलती है। कई बावडियाँ वास्तुशास्त्र से बनाई जान पड़ती है। अपराजितपृच्छा ग्रन्थ में बावडियों के चार प्रकार बताये गये है है। अधिकांश बावडियाँ मन्दिरों, किलो या मठों के नजदीक बनाई जाती थी। आभानेरी की चाँद बावड़ी हर्षद

माता के मन्दिर के साथ बनी हुई हैं। इस चाँद बावडी के दोनों ओर बरामदे एवं स्नानगृह है। बावडियां पीने के पानी, सिंचाई एवं स्नान के लिए महत्वपूर्ण जल स्त्रोत रही हैं। राजस्थान की बावडियाँ वर्षा जल संचय के काम आती है। कहीं कहीं इनमें आवासीय व्यवस्था भी रहती थी। मेघदूत में बावड़ी निर्माण का उल्लेख मिलता है। आज राजस्थान में बावड़ियों की दशा ठीक नहीं है। इनका जीर्णोद्धार किया जाना चाहिए।

टांका :—

टांका राजस्थान में रेतीले क्षेत्र में वर्षा जल को संग्रहित करने की महत्वपूर्ण परम्परागत प्रणाली है। इसे कुंड भी कहते हैं। यह विशेषतौर से पेयजल के लिए प्रयोग होता है। यह सूक्ष्म भूमिगत सरोवर होता है। जिसको ऊपर से ढक दिया जाता है इसका निर्माण मिट्टी से भी होता है और सिमेण्ट से भी होता है। यहाँ का भू–जल लवणीय होता हैं इसलिए वर्षा जल टांके में इकट्टा कर पीने के काम में लिया जाता है। वह पानी निर्मल होता है। यह तश्तरी प्रकार का निर्मित होता हैं। टांका किलों में, तलहटी में, घर की छत पर, आंगन में और खेत आदि में बनाया जाता है। इसका निर्माण सार्वजनिकरूपसे लोगों द्वारा, सरकार द्वारा तथा निजी निर्माण स्वंय व्यक्ति द्वारा करवाया जाता है। पंचायत की जमीन पर निर्मित टांका सार्वजनिक होता हैं। जिसका प्रयोग पूरा गांव करता है। कुछ टांके (कुंडी) गांव के अमीरों द्वारा धर्म के नाम पर परोपकार हेतु बनवा दिये जाते हैं। एक परिवार विशेष उसकी देख–रेख करता हैं।

कुंडी या टांके का निर्माण जमीन या चबूतरे के ढ़लान के हिसाब से बनाये जाते हैं जिस आंगन में वर्षा का जल संग्रहित किया जाता है, उसे, आगोर या पायतान कहते हैं। जिसका अर्थ होता बटोरना। पायतान को साफ रखा जाता है, क्योंकि उसी से बहकर पानी टांके में जाता है। टांके के मुहाने पर इंडु (सुराख) होता है जिसके ऊपर जाली लगी रहती है,ताकि कचरा नहीं जा सके। टांका चाहे छोटा हो या बड़ा उसको ढंककर रखते हैं। पायतान का तल पानी के साथ कटकर नहीं जाए इस हेतु उसको राख, बजरी व मोरम से लीप कर रखते हैं। टांका 40–30 फिट तक गहरा होता है। पानी निकालने के लिए सीढ़ियों का प्रयोग किया जाता है। ऊपर मीनारनुमा ढ़ेकली बनाई जाती है जिससे पानी खींचकर निंकाला जाता है। खेतों में थोडी़–थोडी़ दूरी पर टांकें या कुड़िया बनाई जाती हैं।

खडीन :—

खडीन का सर्वप्रथम प्रचलन 15वीं शताब्दी में जैसलमेर के पालीवाल ब्राह्मणों ने किया था। यह बहुउद्देशीय परम्परागत तकनीकी ज्ञान पर आधारित होती है। खडीन के निर्माण हेतु राज जमीन देता था जिसके बदले में उपज का 1/4 हिस्सादेना पड़ता था। जैसलमेर जिले में लगभग 500 छोटी बडी खडीनें विकसित हैं जिनसे 1300 हैक्टेयर जमीन सिंचित की जाती है। वर्तमान में ईराक के लोग भी इस प्रणाली को अपनाये हुए हैं। यह ढालवाली भूमि के नीचे निर्मित होता है। इसके दो तरफ मिट्टी की पाल होती है। तीसरी तरफ पत्थर की पक्की चादर बनाई जाती है। खडीन का क्षेत्र विस्तार 5 से 7 किलो मीटर तक होता है। पाल सामान्यतया 2 से 4 मीटर तक ऊंची होती है। पानी की मात्रा अधिक होने पर पानी अगले खडीन में प्रवेश कर जाता है। सूखने पर पिछली खडीन की भूमि में नमी के आधार पर फसलें उगाई जाती है। मरू क्षेत्र में इन्हीं परिस्थितियों में गेहूँ की फसल उगाई जाती है। खडीन तकनीकी द्वारा बंजर भूमि को भी कृषि योग्य बनाया जाता है।

जिस स्थान पर पानी एकत्रित होता है उसे खडीन तथा इसे रोकने वाले बांध को खडीन बांध कहते हैं। खडीन बांध इस प्रकार से बनाए जाते हैं ताकि पानी की अधिक आवन पर अतिरिक्त पानी ऊपर से निकल जाए। गहरी खडीनों में पानी को फाटक से आवश्यकतानुसार निकाल दिया जाता है।खडीनों में बहकर आने वाला जल अपने साथ उर्वरक मिट्टी बहाकर लाता है। जिससे उपज अच्छी होती हैं। खडीन पायतान क्षेत्र में पशु चरते है जिससे पशुओं द्वारा विसरित गोबर मृदा (भूमि) को उपजाऊ बनाता है। खडीनों के नीचे ढलान में कुआं भी बनाया जाता है जिसमें खडीन से रिस कर पानी आता रहता है, जो पीने के उपयोग में आता है। जल प्रबधन कार्यक्रम में परम्परागत निर्मित प्राचीन खडीनों का वैज्ञानिक रख–रखाव होना चाहिए तथा नई खडीनें पारम्परिक तकनीकी ज्ञान के सहारे निर्मित की जानी चाहिए। राजस्थान सरकार ने नई खडीने बनवाने की योजना बनाई हैं, वे निम्न गुणवत्ता की हैं जो तेज वर्षा को सह नहीं पाती एवं उनमें दरारे पड जाती है।

टोबा : –

टोबा एक महत्वपूर्ण पारम्परिक जल प्रबन्धन है, यह नाडी के समान आकृतिवाला होता है। यह नाडी से अधिक गहरा होता है। सघन संरचना वाली भूमि, जिसमें पानी का रिसाब कम होता है, टोबा निर्माण के लिए यह उपयुक्त स्थान माना जाता है। इसका ढलान नीचे की ओर होना चाहिए। टोबा के आस–पास नमी होने के कारण प्राकृतिक घास उग आती है जिसे जानवर चरते हैं। प्रत्येक गाँव में जनसंख्या के हिसाब से टोबा बनाये जाते हैं प्रत्येक जाति के लोग अपने अपने टोबा पर झोपड़ियां बना लेते हैं। टोबा में वर्ष भर पानी उपलब्ध रहता है। टोबा में पानी कभी–कभी कम हो जाता है, तो आपसी सहमति से जल का समुचित प्रयोग करते है। एक टोबा के जल का उपयोग सामान्यतः बीस परिवार तक कर सकते हैं। समय समय पर टोबा की खुदाई करके पायतान (आगोर) को बढाया जा सकता है। इसे गहरा किया जाता है, ताकि पानी का वाष्पीकरण कम हो।

झालरा :–

झालरा, अपने से ऊंचे तालाबों और झीलों के रिसाव से पानी प्राप्त करते हैं। इनका स्वयं का कोई आगोर (पायतान) नहीं होता है। झालराओं का पानी पीने हेतु नहीं, बल्कि धार्मिक रिवाजों तथा सामूहिक स्नान आदि कार्यो के उपयोग में आता था। इनका आकार आयताकार होता है। इनके तीन ओर सीढियां बनी होती थी। 1660 ई. में, निर्मित जोधपुर का महामन्दिर झालरा प्रसिद्ध था। अधिकांश झालराओं का आजकल प्रयोग बन्द हो गया है। जल संचय की दृष्टि से इनका विशेष महत्व रहा है। झालराओं का वास्तुशिल्प सुन्दर होता हैं। इनके संरक्षण की आवश्यकता है। प्रशासनिक व्यवस्था के साथ–साथ जनसहयोग की भी आवश्यकता है।

कुई या बेरी : –

कुई या बेरी सामान्यतः तालाब के पास बनाई जाती है। जिसमें तालाब का पानी रिसता हुआ जमा होता है। कुई मोटे तोर पर 10 से 12 मीटर गहरी होती हैं। इनका मुँह लकड़ी के फन्टों से ढंका रहता है ताकि किसी के गिरने का डर न रहे। पश्चिमी राजस्थान में इनकी अधिक संख्या है। भारत–पाक सीमा से लगे जिलों में इनकी मौजूदगी अधिक हैं। 1987 के भयंकर सूखे के समय सारे तालाबों का पानी सूख गया था, तब भी बेरियों में पानी आ रहा था।

परम्परागत जल–प्रबन्धन के अन्तर्गत स्थानीय ज्ञान की आपात व्यवस्था कुई या बेरी में देखी जा सकती है। खेत के चारों तरफ मेंड ऊँची करदी जाती हैं जिससे बरसाती पानी जमीन में समा

जाता है। खेत के बीच में एक छिछला कुआँ खोद देते हैं जहां इस पानी का कुछ हिस्सा रिसकर जमा हो जाता है। इसे काम में लिया जाता है।

वर्षा जल संरक्षण की शब्दावली :–

(1) आगौर (पायतान)

वर्षा जल को नाड़ी या तालाब में उतारने के लिए उसके चारों ओर मिट्टी को दबाकर आगोर (पायतान) बनाया जाता है।

(2) टॉका :–

वर्षाजल एकत्रित करने के लिए बनाया गया हौद।

(3) नाडी :–

छोटी तलैया जिसमें वर्षा का जल भरा जाता है।

(4) नेहटा (नेष्टा) :–

नाडी या तालाब से अतिरिक्त जल की निकासी के लिए उसके साथ नेहटा बनाया जाता है जिससे होकर अतिरिक्त जल निकट स्थित दूसरी नाड़ी, तालाब या खेत में चला जाये।

(5) पालर पाणी :–

नाडी या टांके में जमा वर्षा का जल।

(6) बावड़ी :

वापिका, वापी, कर्कन्धु, शकन्धु आदि नामों से उद्‌बोधित। पश्चिमी राजस्थान में इस तरह के कुएॅ बावडी) खोदने की परम्परा ईसा की प्रथम शताब्दी के लगभग शक जाति अपने साथ लेकर आई थी। जोधपुर व भीनमान में आज भी 700–800 ई. में निर्मित बावडियॉ मौजूद है।

(7) बेरी :

छोटा कुऑ, कुईयॉ, जो पश्चिमी राजस्थान में निर्मित हैं।

(8) मदार

नाडी या तालाब में जल आने के लिए निर्धारित की गई, धरती की सीमा को मदार कहते हैं। मदार की सीमा में मल–मूत्र त्याग वर्जित होता है।

परम्परागत जल स्रोतों की उपयोगिता :–

(1) पराम्परिक जल प्रबन्धन का पुनरूद्वार कर राज्य में कृषि अर्थ व्यवस्था को बढाया जा सकता है।

(2) प्राकृतिक आपदा के समय इस प्रकार के जल प्रबन्धन से समस्या का सामना किया जा सकता है।

(3) पारम्परिक जल स्रोतो के माध्यम से सूखे व बाढ जैसी विपदा के खिलाफ लड़ने के लिए सक्षम बन सकते हैं।

(4) परम्परागत जल प्रबन्धन की प्रणाली कृषि का एक स्तम्भ बन सकती है।

(5) परम्परागत जल स्रोतों की पुनर्स्थापना से नयी पीढ़ी के लिए रोजगार के अवसर मिलेगें।

परम्परागत जल स्रोतो की वर्तमान में प्रासंगिकता

जल संचय और संरक्षण प्रबन्ध हमारे यहॉ सदियों पुराना है। राजस्थान में खडीन, कुंड और नाडी महाराष्ट्र में बंधारा और ताल, हिमाचल में कुहल, तमिलनाडू में इरी, केरल में सुरंगम, जम्मू क्षेत्र में पोखर और कर्नाटक में कट्टा आदि नाम जल प्रबन्धन के प्राचीन स्रोत थे। ये सभी

परम्परागत जल स्रोत वहॉ की पारिस्थितिकी और संस्कृति की अनुरूपता के आधार पर हैं। स्थानीय जरूरतों को पर्यावरण से तालमेल रखते हुए पूरा किया है। आधुनिक व्यवस्थाएँ पर्यावरण का दोहन करती है। भारत में वर्षा मौसमी है। तीन महिनें ही होती है। देश के 80 प्रतिशत हिस्से में इन तीन महिनों में ही 80 प्रतिशत वर्षात हो जाती है। वर्षात का बहुत ज्यादा पानी नदियों के माध्यम से बह जाता है।जरूरत इस बात की है कि वर्षा के पानी को स्थानीय जरूरतों और भौगोलिक स्थितियों के हिसाब से संग्रहित किया जाना चाहिए। इससे भू–जल का भण्डारण भी हो जाता है। जल संचय की पारम्परिक प्रणालियों से लोगों की घरेलू और सिंचाई सम्बन्धी जरूरतें पूरी होती हैं। साक्ष्यों से पता चलता कि प्राचीन भारत के शासको ने जल संचय की बेहतर प्रणालियों को अपनाते हुए जल और सिंचाई की आपूर्ति के लिए नहरों का न केवल निर्माण करवाया था, बल्कि उनके रख रखाव हेतु आवश्यक प्रशासनिक व्यवस्थाएं भी विकसित की थी। पारम्परिक प्रणालियों के सामुदायिक जल प्रबन्धन के कारण हर व्यक्ति की न्यूनतम आवश्यकता पूरी होती थी। इन जल प्रबन्धन प्रणालियों की आज अधिक प्रासंगिकता है जिन्होनें सूखे या अकाल के लम्बे दोर में समुदायों को जीवन दान दिया है। जल की आधुनिक प्रणाली में कमी तब महसूस होती हैं, जब बिजली नहीं आती, नल में पानी सूखता हैं, बांध में मिट्टी भरने से पानी क्षमता नहीं रहती। उस समय पारम्परिक प्रणालियां याद आती है। देश के बहुत बड़े हिस्से में आधुनिक प्रणाली भारी लागत की वजह से पहुंच ही नहीं सकती। अतः वहां लोग पीने के जल व सिंचाई के लिए परम्परागत जल प्रबंधन पर निर्भर हैं। पारम्परिक जल प्रबंधन प्रणालियां पुराना ढांचा नहीं हैं। मुनाफाखोर प्रणाली से भिन्न है। नलकूपों से भारी मात्रा में भू–जल निकाला जा रहा हैं। सरकारी एजेन्सियों को यह पता नहीं कि यह सब पारिस्थितिकीय बुनियादी मानदण्डों के विपरीत है। इन प्रणालियों ने सरकार पर आत्म निर्भरता बढा दी। पारम्परिक प्रणालियों में सस्ती, आसान तकनीकी काप्रयोग होता था, जिसे स्थानीय लोग भी आसानी से बनाए रख सकते थे। पानी आर्थिक विकास का बडा आधार है। जल प्रबन्धन प्रणालियों का यदि व्यवहारिक समता और समुदाय आधारित विकास करना है, तो जल संग्रहण की परम्परागत प्रणालियों का निर्माण आज भी प्रसंगिक हैं।

वर्षाजल प्रबन्धन की परम्परागत प्रणालियों का पतन–

देश प्रदेश की परम्परागत जल संग्रहण प्रणालियां आज समाप्त प्रायः हैं। इनकी उपेक्षा करदी गई है। मौजूदा जल आपूर्ति एवं जल प्रबन्धन प्रणाली जरूरत के हिसाब से विफल हैं। जंगल कटाई के कारण जल ग्रहण क्षेत्र में मिट्टी जमने के कारण तालाब उपयोग के योग्य नहीं रह गये हैं। तालाब क्षेत्रों में अतिक्रमण से भूमिगत जल का स्तर नीचे चला गया है, अधिकांश कुंए सूख गये हैं।

परम्परागत जल प्रबन्धन प्रणालियों के पतन के कारणः–

विद्वान अग्रवाल एवं एस नारायण के अनुसार जल प्रणालियों के पतन के निम्नांकित कारण है–

1. बढती आबादी और जल आपूर्ति की अधिक मांग, जिसे परम्परागत जल स्रोतों से पूरा नहीं किया जा सकता था जिसके कारण ये प्रणालियां उपेक्षित हो गयी।

2. व्यक्तियों को लाभ पहुंचाने वाली योजनाओं को सरकारी प्रोत्साहन ने, परम्परागत जल प्रबन्धन प्रणालियों के रख रखाव में सक्रिय सामुदायिक भागीदारी को समाप्त कर दिया।

3. खेती का व्यवसायीकरण और नकदी फसलों का व्यापकता ने, ऐसी प्रणालियों को नकार दिया।

4. उपनिवेशकाल में निवेश की पद्धति ने सिंचाई की छोटी प्रणालियों की उपेक्षा की।
5. पानी को पर्यावरण के व्यापक प्रबन्धन की देन के रूप में समझने में सरकारी एजेन्सियों की असमर्थता।

इसके अतिरिक्त कुछ व्यवस्थाओं में सामाजिक विरोधाभास इतने पैदा हो गये कि ये व्यवस्थाएं चरमरा गई। परम्परागत जल प्रबन्धन में सामुदायिक सहयोग अनिवार्य है, ऐसे में जब समुदाय टूट जाए तो प्रणालियों का पतन हो जाता है। यदि लोगों का परम्परागत जल प्रबन्धन में स्वतः श्रम व धन का योगदान रहेगा, वहां पर ऐसी प्रणालियां काम करती रहेगी, जैसे हिमाचल और जम्मू–कश्मीर में 'कुहल' जैसी पारम्परिक प्रणालियां आज भी मौजूद हैं।

परम्परागत जल प्रबन्धन प्रणालियों का आकार भी छोटा होता था, ताकि समुदाय अपने श्रम, पूंजी व ज्ञान के बूते पर उन्हें आसानी से संभाल सके। जब आधुनिक प्रणालियां ठीक इसके विपरीत हैं जो भारी सरकारी कोष और नौकरशाही के तामझाम के बिना काम नहीं करती है।

अतः राष्ट्रीय नीति लघु जल संचय प्रणालियों को और प्राकृतिक संसाधनों के सामुदायिक प्रबन्धन को बढावा देने वाली होनी चाहिए। इससे सरकार को भी मदद मिलेगी तथा लोगों की मूलभूत जरूरतें पूरी होगी। परम्परागत जल प्रबन्धन प्रणालियां आखिर हमारी विरासत का हिस्सा है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :–

1. इनमें परम्परागत जल का स्रोत नहीं है।
(क) खडीन (ख) झील
(ग) झालरा (घ) खाई ( )

2. कालासागर तालाब किस जिले में है?
(क) जयपुर (ख) जोधपुर
(ग) सवाई माधोपुर (घ) चित्तौड़गढ़ ( )

3. सांभर झील किस जिले में है?
(क) जयपुर (ख) टोंक
(ग) दौसा (घ) कोटा ( )

4. चांद बावडी कहां पर स्थित है?
(क) आमेर (ख) आभानेरी
(ग) दौसा (घ) सांभर ( )

5. खडीन का आविष्कार किया था–
(क) जैसलमेर के पालीवाल ब्राह्मणों ने
(ख) बाडमेर के ब्राह्मणों ने
(ग) पाली के पालीवाल ब्राह्मणों ने।
(घ) नागौर के ब्राह्मणों ने। ( )

6. भारत–पाक सीमा से लगे जिलों में कौनसे परम्परागत जल प्रबन्धन स्रोत की मौजूदगी अधिक है?
(क) झालरा (ख) टांक
(ग) कुई या बेरी (घ) खडीन ( )

7. राजस्थान में सर्वाधिक जल संरक्षण, किस परम्परागत जल स्रोत में होता है–

(क) टोबों में (ख) झीलों में

(ग) खडीनों में (घ) तालाबों में। ( )

8. राजस्थान में सबसे पहले किस राजा ने नाडी का निर्माण करवाया था?

(क) राजा जयसिंह (ख) राव जोधा जी

(ग) राजा जवाहर सिंह (घ) राव मोकल ( )

9. आगौर या पायतान का अर्थ होता है–

(क) साफ रखना (ख) पानी बाहर निकलना

(ग) बटोरना (घ) ढककर रखना ( )

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न :

1. नागौर, बाड़मेर एवं जैसलमेर में अधिकांश पानी की आपूर्ति किस परम्परागत जलस्रोत से होती है?
2. टोबा व नाडी में क्या अंतर हैं?
3. टांका राजस्थान के किस क्षेत्र में निर्मित किया जाता है?
4. झालरा क्या है? समझाइये।
5. पुष्कर झील का महत्व बताइये।
6. मेघदूत में किस परम्परागत जल प्रबन्धन प्रणाली का उल्लेख मिलता है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न :

1. पायतान (आगौर) क्या है?
2. नेहटा किसे कहते हैं?
3. मदार के बारे में आप क्या जानते हैं?
4. राजस्थान में महत्वपूर्ण झीलों के नामों का उल्लेख करें।
5. खडीन बांध और खडीन क्षेत्रों को समझाइये।

निबन्धात्मक प्रश्न :

1. परम्परागत जल स्रोत खडीनं के बारे बताइये।
2. जल प्रबन्धन की पारम्परिक प्रणालियों की उपयोगिता बताइये।
3. परम्परागत जल प्रबन्धन प्रणालियां आज अपना स्वरूप खोती जा रही हैं, कारण बताइये।
4. पारम्परिक जल स्रोतों की वर्तमान में प्रासंगिता को स्पष्ट करें।

प्रोजेक्ट –

1. आपके परिवेश मे उपलब्ध जल संरक्षण प्रणाली का चित्र बनायें और उसकी प्रस्तुति कक्षा में करें।
2. जल संरक्षण हेतु पोस्टर एवं नारे बनाये।

अध्याय – 4
विरासत का संरक्षण

भारतवर्ष के मानचित्र पर राजस्थान प्रदेश राजनैतिक, भौगोलिक एवं प्राकृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यह संस्कारों एवं पवित्र रिश्तों का प्रदेश है। यहाँ की समृद्ध विरासत (धरोहर) का एक लम्बा गौरवशाली इतिहास रहा है। यहाँ के राजाओं, सामन्तों, सेठ–साहुकारों और प्रबुद्व नागरिको ने समय–समय पर जिन महलों किलों, हवेलियों, छत्ररियों, झीलों, बावडियों, स्तम्भों, मन्दिरों, स्मारकों आदि का निर्माण करवाया था, वो स्थापत्य कला की दृष्टि से अद्‌भुत एवं बेजोड़ हैं। राजस्थान की समृद्ध धरोहर है। इनको देखकर उस समय के तकनीकी, कला एवं विज्ञान के उच्च स्तर का पता चलता है, इसलिए राजस्थान धरोहरों का प्रदेश है।

राजस्थान की समृद्व सांस्कृतिक विरासत में प्रमुखरूप से दो पक्ष हैः प्रथम–साहित्य तथा द्वितीय–कला।

साहित्यः–

राजस्थान में साहित्य संस्कृत तथा प्राकृतभाषा में लिखा जान पड़ता है। पूर्व मध्ययुग (700–1000 ई.) में अपभ्रंश भाषा के विकास के कारण इसमें भी साहित्य लिखा गया। कुछ विद्वान मानते हैं कि प्राकृत भाषा से डिगंल तथा डिंगल से गुजराती और मारवाड़ी भाषाओं का विकास हुआ। संस्कृत से पिंगल तथा इससे ब्रज और खड़ी हिन्दी का विकास हुआ। भाषा विद्वानों के अनुसार राजस्थान की प्रमुख भाषा मरू भाषा है। मरूभाषा को ही मरूवाणी तथा मारवाड़ी कहां जाता है। डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी ने राजस्थानी भाषा के लिए डिगंल अथवा मारवाड़ी भाषा का प्रयोग किया है। आठवी शताब्दी ई0 में उद्योतन सूरि ने अपनें ग्रन्थ कुवलयमाला में मरू, गुर्जर, लाट और मालवा प्रदेश की भाषाओं का उल्लेख किया है। जैन कवियों के ग्रन्थों की भाषा भी मरू भाषा है।

राजस्थानी साहित्य :–

राजस्थानी साहित्य, समृद्व साहित्य है जिसके अन्तर्गत रचना की दृष्टि से विविधता हैं, यही राजस्थान की विरासत है। राजस्थानी सम्पूर्ण राजस्थान की भाषा रही हैं, इसकी कृतियों को 4 भगों में विभक्त किया जा सकता है :–

(1) चारण साहित्य की कृतियाँ (2) जैन साहित्य की कृतियाँ (3) संत साहित्य की कृतियाँ (4) लोक साहित्य की कृतियाँ।

चारण साहित्य राजस्थानी भाषा का सबसे समृद्व साहित्य है। चारण कवियों ने इसका लेखन किया है। यह साहित्य वीर रस से ओत–प्रोत है। यह साहित्य प्रबन्ध काव्यों, गीतों, दोहों, सौरठों, कुण्डलियों, छप्पयों, सवैयों आदि छन्दों में उपलब्ध है। चारणसाहित्य में अचलदास खींची री वचनिका, पृथ्वीराज रासो, सूरज प्रकाश, वंशभास्कर, बाकीदास ग्रन्थावली आदि प्रमुख हैं। जैन साहित्य के अन्तर्गत वह साहित्य आता है, जो जैनमुनियों द्वारा लिखित है। वज्रसेन सूरिकृत–भरतेश्वर बाहुबलि घोर, शालिचंन्द्र सूरि कृत–भरतेश्वर बाहुवलिरास प्राचीन राजस्थानी ग्रन्थ हैं।कालान्तर में बृद्धिरास, जंबूस्वामी चरित, आबरास, स्थूलिभद्ररास, रेवंतगिरिरास, जीवदयारासु तथा चन्दनबाला रास आदि ग्रन्थों की रचना हुई।राजस्थान के साहित्यिक विरासत में संतसाहित्य का उल्लेखनीय स्थान है। भक्ति आन्दोलन के समय दादू पंथियों और राम स्नेही सन्तों ने साहित्य का सृजन किया। इसके अतिरिक्त मीराबाई के पद, महाकवि वृंद के दोहे,

नाभादास कृत वैष्णव भक्तों के जीवन चरित, पृथ्वीराज राठौड़ (पीथल) कृत वेलिक्रिसन रूकमणी री, सुन्दर कुंवरी के राम रहस्य पद, तथा सुन्दरदास और जांभोजी की रचनाएं आदि महत्वपूर्ण हैं। राजस्थान का लोक साहित्य भी समृद्व है। इसके अन्तर्गत लोकगीत, लोक गथाएं, लोक नाट्य, पहेलियाँ, प्रेम कथाएँ और फडें आदि है।तीज, त्यौहार, विवाह, जन्म, देवपूजन और मेले अधिकतर गीत लोक साहित्य का भाग हैं। राजस्थान में 'फड' का प्रचलन भी हैं।

किसी कपड़े पर लोक देवता का चित्रण किया जाकर उसके माध्यम से ऐतिहासिक व पौराणिक कथा का प्रस्तुतिकरण किया जाना 'फड़' कहलाता है जैसे– देवनारायण महाराज की फड़ बापूजी री फड़ आदि। विधा की दृष्टि से राजस्थानी साहित्य को दो भागों में बाँटा जा सकता है– (1) पद्य साहित्य (2) गद्य साहित्य।

(1) पद्य साहित्य

पद्य साहित्य में दूहा, सोरठा, गीत, कुण्डलियाँ, छंद छप्पय आदि आते हैं।

(2) गद्य साहित्य

गद्य साहित्य के अन्तर्गत वात, वचनिका, ख्यात दवावैत, वंशावली, पट्टावली, पीढ़ियावली, दफ्तर, विगत एवं हकीकत आदि आते हैं।

इसके अतिरिक्त हरिदास भार कृत–अजीतसिंह चरित, उदयराम बारठ कृत–अवधान, पद्मनाभकृत– कान्हडदे प्रबन्ध, दुरसा आढ़ा कृत–किरतार बावनी दलपति विजया या दौलत विजय कृत–खुमांण रासो, शिवदास कृत–गजगुणरूपक, अमरनाथ जोगी कृत–रालालैंग, कवि धर्म कृत–जम्बूस्वामीरास, कविराज, मृरारिदास कृत–डींगक कोश, हरराजकृत ढ़ोला मारवाडी, चंद दादी कृत–ढ़ोला मारूरा दोहा, बांकीदास कृत– बांकीदास री ख्यात, नरपति नाल्ह कृत– बीसलदेव रासो, बीठलदास कृत–रूकमणिहरण, श्यामलदास कृत–बीरविनोद ईसरदास कृत–हाला झाला री कुण्डलियाँ तथा भांड्ड व्यास कृत–हमीरायण आदि राजस्थानी भाषा के प्रमुख ग्रन्थ है। यह सम्पूर्ण राजस्थानी साहित्य हमारी समृद्ध धरोहर है।

राजस्थान की स्थापत्य कला – एक समृद्ध विरासत

संस्कृति के आधार पर ही राष्ट्र की उपलब्धियों एवं उन्नति का आकलन होता है।

संस्कृति आन्तरिक वस्तु है और व्यापक हैं। कला संस्कृति की गाडी़ होती है। कला संस्कृति का ही अंग है। कला संस्कृति की भाषा है। कला ही संस्कृति को मूलरूप प्रदान करती है।

कला की सामग्री से जीवन व रहन–सहन के विभिन्न बौद्धिक पहलुओं का इतिहास लिखा जासकता है। राजस्थान में स्थापत्य कला का विकास गुप्तों के समय अपने उत्कर्ष पर था।

हूणों के आक्रमणसे राजस्थान के स्थापत्य को नुकसान हुआ। पूर्वमध्यकाल में (700–1000ई.) जब गुर्जर–प्रतिहार शासकों ने राजस्थान क्षेत्र पर अपना शासन जमाया तो वे स्थापत्य के विकास के मामले में गुप्तों के उत्तराधिकारी साबित हुए। इस काल में बड़ी संख्या में मन्दिर बनें, जो गुर्जर–प्रतिहार शैली अथवा 'महामारू' शैली के नाम से जाने जाते हैं– (देखें–राजस्थान ज्ञान कोश–मोहनलाल गुप्ता) जैम्स बर्जेस तथा जैम्स फर्ग्युसन ने इन मन्दिरों के लिए आर्यावर्त शैली या इण्डोआर्यन शैली का प्रयोग किया है। कला शिल्प, भाव प्रधानता अंग सौण्ठव, प्रतीकात्मक तथा धर्म प्रधानता इस शैली की विशेषता रही है।

दुर्गः–

राजस्थान के राजा, महाराजा, सामंत व ठिकानेदारों ने राज्य की तथा स्वंय की रक्षा हेतु बडी़ संख्या में दुर्गों का निर्माण किया। कुछ दुर्ग सामरिक दृष्टि से अति उपयोगी थे। आज हमारे

प्रदेश की ये धरोहर हैं। शुक्र नीति में नौ प्रकार के दुर्गों का उल्लेख है। कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में दुर्गों की चार श्रेणियां निर्धारित की है :– 1. औदृक, 2. पार्वत, 3. धान्वन 4. वन दुर्ग। कुछ विद्वान स्थल पर बने दुर्ग की भी एक पृथक श्रेणी– स्थल दुर्ग को मानते है। राजस्थान में ये सभी प्रकार के दुर्ग पाये जाते हैं।

औदुक दुर्गः– यह जल दुर्ग है। गागरौन दुर्ग इसी प्रकार है।

पार्वत दुर्गः– यह उच्च पहाड़ पर स्थित होता है। जालोर, सिवाना, चित्तौड़, रणथम्भौर, तारागढ़ मेहरनगढ़, जयगढ़ आदि दुर्ग इसी श्रेणी के पार्वत दुर्ग हैं।

धान्वन दुर्गः– मरूभूमि में बना हुआ दुर्ग धान्वन दुर्ग कहलाता है। जैसलमेर का दुर्ग इसी श्रेणी का है।

वन दुर्गः– जंगल में बना हुआ वन दुर्ग होता है। सिवांना का दुर्ग इसी कोटि का है।

स्थल दुर्गः– बीकानेर, नागौर, चौमू तथा माधोराजपुरा का दुर्ग इसी श्रेणी में आते हैं। चितौड़गढ़ का किला धन्व दुर्ग श्रेणी को छोड़कर सभी श्रेणियों की विशेषताएँ रखता है। इसी कारण राजस्थान में एक कहावत है, कि गढ़ तो गढ़ चित्तौड़गढ़ बाकी सब गढैया। मिट्टी के किले– हनुमानगढ़ का भटनेर तथा भरतपुर का लोहागढ़ हैं।

राजस्थान के प्रमुख दुर्ग –

अचलगढ़ :– 900 ई0 में इस दुर्ग का निर्माण परमार राजाओं ने करवाया था।

अलवर दुर्गः– इसे बाला किला के नाम से भी जानते है। 300 मीटर ऊँचा तथा 5 कि.मी. के आकार से घिरा यह दुर्ग निकुंभ क्षत्रियों द्वारा निर्मित है। हसन खां मेवाती ने इसकी मरम्मत करवाई थी। 1775 ई. में कच्छवाह राजा प्रतापसिंह ने इस पर अधिकार कर लिया था। इसमें जलमहल व निकुंभ महल सुन्दर हैं। इस दुर्ग में जहाँगीर तीन साल तक रहा था इसलिए उसे सलीम महल भी कहते हैं।

आम्बेर का किलाः–

यह पार्वत्य दुर्ग है। जयपुर नगर से 10 कि.मी. उत्तर की ओर स्थित है। दुर्ग के दो तरफ पहाड़ियाँ और एक तरफ जलाशय हैं। हिन्दू–मुस्लिम स्थापत्य कला का मिश्रण है। दुर्ग में स्थित रंगमहल, दिलखुश महल तथा शीशमहल दर्शनीय है।

कुंभलगढ़ :– 1458 ई. में. निर्मित यह दुर्ग शिल्पी मंडन के निर्देशन में पूरा हुआ था। इस कुंभाल मेरू भी कहते हैं। यह राजस्थान के सर्वाधिक सुरक्षित किलों में से एक है।

गागरोन का किलाः–

काली सिन्ध नदी के तट पर स्थित यह किला जल दुर्ग श्रेणी का है इसका निर्माण 11 वीं शताब्दी में परमारें द्वारा करवाया गया था। अब यह झालावाड़ जिले में स्थित हैं। इसमें सिक्के ढालने की टकसाल भी स्थापित की गयी थी।

चित्तौड़गढ़ :–

इसका वास्तविक नाम चित्रकूट हैं। इसे 7 वीं शताब्दी में चित्रांगद मोरी ने बनवाया था। कालान्तर में इसमें निर्माण होते रहे। 1302 ई. में अल्लाउदीन खिलजी ने रतनसिंह को मारकर इस दुर्ग पर अधिकार कर लिया था। यह दुर्ग 616 फिट ऊँचे एक पठार पर स्थित है इसके 7 दरवाजे हैं। इसमें पदमिनी महल, गोरा एवं बादल महल, पत्ता की हवेलियाँ, जैमलजी तालाब, मीरा बाई का मन्दिर तथा जैन मन्दिर आदि स्थित हैं। नौखण्डा विजय स्तम्भ इस दुर्ग की सबसे सुन्दर इमारत है।

चुरू का दुर्गः–

यह दुर्ग सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण रहा है। इसकी पहचान राष्ट्रीय धरोहर के रूप में है। 1857 के विद्रोह में ठाकुर शिवसिंह ने अंग्रेजों का जमकर मुकाबला किया। अंग्रेजों के विरूद्ध युद्ध में जब गोले (तोप के) समाप्त हो गये तो लुहारों ने लोहे के गोले बनाये किन्तु कुछ समय बाद गोले बनाने के लिए शीशा समाप्त हो गया। ऐसी कहावत है कि साहुकारों एवं जन सामान्य ने ठाकुर को घरों से चांदी लाकर समर्पित कर दी। जब अंग्रेज शत्रु पर चांदी के गोले जाकर गिरे तो शत्रु हैरान रह गया। इससे बड़ा राष्ट्रीयता का उदाहरण नहीं हो सकता।

जयगढ़ः–

जयपुर का यह दुर्ग गढ़ था। इसका निर्माण मिर्जा राजा जयसिंह (1620–1667ई.) ने करवाया था। यह 500 फिट ऊँची पर्वतीय शिखर पर स्थित है। इसके चारो ओर सुरक्षा के लिए मजबूत चार दीवारी बनायी गयी है। इसमें शस्त्रागार भी है। यहीं पर जयबाण नामक तोप स्थित है जिसका निर्माण इसी शस्त्रागार में हुआ था।

जालोर दुर्गः–

यह दुर्ग दिल्ली–गुजरात जाने वाले मार्ग पर स्थित है। युद्ध की दृष्टि से यह किला सबसे सुदृढ़ हैं। अल्लउद्दीन खिलजी ने कई वर्षो तक इसकी घेरा बन्दी की लेकिन इसमें प्रवेश नहीं कर सका। बाद में 1314 में कान्हड़दे के आदमियों की गद्‌दारी से किले का पतन हुआ। इसका निर्माण कार्य गुर्जर–प्रतिहार राजा नागभट्ट प्रथम ने प्रारम्भ किया था। बाद में परमारों ने इसे पूरा करवाया। स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय मथुरादास माथुर, फतहराज जोशी, गणेशीलाल व्यास तथा तुलसीदास राठी आदि नेताओं को इस दुर्ग में नजरबन्द किया था।

जैसलमेर दुर्गः–

इसे सोनार गढ़ भी कहते हैं। इसका निर्माण, रावल जैसल भाटी ने, 1155 ई. में करवाया था। इसके चारों ओर विशाल मरूस्थल फैला हुआ हैं, अतः यह धान्व श्रेणी के दुर्ग में आता है। दुर्ग में स्थित रंग महल, राजमहल, मोती महल, एवं दुर्ग संग्रहालय दर्शनीय हैं। इसमे कई महल, मन्दिर तथा आवासीय भवन बने हुए है। वर्तमान में राजस्थान में दो ही दुर्ग ऐसे है जिनमें लोग निवास करते हैं। उनमें से एक चित्तौड़गढ़ का दुर्ग है तथा दुसरा जैसलमेर का दुर्ग है।

तारागढ़ :–

इसे गढ़ बीठली भी कहते हैं। अरावली की पहाड़ियों पर निर्मित तारागढ़ दुर्ग समुद्र तल से 870 मीटर तथा धरातल से 265 मीटर ऊँचाई पर स्थित है। चौहान वंशीय अजयराज ने इस दुर्ग का निर्माण करवाया था मेवाड़ महाराणा रायमल के पुत्र पृथ्वीराज ने इस दुर्ग में कुछ महल आदि बनवाये थे जिसके कारण इसका नाम अपनी पत्नी ताराबाई के नाम पर तारागढ़ रख दिया। राजस्थान मे तारागढ़ के नाम से दो दुर्ग हैं। पहला अजमेर में तथा दुसरा दुर्ग बून्दी में है।

बीकानेर दुर्गः–

इसको जूनागढ़ भी कहते हैं। यह मरू दुर्ग की श्रेणी में आता हैं। इस दुर्ग की नींव महाराज रायसिंह ने 17 फरवरी 1589 ई. में रखी थी। इसको बनने में लगभग 5 वर्ष लगे थे। इसकी दीवारे 40 फिट ऊँची तथा 15 फिट चौड़ी हैं जो सुरक्षा की दृष्टि से मजबूत हैं। दुर्ग की प्राचीरे अधिकांशतः लाल पत्थर से निर्मित हैं। दुर्ग परिसर में फूलमहल शीशे का बना हुआ है जो बेजोड़ व अद्‌भुत है। इसमें सोने की नक्काशी और चित्रकला का काम अनूठा है। इसमें महाराजा गंगासिंह का कार्यलय भी उत्कृष्ट हैः–

भटनेर का किलाः—

हनुमानगढ़ जिला मुख्यालय पर स्थित यह किला लगभग 50 बीघा भूमि मे विस्तृत है। यह दुर्ग प्राचीन है। मूल दुर्ग मिट्टी का था। बादमें समय—समय पर इसका पक्की ईटों से निर्माण होता रहा। इसे राजस्थान की उत्तरी सीमा का प्रहरी कहा जाता है।

मांडलगढ़ दुर्गः—

भीलवाड़ा जिले में स्थित यह दुर्ग गोलाई में बना हुआ है। लोक कहावतों के अनुसार माण्डिया के नाम पर इस दुर्ग का नाम माण्डलगढ़ पड़ा। इसका निर्माण शांकभरी के चौहानों ने 12 वीं शताब्दी में करवाया था। इसमें निर्मित जैन मन्दिर दर्शनीय हैं।

मेहरानगढ़ :—

पार्वत्य दुर्ग की श्रेणी का यह दुर्ग जोधपुर के उत्तर में मेहरान पहाड़ी पर स्थित हैं वास्तुकला की दृष्टि से बेजोड़ कृति हैं। यह मयुराकृति में है। इसलिए यह मयूरानगढ़ कहलाता था। इसकी स्थापना नीव राव जोधा ने रखी थी। एक तान्त्रिक अनुष्ठाान के तहत दुर्ग की नीवं मे राजिया नामक व्यक्ति जिन्दा चुन दिया गया था। इसके ऊपर खजाने की इमारते बनायी गयी थी। दुर्ग के चारों ओर सुदृढ़ 20 से 120 फिट ऊँची दीवारे बनाई गई जो 12 से 20 फिट चौड़ी हैं। इसके अन्दर एक विशाल पुस्तकालय भी हैं।

दुर्ग के अन्दर मोतीमहल, फतहमहल, फूला महल तथा सिंगार महल दर्शनीय है। किले में अनेक प्राचीन तोपें है।

रणथम्भौर :—

सवाईमाधोपुर में स्थित यह दुर्ग पार्वत्य दुर्ग हैं। इसका निर्माण 8 वीं शताब्दी में अजमेर के चौहान शासकों द्वारा हुआ। यह पहाड़ियों से घिरा हुआ है। यह दुर्ग रवाइयों एवं नालो से आवृत हैं। ये नाले चम्बल व बनास मे जाकर गिरते हैं। यह गिरि शिखर पर निर्मित है। इस तक पहुँचने के लिए संकरी घुमावदार घाटियों से होकर जाने वाले मार्ग से गुजरना पड़ता है।

दुर्ग में 32 खम्भों की छतरी, जैन मन्दिर, लक्ष्मी मन्दिर तथा गणेश मन्दिर स्थित है।

सिवाना दुर्ग :—

बाड़मेर जिले में स्थित यह दुर्ग परमार शासकों द्वारा 954 ई. में बनवाया गया था। यह ऊँची पहाड़ी पर निर्मित हैं। अल्लाउदीन खिलजी के समय यह दुर्ग कान्हडदेव के भतीजे सातलदेव के अधिकार में था। अल्लाउद्दीन ने जालौर आक्रमण के दौरान इस दुर्ग पर कड़ी मेहनत के बाद अधिकार कर लिया था। जौधपुर के राठौड़ नरेशों के लिए यह दुर्ग संकटकाल में शरण स्थली रहा है। यह वर्तमान में राजस्थान के दुर्गो में सबसे पुराना दुर्ग है। इस पर कूमट नामक झाड़ी बहुतायत में मिलती थी, जिससे इसे कूमट दुर्ग भी कहते हैं।

लोहागढ़ :—

इस दुर्ग को 1733 ई. में जाट राजा सूरजमल ने बनवाया था। दुर्ग पत्थर की पक्की दीवार से घिरा हुआ है। इसके चारों ओर 100 फिट चौड़ी खाई है। खाई के बाहर मिट्टी की एक ऊँची प्राचीर है। इस तरह यह दुर्ग दोहरी दीवारों से घिरा हुआ है अहमदशाह—अब्दाली एवं जनरल लेक जैसे आक्रमणकारी भी इस दुर्ग में प्रवेश नहीं कर सके थे। दुर्ग में प्रवेश के लिए केवल दो पुल बनाये गये हैं। इसमें एक पुल पर बना हुआ दरवाजा अष्ठ धातुओं का है। यह दरवाजा महाराजा जवाहरसिंह 1765 ई. में. मुगलों को परास्त कर लाल किले से उतार कर लाया था। इस दुर्ग के निर्माण में 8 वर्ष लगे। यद्यपि राजा जसंवत सिंह (1853—93) के काल तक इसका

निर्माण कार्य चलता रहा। इसमें 8 विशाल बुर्जे हैं। इनमें सबसे प्रमुख जवाहर बुर्ज हैं, जो महाराजा जवाहरसिंह की दिल्ली फतह के स्मारक के रूप में बनायी गयी थी। फतेहबुर्ज अंग्रेजों पर फतह के स्मारक के रूप में 1806 ई0 में बनायी थी।

यह दुर्ग स्थल दुर्गो की श्रेणी में विश्व का प्रथम दुर्ग है। दुर्ग में कई महल दर्शनीय है। 17 मार्च, 1948 को मत्स्य संघ का उद्‌घाटन समारोह भी दुर्ग में हुआ था।

राज प्रसाद :–

राजस्थान में राजाओं, महाराजाओं, सामन्तों, ठिकानेदारों आदि ने अपने निवास के लिए महलों का निर्माण करवाया था, उनमें कुछ नष्ट हो गये तथा कुछ स्थानों के महल सुरक्षित हैं। बैराठ, नागदा, राजोरगढ़, भीनमाल तथा जालौर आदि स्थानों के महल नष्ट हो गये हैं, फिर भी जोधपुर, उदयपुर, बीकानेर, अलवर, कोटा, बूदी, करौली एवं जयपुर के महल सुरक्षित हैं, और उनमें उनके वंशज रहते है। मुगलों के सम्पर्क से पूर्व के राजमहल सादगीपूर्ण तथा छोटे–छोटे कमरों वाले होते थे। जब राजस्थान के राजाओं का सम्पर्क मुगलों से हुआ तब नयी विधा का प्रयोग प्रारम्भ हुआ। अब महलों में जलाशय, फव्वारे, उपवन, बाग–बगीचे, तोपखाना, शास्त्रागार, गवाक्ष, झरोखे, रगंमहल आदि बनाये जाने लगे। इस समय के प्रासादों का स्थापत्य कला उत्कृष्ट है।

उदयपुर का महल :–

उदयपुर के राजमहल के बारे में फर्ग्यूसन लिखता हैं कि राजपूताने का यह सबसे बड़ा महल हैं तथा लंदन के विण्डसर महल की तरह विशाल हैं।

करौली राजमहल :–

यह महल एक विशाल परकोटे से घिरा हुआ है। इसमें भित्तिचित्रों का अच्छा अंकन है। इसमें सफेद चंदन से महकने वाले उद्यान में 50 चदंन के वृक्ष हैं।

कोटा का हवामहल :–

यह कोटा के गढ़ के पास निर्मित हवामहल हिन्दू स्थापत्य कला का सुन्दर नमूना है।

जयनिवास महल :–

महाराजा जयसिंह द्वारा निर्मित राज प्रासाद जयनिवास कहलाता है। यह जयपुर में स्थित हैं, इसे अब सिटी पैलेस भी कहते हैं। इसका मुख्य द्वार त्रिपोलिया कहलाता हैं। यह दरवाजा केवल पूर्व महाराजा के लिए या गणगौर की सवारी के लिए ही खोला जाता है। इसमें यूरोपीय तथा भारतीय भवन निर्माण पद्धति का मिश्रण है। इसी परिवार में सवाई माधोसिंह द्वारा निर्मित मुबारक महल भी हैं।

हवामहल (जयपुर) :–

1799 ई. मे. निर्मित हवामहल पिरामिड की आकृति में है। इसमें छोटी–छोटी खिड़कियाँ हैं, इसलिए इसको हवामहल कहा जाता है।

तलहटी महल :–

मेहरानगढ़ की तलहटी में एक विशाल चट्टान पर राजा सूरसिंह ने रानी सौभाग्य देवी के लिए महलों का निर्माण करवाया था।

उम्मेद महल :– इसे छीतर महल भी कहते हैं। यह अत्याधुनिक महल है। 1929 में राजा उम्मेदसिंह ने बनवाया था। इसमें पाँच सितारा होटल भी चलता है। हेरीटेज होटल के रूप में विकसित है। यह जोधपुर में स्थित हैं।

राई का बाग पेलेस :—

जोधपुर में स्थित इस महल को राजा जसंवत सिंह प्रथम की रानी हाड़ीजी ने 1663 ई. में बनवाया था। 1883 ई. में दयानन्द सरस्वती ने इसी महल में बैठकर राजा को उपदेश दिया था।

काष्ठ प्रासाद :—

यह झालावाड़ में स्थित हैं लकड़ी से निर्मित यह महल राजा राजेन्द्र सिंह ने 1936 ई0 में बनवाया था। यह महल तीन हजार पाँच सौ वर्ग फुट फैला हुआ है।

बूंदी के राज महल :—

यहाँ के राज महल राजस्थान के महलों में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं, जिस राजा ने जिस महल का निर्माण करवाया, उनके नाम लिखे हुए है। यहाँ पर प्राचीन समय की पानी घड़ी लगी हुई है।

मन्दिर शिल्प :—

राजस्थान में मन्दिर निर्माण के प्रमाण 7 वीं शताब्दी से भी पूर्व मिलते हैं। मन्दिर शिल्प का चरमोत्कर्ष राजस्थान में 8 वीं से 11 वीं शताब्दी के मध्य देखा जा सकता है। राजस्थान में झालरापाटन का शीतलेश्वर महादेव का पहला मन्दिर है जिसके पास निर्माण तिथि है।

आठवीं से बारहवीं शती तक का काल गुर्जर–प्रतिहारों का समय है। मन्दिर शिल्प निर्माण की दृष्टि से यह काल राजस्थान का स्वर्ण युग है। मण्डोर, मेड़ता तथा जालौर के गुर्जर–प्रतिहारों के नेतृत्व में जो कला आन्दोलन विकसित हुआ वह **'महामारू'** शैली कहलाता है। इस शैली का विस्तार मरू प्रदेश से निकलकर आभानेरी (बांदीकुई), चित्तौड़, बाडौली तक हुआ। इस वंश के शासक धार्मिक सहिष्णु व कलानुरागी थे, इसलिए इसकाल में शैव, वैष्णव, शाक्त तथा जैन मन्दिरों का निर्माण बहुतायत से हुआ।

इस शैली के प्रमुख केन्द्र चित्तौड़, आँसिया व आभानेरी हैं।ओसियाँ में बौद्ध कला, जैनकला तथा गुप्तकला का गुर्जर–प्रतिहारकाल में समन्वय देखनें को मिलता है। खुजराहों में मन्दिर कला का जो उत्कर्ष मिलता है उसका आधार प्रतिहारकालीन गुर्जर मारू अथवा महामारू शैली ने ही तैयार किया है। अलवर जिले की मन्दिरां की श्रृखंला दसवी शताब्दी की है। हिन्दू मन्दिरों के साथ–साथ जैन मन्दिरों का भी निर्माण करवाया गया। ऑसिया में गुर्जर–प्रतिहार शासक वत्सराज ने 8 वीं शताब्दी में जो महावीर जी का जैन मन्दिर बनवाया था, वह अब तक का प्राचीनतम जैन मन्दिर है। माउण्ट आबू के देलवाड़ा जैन मन्दिर वास्तुकला के बेजोड़ नमूने हैं।

12 वीं से 16 वीं शताब्दी के मध्य निर्मित मन्दिर सुरक्षा की दृष्टि से दुर्गो में ही बनते रहें ताकि शत्रु से सुरक्षित रह सके। 17 वीं शताब्दी और उसके बाद मुगल शासकों के डर से उत्तरी भारत के मठो व मन्दिरों के आचार्य व पुजारी देव मूर्तिया लेकर राजाओं से आश्रय पाने के अभिप्राय से राजस्थान में आ गये। इनमें राधावल्लभ, निम्बार्क व पृष्टि मार्ग के आचार्य विशेष उल्लेखनीय है। इस क्रम मे इन विचार धाराओं के मन्दिर सिहांड़, नाथद्वारा, कांकरोली, चारभुजा, कोटा, डूंगरपुर एवं जयपुर आदि स्थानों पर बनाये गये।

इस प्रकार मन्दिर स्थापत्य कला राजस्थान की उद्भुत विरासत हैं, जिन्हें देखने और अध्ययन करने विदेशों से कला मर्मज्ञ विद्धान जन राजस्थान आते रहते हैं। मूर्तिकला में, आभानेरी, अटरू, आबू, नागदा, चित्तौड़ किराड़, ऑसियाँ, सीकार आदि स्थानों की अर्धनारीश्वर व नृत्य मातृकायें मूर्तियाँ दर्शनीय है। गुप्त एवं गुप्तोत्तर काल में राजस्थान की मूर्ति शिल्प में नवीन, भरतपुर,

बैराठ, डूंगरपुर आदि स्थानों से शिव, विष्णु, याक्ष आदि की मूर्तिया प्राप्त हुई हैं। भरतपुर की बदलदेव की 27 फुट ऊँची मूर्ति इस कला का उद्‌भुत उदाहरण हैं।

गुर्जर–प्रतिहारों का काल देवी–देवताओं की मूर्तियों में माधुर्य एवं कोमलता के साथ साथ शक्ति व शौर्य का मिश्रण मिलता है। उदयपुर में नागदा का सास–बहू मन्दिर की लक्षण कला अति उत्तम है। आँसिया के मंदिर में एक आभीर कन्या का अंकन दर्शनीय है।

अर्थूणा (बॉसवाड़ा) गाँव में शिल्प व स्थापत्य का प्राचीन खजाना खेतों में बिखरा पड़ा है। यह पुरातात्विक व धरोहर के दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यहां शिव मंदिर हैं। ऐसे ही आभानेरी (बाँदी कुई) का स्थापत्य अवशेष व मूतियाँ चारों ओर बिखरा पड़ा हैं जहाँ पर हर्षत माता का मन्दिर है।

राजस्थान के प्रसिद्ध मन्दिर

अजमेर जिले में, पुष्कर–ब्रह्मा मंदिर, सावित्री मंदिर, वराह मंदिर, नौग्रह मंदिर रंगनाथ मन्दिर, तथा वराह मंदिर आदि।

अलवर में–नीलकण्ठ मंदिर।

उदयपुर में–आबूनाथ मंदिर–नागदा।

करौली में कैला मैया मंदिर।

टौंक जिले में कल्याण का मंदिर–डिग्गी। डूंगरपुर जिले में–

देव सोमनाथ मंदिर, गवरीबाई का मंदिर, एवं श्रीनाथ मंदिर।

चित्तौड़गढ़ :–

मीराबाई मंदिर, कालिका माता मंदिर, सांवलिया सेठ मंदिर –मण्डाफिया।

चुरू :–

सालासर बालाजी–सालासर, गोगाजी की जन्मस्थली–गोगामेड़ी।

जयपुर :–

गढ़ गणेश मंदिर (मोती डूंगरी), गोविन्द देवजी मंदिर, ताडकेश्वर मंदिर, तीर्थराज, गलताजी–जयपुर।

आमेर में सूर्य मंदिर, जगतशिरोमणि मंदिर, नृसिंह मंदिर, शिला देवी मंदिर।

कल्याण जी मंदिर –डिग्गी।

जालौर :–

चामुण्डा मंदिर –आहोर, पातालेश्वर मंदिर –सेवाड़ा, वराह श्याम मंदिर –भीनमाल,

जैसलमेर :–

हिंगलाज देवी मंदिर, नीलकण्ठ महोदव, रामेदवरा मंदिर –रामदेवरा, तणोर देवी मंदिर–तणोट।

झालावाड़ :–

सुर्यमन्दिर, कालिका मंदिर, कराह मंदिर, सातसहेली मंदिर –झालरापाटन।

झुन्झुनू :–

द्वारकाधीश मंदिर –नवलगढ़, जगदीश मंदिर –चिड़ावा, रानीसती मंदिर –झुन्झुनू, शारदा देवी मंदिर –पिलानी।

दौसा :–

बैजनाथ मंदिर, सोमनाथ मंदिर, नीलकण्ठ मंदिर, मेहंदीपुर बालाजी मंदिर –मेहंदीपुर।

नागौर :–

बंशीवाले का मंदिर, ब्रह्माणीमाता मंदिर तेजाती मंदिर–खरनाल, मीरा बाँई मंदिर–मेड़तासिटी पाडामाता मंदिर–डीडवाना।

बाँसवाड़ा :–

त्रिपुरा सुन्दरी मंदिर–तलवाड़ा, नन्दनी माता तीर्थ–बड़ोदिया, धूणी के रणछोरजी–बासवाड़ा।

बाड़मेर :–

सोमेश्वर मन्दिर–किशड़ू, ब्रह्माजी का मंदिर–आसोतरा, रणछोड़ राय मंदिर–खेड, हल्देश्वर मंदिर – पीपलूद।

बीकानेर :–

कपिल मुनि मंदिर–कोलायत, करणीमाता मंदिर–देशनोक, भैखमंदिर–कोड़मदेसर।

भीलवाड़ा :–

रामद्वारा–शाहपुरा, बाणमाता शक्तिपीठ–माण्डलगढ़–माण्डलगढ़।

राजसमंद :–

श्रीनाथजी मंदिर–नाथद्वारा, द्वारिकाधीश मंदिर–कांकरोली।

सवाई माधोपुर :–

मेहंदीपुर बालाजी, कालागोरा भैरव मंदिर, रणतभंवर गजानन मंदिर–रणथंभौर।

सीकर :–

शांक भरी देवी मंदिर–शाकंभरी, हर्षनाथ मंदिर–सीकर, जीणमाता मंदिर–गौरिया (सीकर), खाटूश्याम जी मंदिर–खाटूश्याम (सीकर)।

हनुमानगढ़ :–

भद्र काली मंदिर, गोगाजी समाधि स्थल–गोगामेडी (नोहर)।

राजस्थान के प्रसिद्ध जैन मंदिर–

सोनीजी की नसियाँ– अजमेर, केसरिया नाथ मंदिर– ॠषभदेव, दिलवाड़ा के जैन मन्दिर–माउण्ट आबू, भीमाशाह मंदिर–माउण्ट आबू, पार्श्वनाथ जैन मंदिर– मेड़तारोड, श्री महावीर जी–महावीर जी, रणकपुर जैन मंदिर–पाली।

राजस्थान के प्रसिद्ध गुरूद्वारे

साहवा का गुरूद्वारा–चुरू, बुड्ढा जोहड गुरूद्वारा–रायसिंह नगर (गंगानगर), गुरूद्वारा – नरैना (जयपुर)

राजस्थान की प्रसिद्ध दरगाह – मकबरे

ख्वाजा मुद्दीन चिश्ती की दरगाह –अजमेर, बडेपीर, दरगाह, नागौर, नरहडशरीफ की दरगाह–चिड़ावा, झुन्झुनू, मीठेशाह की दरगाह–गागरोण (झालावाड़), पीर हाजि निजामुद्दीन की दरगाह–फतहपुर (सीकर) गुलाब खाँ का मकबरा–जोधपुर, शक्करबाबा शाह की दरगाह–नरहड़ (झुन्झुनू), कबीर शाह की दरगाह–करौली।

हवेलियाँ :–

राजस्थान में सेठ–साहूकारों तथा धन्ना सेठों ने अपने निवास के लिए भव्य व विशाल हवेलियों का निर्माण करवाया। इनके द्वारों पर कलात्मक गवाक्ष, बड़ा चौक, लम्बी पोल,चौबारे और बगल में कमरे होते है। ये हवेलियाँ कई मंजिली तथा दो–दो चोक वाली होती हैं। शेखावटी, ढूढ़ाढ, मारवाड़ तथा मेवाड़ राज्यों की हवेलियाँ स्थापत्य की दृष्टि से भिन्नता लिए हुए है। ये राजस्थान

की विरासत में अहम भूमिका निभा रही है। इनकी स्थापत्य कला प्रदेश का प्रतिनिधित्व करती है। राजस्थान सरकार भी, 1991 की भारत सरकार की हवेली होटल हेरिटेज की तर्ज पर प्राचीन हवेलियों को हेरिटेज होटल का दर्जा दे रही है। इससे राजस्थान की धरोहर के रूप में हवेलियों की पहचान बन पायेगी।

शेखावटी क्षेत्र की हवेलियाँ अधिक भव्य व कलात्मक हैं। जयपुर, रामगढ़, नवलगढ़,फतेहपुर, मुकुंदगढ़, मण्डावा, पिलानी, सरदार शहर, रतनगढ़, इत्यादि शहरों व कस्बों में खड़ी विशाल हवेलियाँ स्थापत्य शिल्प का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती हैं।

जैसलमेर की सालमसिंह की हवेली, नथमल की हवेली और पटवों की हवेली पत्थरों की जालीदार कटाई के कारण विश्व प्रसिद्ध है। करौली, भरपुर, कोटा में स्थित हवेलियों का कला पक्ष देखते ही बनता है। जोधपुर में हवेलियाँ अधिकांशतः सूनी पड़ी है। इसी तरह लक्ष्मणगढ़–शेखावाड़ी (सीकर) की भी अधिकांश हवेलियों के ताले लगे हैं जो अर्से से बन्द पड़ी हैं। राजस्थान सरकार की प्रेरणा से अब इन मध्यकालीन राजस्थानी हवेलियों का जीर्णोद्धार एवं भवन हिस्सों की मरम्मत की जा रही हैं। इससे राजस्थान की समृद्ध विरासत को बचाया जा सकता है। जयपुर शहर (हल्दियों का रास्ता) मे 1775 ई. में बनी हवेली सलीम–मंजिल इसी प्रकार हेरिटेज हवेली का रूप प्राप्त कर चुकी है। जर्मन पत्रकारों ने (30 नवम्बर, 2010) जयपुर दरबार के शाही हकीम मोहम्मद सलीम खाँ के वंशज नसीमुद्दीन खाँ प्यारे मियां को हवेली की सार–संभाल अच्छे ढंग से करने पर बधाई दी।

छतरियाँ

राजस्थान में, राजाओं, श्रेष्ठियों, संतो तथा वीर पुरूषों के मरणो परांत बने स्मृति स्थल न केवल स्थापत्य व इतिहास की दृष्टि से महत्व पूर्ण हैं, बल्कि प्रदेश की समृद्ध विरासत में शामिल है। जयपुर का गैटोर, जोधपुर का जसवंत थड़ा, कोटा का छत्रविलास बाग, जैसलमेर का बड़ा बाग, अलवर में मूंसी रानी की छतरी, बीकानेर में राव कल्याण मल की छतरी, करौली में गोपालसिंह की छतरी, बूंदी मे चौरासी खम्भों की छतरी, रामगढ़ में सेठों की छतरी, जैसलमेर में पालीवालों एवं राजाओं की छतरियाँ तत्कालीन इतिहास, कला एवं पुरातात्विक महत्व के विविध पक्षों को चिन्हित करते हैं। जहाँ एक ओर राजाओं, श्रेष्ठों एवं पुरूषों की छतरियों में सामान्यतः पदचिन्ह बने हैं वही शैवो और नाथों की छतरियों में धार्मिक चिन्ह शिवलिंग तथा खडाऊ बने हुए हैं। जालौर में नाथों की समाधियों की छतरी पर तोता बना हुआ है।

बावडियाँः–

राजस्थान में बावडियाँ भी अपने स्थापत्य शिल्प के लिए जानी जाती है। बावडियाँ गहरी, चौकोर तथा कई मंजिला होती हैं। ये सामूहिक रूप से धार्मिक उत्सवों पर स्नान के लिए भी प्रयोग में आती थी।

नीमराणा की बावड़ी (अलवर) का निर्माण राजा टोडरमल ने करवाया था। यह नौ मंजिला है। इसकी लम्बाई 250 फुट व चौड़ाई 80 फुट है। इसमें समय पर एक छोटी सैनिक टुकड़ी को छुपाया जा सकता था। इसी प्रकार से गंगरार (चित्तौड़) में 600 वर्ष पुरानी दो बावड़ी, बारॉ में कोतवाली परिसर में एक बावड़ी, बूंदी में रानीजी की बावड़ी, गुल्ला की बावड़ी, श्याम बावड़ी, व्यास जी की बावड़ी तथा मूर्ति शिल्प कला की दृष्टि से अनुपम है। रंगमहल, (सूरतगढ़) किसी समय यौद्येय गणराज्य की राजधानी था। पहले सिकन्दर के आक्रमण से हाँनि उठानी पड़ी, उसके बाद हूणों के आक्रमण से रंगमहल पूरी तरह नष्ट हो गया। उत्खन्न में यहाँ से एक

प्राचीन बावड़ी प्राप्त हुई हैं जिसमें 2) फुट लम्बी तथा 2) फुट चौड़ी ईटें लगी है। बावडी इस बात का प्रतीक है कि शको के भारत आगमन के बाद भी रंगमहल सुरक्षित था। क्योंकि बावड़ी बनाने की कला शक अपने साथ भारत लाये थे। रेवासा (सीकर) में भी दो बावड़ियाँ दर्शनीय हैं। इनकों परम्परागत जल सरंक्षण के रूप में काम लिया जा सकता है।

राजस्थान की प्रमुख झीलें:—

राजस्थान में अनेक झीलों के निर्माण का उल्लेख मिलता हैं। झीलों के निर्माण में राजा, महाराजाओं ने बहुत रूची दिखाई। इससे सिंचाई की व्यवस्था की जाती थी। प्राचीन काल में चन्द्रगुप्त मौर्य ने कृषि की सिंचाई हेतु सुदर्शन झील का निर्माण करवाया था। झीलों से प्रदेश की आर्थिक स्थिति मजबूत होती है। 1152 से 1163 के बीच अजमेर के पास वीसलसर नामक कृत्रिम झील निर्मित करने का उल्लेख मिलता है। पुष्कर में मीठे पानी की झील अत्यन्त प्राचीन हैं। इसके तट पर ब्रह्माजी का विख्यात प्राचीन मंदिर है। अलवर में तीन ओर से पहाड़ियों से गिरी सिलीसेढ नीली झील दर्शनीय है। उदयपुर को झीलों की नगरी कहां जाता है। यहाँ की पिछोला झील ऐतिहासिक है। इसमें कई टापू है। इनमें से एक टापू पर जग निवास नामक महल है। पिछोला झील के उत्तर में फतह सागर झील का निर्माण है। इस झील में आहाड़ नदी से 6 कि.मी. लम्बी नहर द्वारा जल लाया जाता है। इस झील के बीच स्थित टापू आकर्षण का केन्द्र है। उदयपुर से 51 कि.मी. दूर स्थित जयसमुद्र झील हैं जिसका निर्माण 1687—1691 ई. में महाराणा जयसिंह ने करवाया था। यह विश्व की दूसरे नम्बर की तथा ऐशिया की पहली सबसे बड़ी कृत्रिम झील है। इसकी लम्बाई 14,400 मीटर तथा चौड़ाई 9,600 मीटर है। इसमें 9 नदियों का पानी आता है। कोटा में नगर के मध्य छत्र बिलास नामक झील स्थित है, इस झील में जगमन्दिर नामक महल है। इसका निर्माण महाराव दुर्जनशाल ने करवाया था। आबू पर्वत पर स्थित नक्की झील के बारे में कहा जाता है कि इसे देवताओं ने अपने नाखून से खोद कर बनाया था। सर्दियों में इस झील का पानी जम जाता है। इस झील के चारों और सड़क है। एक किनारे मेढ़काकार चट्टान है जिसे टॉड़ रॉक कहते है।

अन्य ऐतिहासिक विरासतः—

ईसरलाटः—

जयपुर के आतिश अहाते में खडी़ ईसरलाट का निर्माण राजा जयसिंह के दूसरे पुत्र ईश्वरी सिंह ने 1749 ई. में करवाया था। मराठों की सेना को पराजित करने के उपलक्ष्य में विजय स्तम्भ के रूप मे इस भव्य इमारत का निर्माण करवाया गया था। इसे सरगा सूली भी कहते हैं।

जंतर—मंतर (वैधशाला):—

जयपुर के चन्द्र महल के पूर्व में जंतर—मंतर वेद्यशाला है इसका निर्माण राजा सवाई जयसिंह ने करवाया था। जयसिंह ने तीन नये यन्त्रों का भी आविष्कार किया जिनके सम्राट यन्त्र, जय प्रकाश यन्त्र और राम यन्त्र नाम रखे। इनमें सम्राट यन्त्र सबसे बड़ा व ऊँचा है। यह यन्त्र शुद्धतम समय बताने में सक्षम है। इससे मौसम का अदांजा भी लगाया जा सकता है। इस ऐतिहासिक राजस्थान की विरासत को यूनेस्को की वर्ल्ड हेरिटेज सूची में शामिल किया गया है, विश्व धरोहर घोषित कर दिया गया हैं। इस तरह राजस्थान का यह पहला और देश का 28 वाँ स्मारक बन गया है। राजस्थान के मुख्य मंत्री ने जंतर—मंतर को विश्व धरोहर की सूची में जोडा़ जाना देश व प्रदेश के लिए एक बड़ी उपलब्धि बताया है।

जंतर–मंतर के नाम के पीछे भी एक गूढ़ अर्थ छिपा है। जंतर का अर्थ होता है उपकरण और मंतर का अर्थ होता है गणना। जंतर–मंतर का अर्थ है कि वह उपकरण जिससे गणना की जाए।

संरक्षण की आवश्यकता एवं संरक्षण हेतु किये गये प्रयासः–

राजस्थान प्रदेश का गौरवशाली अतीत एवं समृद्ध सांस्कृतिक विरासत हैं। किले, अतुलनीय मंन्दिर स्थापत्य शिल्प, हमल एवं हवेलियों का चित्रांकन आदि इसका प्रमाण है। इन सब को सुरक्षित रखने का हमारा परम दायित्व है। इससे प्रदेश के पर्यटन को बढा़वा मिलेगा। आर्थिक स्थिति मजबूत होगी। रोजगार के अवसर बढ़ेगें। प्रदेश की नयी पीढ़ी को समृद्ध विरासत का उचित ज्ञानवर्धन होगा। विश्वपटल पर राजस्थान प्रदेश का नाम उभरेगा। राजस्थान की विशिष्टता बढ़ेगी। व्यापार में वृद्धि होगी जिससे देश को विदेशी मुद्रा प्राप्त होगी। राज्य में प्रति व्यक्ति आय बढ़ेगी। यातायात एवं परिवहन व्यवसाय को बढा़वा मिलेगा। अतः प्रदेश की विरासत की सुरक्षा एवं सरंक्षण अति आवश्यक है।विगत वर्षों में प्रदेश की सरकार ने इस ओर ध्यान देते हुए प्रदेश की बहुमुल्य विरासत के सरंक्षण हेतु अनेक प्रयास किये हैं। स्मारकों को बचाये रखने के लिए वित्त पोषण सरंक्षण योजना, व्यक्तियों एवं व्यवसायिक घरानों को राज्य की तरफ सहायता करना, तथा निजी स्मारकों को विकसित एवं सुरक्षित रख रखाव हेतु प्रोत्साहन करना आदि शामिल है। ऐतिहासिक धरोहरों के सरक्षंण और विकास हेतु अनिवासी राजस्थानियों को, राजस्थान सरकार द्वारा नाजुक स्मारकों की संरक्षण योजना मैं भागीदारी के लिए और किसी स्मारक को गोद लेने के लिए आमन्त्रित किया है। वस्तुतः यह एक सराहनीय प्रयास है। आभानेरी (बांदीकुई) एवं अर्थूणा जैसे अनेक ऐसे ऐतिहासिक स्मारक स्थल हैं जिनकी स्थिति दयनीय है जिनका शिल्प व स्थापत्य खजाना खेतों में बिखरा पड़ा हैं जो किसी आक्रान्ता द्वारा की गई कार्यवाही और करतूत की कहानी कह रहे हैं। उन्हें तुरन्त सरंक्षण की आवश्यकता है। यद्यपि राजस्थान में पर्यटन व पुरातत्व विभाग हैं जो विरासत सरंक्षण का काम करते हैं फिर भी इस क्षेत्र में ओर अधिक सजगता की आवश्यकता हैं।

पर्यटन एवं पुरातत्व विभाग द्वारा संरक्षण के प्रयास–

1956 ई. में स्थापित राजस्थान पर्यटन विभाग,विदेशी पर्यटकों को आकर्षित करने के लिये राजस्थान के महत्वपूर्ण महलों, किलों, हवेलियों को पर्यटन की दृष्टि से विकसित कर एक तरफ उनका संरक्षण कर रहा है तथा दूसरी तरफ राज्य के लिये राजस्व जुटा रहा है। आमेर महल राज्य का सर्वाधिक राजस्व जुटाने वाला पर्यटन स्थल है। इसके अतिरिक्त पर्यटन विभाग हवेली हैरिटेज होटलों का निर्माण करना, मेघाडेजर्ट सर्किट बनाना,रॉयल राजस्थान ऑन व्हील्स का प्रारम्भ,पैकेज टयूर,विरासत स्थलों पर मेलों का आयोजन करवाना तथा निजी क्षैत्र में होटल निर्माण को वित्तीय सहायता एवं प्रोत्साहन प्रदान कर राजस्थान विरासत के संरक्षण में अपनी अहम भूमिका निभा रहा है।

विरासत संरक्षण में पुरातत्व विभाग का सहयोग व योगदान भी सराहनीय है। 1950 ई. में स्थापित इस विभाग में 32 उच्च अधिकारी कार्यरत है।यह विभाग प्रदेश की पूरा सम्पदा व सांस्कृतिक धरोहर की खोज,सर्वेक्षण,प्रचार–प्रसार एवं उनके संरक्षण का कार्य करता है। इस विभाग ने प्रदेश में 222 स्मारक तथा पूरा स्थल घोषित किये है। दुर्गों , स्मारकों, हवेलियों, देवालयों,महलों आदि का यह विभाग विकास एवं रसायनिक उपचार भी करता है।विभाग अपनी पत्रिका 'रिसर्चर' के नाम से प्रकाशित करता है।

1955 में स्थापित राज्य अभिलेखागार भी साहित्यिक विरासत के संरक्षण एवं संवर्घन में कार्य कर रहा है।इसका मुख्यालय बीकानेर में है। विरासत के महत्वपूर्ण लेख, फरमान, निशान, मंसूर,परवाना,रूक्का,बहियाँ,अर्जियों आदि के संरक्षण में लगा हुआ है।
1955 ई. में प्राच्य विधा प्रतिष्ठान की स्थापना जोधपुर में हुई थी।यह संस्कृत , प्राकृत, अपभ्रंश, तथा पाली आदि भाषाओं में लिखे गये, वेद, धर्मशास्त्र,पुराण,दर्शन,ज्योतिष,गणित,आयुर्वेद, व्याकरण,तंत्र–मंत्र आदि की पाण्डुलिपियों के लेखन एवं संरक्षण का कार्य करता है। अरबी–फारसी शोध संस्थान (टोंक)भी फारसी–अरबी भाषा की दुर्लभ पुस्तकों के संरक्षण का काम करती है।

इसके अतिरिक्त राजस्थान साहित्य अकादमी उदयपुर,जयपुर कत्थक केन्द्र,राजस्थान संस्कृत अकादमी जयपुर तथा लोक संस्कृति शोध संस्थान चुरू आदि संस्थायें भी राजस्थान की साहित्यिक विरासत के संरक्षण का काम कर रही है। निजी विरासत के संरक्षण के कार्य में पूर्व राजा–महाराजा फाउन्डेशन समितियों के माध्यम से योगदान देते है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्नः–

1. भाषा विद्वानों के अनुसार राजस्थान की प्रमुख भाषा हैं–
(क) प्राकृत (ख) मरू
(ग) पिंगल (घ) अप्रभंश ( )

2. मरूभाषा को ही कहा जाता है–
(क) मरूवाणी तथा मारवाड़ी (ख) गुजराती तथा मारवाड़ी
(ग) मरूवाणी और गुजराती (घ) पिंगल और ब्रज ( )

3. राजस्थानी भाषा का सबसे समृद्ध साहित्य हैः–
(क) संत साहित्य (ख) जैन साहित्य
(ग) चारण साहित्य (घ) अपभ्रंश साहित्य ( )

4. उद्योतन सूरी की कृति हैः–
(क) वंशभास्कर (ख) बृहदकाथा मंजरी
(ग) कथासरित्सागर (घ) कुवलयमाला ( )

5. शुक्र नीति में कितने प्रकार के दुर्गो का उल्लेख हुआ है–
(क) पाँच (ख) सात
(ग) नौ (घ) दस ( )

6. किस क्षेत्र की हवेलियाँ अधिक भव्य व कलात्मक हैं?
(क) ढूढ़ाड क्षेत्र की (ख) मारवाड क्षेत्र की
(ग) अलवर क्षेत्र की (घ) शेखावाटी क्षेत्र की ( )

7. किस शहर को झीलों की नगरी कहा जाता है?
(क) जयपुर (ख) उदयपुर
(ग) जोधपुर (घ) बीकानेर ( )

8. किस झील को देवताओं ने नाखूनों से खोदकर बनाया था?
(क) नक्की झील को (ख) आनासागर झील को
(ग) पिछोला झील को (घ) सांभर झील को ( )

अति लघूत्तरात्मक प्रश्नः–

1. ख्यातों के बारे में बताइये।
2. 'फड' क्या होती है?
3. कला की दृष्टि से कहाँ के जैन मन्दिर उत्कृष्ट हैं।
4. त्रिपुरा सुन्दरी मन्दिर कहाँ है?
5. जैसलमेर की किन्ही तीन हवेलियों का उल्लेख करें।
6. ब्रह्मा मन्दिर (पुष्कर) के बारे में बताइये।
7. सिवाना दुर्ग को कूमट दुर्ग क्यों कहते हैं?

लघूत्तरात्मक प्रश्नः–

(1) महामारू शैली के बारे में बताइये।
(2) पार्वत दुर्ग की श्रेणी को स्पष्ट करें।
(3) काष्ठ प्रासाद किसने बनाया था। विशेषताएँ लिखिये।
(4) अर्पूणा मन्दिर शिल्प कला के बारे में आप क्या जानते हैं।
(5) सलीम हवेली के बारे में स्पष्ट करें।
(6) जयसमुद्र झील (उदयपुर) का निर्माण किस शासक ने करवाया था? और कब?
(7) कौन से काल को मन्दिर स्थापत्य कला की दृष्टि से स्वर्णयुग कहते हैं?

निम्बन्धात्मक प्रश्नः–

1. चारण साहित्य के बारे में समझाइये।
2. 'वन दुर्ग' की विशेषताएँ बताइये।
3. मुगल स्थापत्य का राजस्थानी महलों पर क्या प्रभाव पड़ा?
4. नीमराणा (अलवर) की बावड़ी पर विस्तार से प्रकाश डालिये।
5. जंतर–मंतर वैद्यशाला जयपुर को विश्व धरोहर की श्रेणी में रखा हैं। इसकी विशेषताएँ बताइये।

प्रोजेक्ट –

1. जब कभी भी किसी स्थान पर जायें तो वहां पर उपलब्ध स्थापत्यों का अवलोकन करें। अपने अवलोकनों पर शिक्षक से चर्चा करें और एक आलेख तैयार कर कक्षा में प्रस्तुत करें।
2. स्थापत्य के संदर्भ में अखबार, पत्र–पत्रिकाओं अथवा पुस्तकों में से कुछ सामग्री एकत्र कर स्क्रेप–बुक तैयार करें। अच्छा हो कि उन चित्रों पर विशेषताओं से सम्बिंधित कुछ टिप्पणी भी अंकित करें।

अध्याय – 5

राष्ट्रीय उद्यान एवं वन्यजीव अभयारण्य

राष्ट्रीय उद्यान एवं वन्यजीव अभ्यारण्यों की स्थापना का मूल उद्देश्य वन्य जीवों का संरक्षण एवं संवर्धन करना तथा प्राकृतिक पर्यावरण को बनाये रखना है। वन्य जीव हमारे जैव परिमण्डल का अभिन्न अंग है। वनों में निवास करने वाले जंगली–जानवर एवं अन्य जीव–जन्तु क्षेत्रीय पारिस्थितिकी की उपज होते हैं और प्राकृतिक पर्यावरण से सामंजस्य स्थापित कर न केवल स्वयं का अस्तित्व बनाए रखते हैं, अपितु पारिस्थितिकी तन्त्र को परिचालित करने में सहायक होते हैं। एक समय था जब वन्यजीव स्वच्छन्दता से विचरण कर प्राकृतिक वातावरण में रहते थे किन्तु जनंसख्या वृद्धि, औद्योगीकरण, शहरीकरण एवं मानव की स्वार्थपरता ने आज इनके अस्तित्व को संकट में डाल दिया है। यही नहीं, अपितु वनों के कटने एवं पर्यावरण के प्रदूषित होने के कारण इनके आवासीय परिवेश (Habitat) परिवर्तित हो रहे हैं, या समाप्त हो रहे हैं जिससे इनके अस्तित्व को खतरा उत्पन्न हो गया है। वन्य जीवों के विनाश में मानव का सर्वाधिक हाथ है, विशेषकर जब से इनसे प्राप्त वस्तुओं का व्यवसायीकरण होने लगा है, अनेक वन्य प्रजातियों का अस्तित्व संकट में आ गया है।

राष्ट्रीय उद्यान एवं अभ्यारण की संकल्पना एवं जैव विविधता संरक्षण में भूमिका

वन्य जीव प्राकृतिक धरोहर है तथा पारिस्थितिक दृष्टि से उनका अत्यधिक महत्व है। प्रत्येक वन्य प्रजाति आनुवांशिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है तथा अप्रतिस्थापनीय है जो यदि एक बार लुप्त हो गई तो उसे पुनः उत्पन्न करना असम्भव है। वन्य प्राणियों के विलुप्त होने का संकट आज गहराता जा रहा है इसके कारण जैव विविधता (Bio-diversity) पर संकट मंडराने लगे है। जैव–विविधता प्राकृतिक पर्यावरण का अभिन्न अंग है जिसमें प्राकृतिक वनस्पति, वन्य–जीव, पशु–पक्षी से लेकर कीट तथा सूक्ष्म जीव सम्मिलित होते हैं। इनका विलुप्त होना अथवा संकटग्रस्त होना आज विश्व में चिन्ता का विषय है। इसी कारण आज विश्व का प्रत्येक देश इनके संरक्षण के प्रति सचेष्ट है जिसमें भारत भी अग्रणी हैं। इसी उद्देश्य से राष्ट्रीय उद्यान एवं अभयारण्यों की संकल्पना का उदय हुआ जिनके माध्यम से विशिष्ट क्षेत्रों के प्राकृतिक स्वरूप को बनाये रखा जाता है जिससे वहाँ वन्य जीवों का संरक्षण हो सके।

जैव विविधता के संरक्षण में राष्ट्रीय उद्यानों एवं अभयारण्यों की भूमिका महत्वपूर्ण है क्योंकि इनके माध्यम से एक क्षेत्र विशेष में जीव–जन्तुओं को प्राकृतिक वातावरण में रहने का अवसर मिलता है जो वर्तमान में संकटग्रस्त होते जा रहे हैं। राष्ट्रीय उद्यान वे क्षेत्र है जिनके प्राकृतिक सौंदर्य अर्थात वनस्पति, वन्य–जीव आदि को राष्ट्रीय दृष्टि से महत्वपूर्ण मानते हुए विधि सम्मत निर्धारण कर उसे पूर्णतया संरक्षित रखा जाता है। इन क्षेत्रों में आखेट आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध होता है, यद्यपि पर्यटन हेतु इनका उपयोग किया जा सकता है। दूसरी ओर अभयारण्य वे क्षेत्र है जिनमें वन्यजीवों का शिकार करना अथवा पकड़ना वर्जित होता है। इसी क्रम में कुछ क्षेत्रों को आखेट निषिद्ध क्षेत्र भी घोषित किया जाता है जहाँ आखेट प्रतिबन्धित होता है। स्पष्ट है कि राष्ट्रीय उद्यान एवं अभयारण पारिस्थितिकी तंत्र को बनाये रखने हेतु प्रयास है जिससे जैव विविधता को संरक्षित किया जाता है। इनके महत्व के प्रमुख कारण हैं –

(i) वनों के विनाश को रोकना।

(ii) सुरक्षित एवं अनुकूल आवासीय स्थल को बनाये रखना जिससे वन्यजीवों को अनुकूल वातावरण मिल सके।

(iii) वन्य जीवों के शिकार पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाना।

(iv) वन्य जीवों की विलुप्त होती प्रजातियों का समुचित ज्ञान प्राप्त करना तथा उनके संरक्षण की विशेष व्यवस्था करना।

(v) वन्य जीवों का उचित प्रबन्ध करना।

(vi) वन्य जीवों के प्रति जनजागरण करना जिससे सामान्य जन इनकी सुरक्षा के प्रति सचेष्ट हो।

राजस्थान में वन्य जीव संरक्षण, राष्ट्रीय उद्यान एवं वन्य जीव अभयारण्य

राजस्थान के प्राकृतिक स्वरूप में भिन्नता होने के कारण यहाँ के विभिन्न प्रदेशों में अनेक प्रकार के वन्य जीव निवास करते हैं, किन्तु अन्य क्षेत्रों के समान राजस्थान में भी वन्य जीवों की संख्या में कमी हो रही है तथा अनेक प्रजातियों के विलुप्त होने का संकट गहराता जा रहा हैं। वन्य जीवों की कमी होने के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

(1) वनों के विस्तार में निरन्तर कमी आना अर्थात् वनोन्मूलन

(2) जलवायु परिवर्तन,

(3) वन भूमि का आवासीय, कृषि अथवा उद्योगों आदि में उपयोग से वन्य जीव आवास में कमी

(4) कतिपय बाँधों के आप्लावन क्षेत्र में वन्य जीवों की हानि

(5) पर्यावरण अवकर्षण,

(6) वन्य जीवों का अनाधिकृत शिकार, और

(7) निरन्तर अकाल से जल स्रोतों के सूखने के कारण अकाल मृत्यु।

निःसन्देह वन्य जीवों का संरक्षण आज की महती आवश्यकता है। केन्द्र एवं राज्य सरकार इसके प्रति सचेष्ट है। राजस्थान में 1951 में वन्य जीव एवं संरक्षण अधिनियम इस दिशा में पहला प्रभावशाली कदम था। सन् 1972 में भारतीय वन्य जीव संरक्षण एक्ट तथा 1986 में पर्यावरण संरक्षण एक्ट द्वारा वन्य जीवों की रक्षा हेतु कानून बनाए गए हैं, जो पर्याप्त प्रभावशाली हैं। अनेक स्वयं सेवी एवं सामाजिक संस्थाएँ भी इस दिशा में अच्छा कार्य कर रही हैं। विश्नोई समाज के लोग वन्य जीवों की रक्षा हेतु प्रतिबद्ध हैं। यही नहीं, अपितु वन्य जीवों के संरक्षण हेतु नेशनल पार्क, टाइगर प्रोजेक्ट, अभयारण्य एवं सुरक्षित क्षेत्र बनाए गए हैं। इनका संक्षिप्त विवरण यहाँ प्रस्तुत हैं–

राष्ट्रीय उद्यान/टाइगर प्रोजेक्ट

रणथम्भौर राष्ट्रीय उद्यान

सवाई माधोपुर के पास रणथम्भौर के चारों तरफ के क्षेत्र में फैला यह राष्ट्रीय उद्यान बाघ संरक्षण स्थल है। यह उद्यान 392 वर्ग किमी. में फैला हुआ है। भारतीय बाघ, बघेरे तथा रीछों को घूमते हुए यहाँ आसानी से देखा जा सकता है। सांभर, चीतल, नीलगाय, मगरमच्छ तथा अनेकों प्रकार के पक्षी यहाँ का अतिरिक्त आकर्षण हैं। ठण्डे मौसम में यहाँ पर्यटन का अच्छा समय माना जाता है। वैसे वर्षा के मौसम में भी यह बहुत सुहावना लगता है।

केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान

यह एशिया में पक्षियों का सबसे बड़ा प्रजनन क्षेत्र है, जो भरतपुर शहर में है। इसको **'घना'** के नाम से भी जाना जाता है। इसका क्षेत्रफल 29 वर्ग कि.मी. है, जिसमें 11 वर्ग कि.मी. में झील है इसमें 113 प्रजातियों के विदेशी प्रवासी पक्षी तथा 392 प्रजातियों के भारतीय स्थानीय पक्षियों को हर वर्ष देखा जा सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय पक्षी सफेद सारस (साइबेरियन क्रेन) यहाँ सर्दियों के महिने में निवास करते हैं। हंस, शक, सारिका, चकवा–चकवी, लोह, सारस, कोयल, धनेष तथा राष्ट्रीय पक्षी मोर यहाँ आसानी से देखे जा सकते हैं। जाड़ों में यहाँ भ्रमण करना अधिक उपयुक्त माना जाता है।

मुकन्दरा हिल्स राष्ट्रीय उद्यान (घोषित राष्ट्रीय उद्यान)

पूर्व में इस दर्रा अभयारण्य को अब राष्ट्रीय उद्यान घोषित किया गया है, यद्यपि इसकी अन्तिम अधिसूचना जारी होना शेष है। यह कोटा जिले में लगभग 200 वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में विस्तृत है। यहाँ प्रमुख रूप से चीतें, बाघ, सूअर तथा अन्य जंगली जीव एवं विभिन्न प्रकार के पक्षी है। मुकन्दरा की पहाड़ियों में स्थित यह सघन वन से युक्त है।

राष्ट्रीय मरु उद्यान, जैसलमेर

वर्ष 1981 में जैसलमेर में 'राष्ट्रीय मरु उद्यान' (National Desert Park) की स्थापना की गई। इसका प्रमुख उद्देश्य इस क्षेत्र की प्राकृतिक वनस्पति एवं करोड़ों वर्षों से भूमि के गर्भ में दबे जीवाश्मों को संरक्षण प्रदान करना है। अतः इसे जीवाश्म उद्यान (Fossil Park) भी कहा जाता है। इसका विस्तार लगभग 3162 वर्ग किमी. क्षेत्र में है, जो जैसलमेर–बाड़मेर जिलों में विस्तृत है। जीवाश्म एवं वनस्पति संरक्षण के अतिरिक्त यहाँ चिंकारा, चौसिंघा, काला हिरण एवं गोडावन को भी संरक्षण प्रदान किया जाता है।

सरिस्का वन्य जीव अभयारण्य (टाइगर प्रोजेक्ट सरिस्का)

अलवर से 35 किमी. दूर सरिस्का नामक स्थान पर स्वतन्त्रता से पूर्व ही एक पैलेस बनाकर वन्य जीव–अभयारण्य का प्रारम्भ कर दिया गया था। राज्य सरकार ने 1955 में इसे विधिवत अभयारण्य घोषित किया और 1990 में इसे राष्ट्रीय उद्यान (National Park) का स्तर दिया गया तथा यहाँ केन्द्र सरकार द्वारा **'बाघ परियोजना'** (Tiger Project) प्रारम्भ की गई। इस वन विहार में शेर, बघेरा, सांभर, चीतल, नीलगाय, जंगली सूअर, काला खरगोश, लंगूर के अतिरिक्त अनेक प्रकार के पक्षी भी निवास करते हैं। सरिस्का के सम्बन्ध में कटु सत्य यह है कि यहाँ के समस्त बाघ समाप्त हो गये थे। पुनः यहाँ बाघों की वृद्धि हेतु रणथम्भौर से कुछ बाघों को स्थान्तरित किया गया है जिससे यहाँ पुनः बाघ संवर्धन हो सके।

वन्य जीव अभयारण्य

(i) नाहरगढ़ अभयारण्य

यह राजस्थान जिले के ऐतिहासिक दुर्ग आमेर, नाहरगढ़ व जयगढ के चारों तरफ फैला हुआ है, जिसको 1982 में अभयारण्य बनाया गया था। यह 50 किमी. के वन क्षेत्र में फैला हुआ है। इस अभयारण्य के बनने के बाद वर्ष भर पानी की उपलब्धता व घने जंगलों के कारण बाघ अब पुनः इस क्षेत्र में रहने लगे हैं। इसके अतिरिक्त अन्य वन प्राणी जिसमें प्रमुखतः लंगूर, सेही व पाटागोह आदि यहाँ दिखाई देते हैं।

(ii) जमवारामगढ़ अभयारण्य

जयपुर जिले के प्रसिद्ध शिकारगाह रामगढ़ को भी 1982 में अभयारण्य घोषित किया गया था। यह 360 किमी. के वन क्षेत्र में फैला हुआ है। साधारण रूप में यहाँ बघेरा, जरक, जंगली सूअर, जंगली बिल्ली, भेड़िया, नीलगाय व सांभर आदि वन्य जीव मिलते हैं।

(iii) तालछापर कृष्ण मृग अभयारण्य

राज्य के उत्तरी जिले चूरु में स्थित है। चूरू जिले के सुजानगढ़ कस्बे से 12 किमी. दूर बिकानेर–जयपुर राजमार्ग पर स्थित है। यह 820 हैक्टेयर क्षेत्र में फैला है। यहाँ सिर्फ काले हिरण ही मिलते हैं, जिनको 500 पशुओं तक के झुण्ड में देखा जा सकता है।

(iv) जयसमन्द अभयारण्य

राज्य के दक्षिणी क्षेत्र का सबसे मनोरम अभयारण्य है, जो कि उदयपुर से 50 किमी दूरी पर जयसमन्द झील के किनारे पहाड़ियों के बीच बसा हुआ है। यहाँ रीछ, जंगली सूअर, तेंदुआ, नीलगाय आदि पशु के अतिरिक्त तीतर सहित अनेक पक्षियों का संरक्षण स्थल है।

(v) सीतामाता वन्य जीव अभयारण्य

प्रतापगढ़ जिले में स्थित वन्य जीव अभयारण है, जिसकी स्वीकृति राज्य सरकार ने कुछ समय पहले ही दी है। यह राजस्थान के दक्षिणी भाग में महत्व रखता है। यहाँ पर अनेक प्रकार के वन्य पशुओं तथा पक्षियों को संरक्षण देने का प्रावधान है।

(vi) बस्सी अभयारण्य

यह अभयारण प्रतापगढ़ से 25 कि.मी. दूर है तथा 153 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में फैला हुआ है। अरावली एवं विन्ध्याचल पर्वतमालाओं के मिलन स्थल पर स्थित वन्य प्राणियों की सुरक्षा के लिए सन् 1988 में इसे अभयारण घोषित किया गया। यहाँ का विशेष आकर्षण है चौसिंघा, सैण्डग्राउज, बघेरा व जंगली बिल्ली नामक जीवों और मगरमच्छ देखना।

(vii) फूलवाड़ी की नाल अभयारण्य

अरावली पर्वत मालाओं के मध्य उदयपुर जिले के पिछड़े एवं शान्त क्षेत्र फुलवाड़ी की नाल में स्थित यह अभयारण है, इसका क्षेत्र 511 वर्ग कि.मी. है। यह एक बहुत सघन वन में स्थित है। इसमें बाघ, बघेरा, सांभर और चीतल जीवों के साथ–साथ अनेक प्रजातियों के पक्षी देखे जा सकते हैं।

(viii) भैंसरोड़गढ़ अभयारण्य

यह 229 वर्ग कि.मी. में फैला है, इस अभयारण को 1983 में घोषित किया गया। चित्तौड़गढ़ जिले के पर्वतीय क्षेत्र भैंसरोड़गढ़ के निकट इसमें निवास करने वाले वन्य जीवों के सुरक्षा के उद्देश्य से इसे बनाया गया। उस समय से यहाँ वन्य जीवों की संख्या लगातार बढ़ रही है। सैकड़ों प्रकार के पक्षियों के अतिरिक्त बघेरा, लक्कड़बग्घा, नीलगाय, जंगली सूअर, चीतल, चिंकारा, गीदड़ व लोमड़ी आदि वन्य जीव मिलते हैं।

(ix) सज्जनगढ़ अभयारण्य

अरावली पर्वत श्रृंखला के सघन वन क्षेत्र में उदयपुर के प्राचीन आखेट स्थल को 1987 में यह नाम दिया गया था। साधारण रूप से इसमें शेर, कृष्णमृग, नीलगाय, सांभर, चीतल, लंगूर, जंगली सूअर व चिंकारा वन्य जीव देखे जा सकते हैं। यह 519 वर्ग कि.मी. में फैला हुआ है।

(x) जवाहर सागर वन्य विहार

यह वन विहार राज्य के पूर्वी जिले कोटा में कोटा भाहर से 30 कि.मी. दूरी पर स्थित है। यहाँ मगरमच्छ, हिरण, खरगोश तथा अनेक प्रकार के पक्षी मिलते है। यह हर मौसम में दर्शनीय स्थल है।

(xi) शेरगढ़ अभयारण्य

बांरा जिले का शेरगढ़ वन सर्वाधिक बाघों के लिए विख्यात है। सन् 1983 में इसको शेरगढ़ अभयारण का नाम देकर संरक्षित किया गया। यह मात्र 99 वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में फैला हुआ है, जिसमें वन तथा वन्य जीवों को सुरक्षा प्रदान की जाती है। आजकल बाघ तो जंगल से लुप्त हो गये हैं, परंतु आज भी बघेरा, रीछ, लकड़बग्घा, चीतल, सांभर तथा अजगर जीव यहाँ देखे जा सकते हैं।

(xii) टाड़गढ़ रावली अभयारण्य

यह अभयारण राज्य के तीन जिलों क्रमशः उदयपुर, पाली तथा अजमेर जिलों के सीमान्त क्षेत्र में फैला हुआ है, जिसका क्षेत्रफल 512 वर्ग कि.मी. है। सन् 1983 में मध्य राजस्थान के ऐतिहासिक स्थल टाडगढ़ को अभयारण्य घोषित किया गया था। इसमें बघेरा, जरख, रीछ, गीदड़, बन्दर तथा नीलगाय आदि वन्य जीव निवास करते हैं।

(xiii) चम्बल अभयारण्य

यह अभ्यारण 280 वर्ग कि.मी. के जल क्षेत्र में फैला हुआ है। दक्षिण पूर्वी राजस्थान में चम्बल नदी पर राणा प्रताप सागर से चम्बल नदी के बहाव तक इसका फैलाव है। इस पानी में मगरमच्छ तथा घड़ियाल प्रकृति की गोद में अपना जीवन–यापन एवं वंश समृद्धि करते हैं। इसका उद्देश्य घड़ियालों की प्रजाति को संरक्षित करना तथा उनकी संख्या में वृद्धि करना है।

(xiv) रामगढ़ विषधारी अभयारण्य

बूँदी से यह अभयारण 15 कि.मी. दूर है। यह अभयारण 307 वर्ग कि.मी. के बीच फैला हुआ है। बहुत पुराने समय से इस स्थान को बाघ–बघेरों का घर माना जाता है। बाघ–बघेरों के अलावा इसमें जरख, रीछ, गीदड़, नीलगाय, चीतल, चिंकारा, जंगली बिल्ली, भेड़िया, लोमड़ी, नेवला तथा जंगली सूअर आदि जीव देखे जा सकते हैं।

(xv) बन्ध बरेठा अभयारण्य

यह अभयारण्य केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान भरतपुर से 50 कि.मी. दूर है। पुराने समय में अरावली पर्वतमालाओं में बहती नदियों को रोककर बरेठा स्थान पर एक बाँध बनाया गया था। इसका क्षेत्रफल 193 वर्ग कि.मी. है तथा अनेक प्रजातियों के वन्य जीव व पक्षी सुरक्षित है।

(xvi) सवाई मानसिंह अभयारण्य

रणथम्भौर राष्ट्रीय उद्यान से लगा हुआ यह वन क्षेत्र, जिसको 1984 में अभयारण्य के रूप में नाम दिया गया था, 103 वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में फैला हुआ है। रणथम्भौर में जब उसकी क्षमता से अधिक बाघ हो जायेंगे, तब उनको इन अभयारण में रखा जायेगा। अब भी यहाँ बाघ, बघेरा, नीलगाय, चीतल तथा सांभर जीवों को देखा जा सकता है।

(xvii) कैलादेवी अभयारण्य

करौली के पास यह अभयारण्य 376 वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में फैला है, जिसका नामकरण 1983 में किया गया था। यह पर्वतीय सघन वन क्षेत्र में स्थित है। रणथम्भौर के जंगलों के पास

होने के कारण वहाँ के बाघों की बढ़ती संख्या को यहाँ भविष्य में रखना सम्भव हो पायेगा। वर्तमान में यहाँ पर बघेरा, रीछ, जरख, सांभर, चीतल तथा नीलगाय आदि वन्य जीव मिलते हैं।

(xviii) रामसागर वन विहार अभयारण्य

यह स्थल राजस्थान के पूर्वी जिले धौलपुर में आगरा–बम्बई, राष्ट्रीय राजमार्ग पर धौलपुर से 10 कि.मी. दूर है। झील के किनारे बसा होने के कारण पानी के पास रहने वाले पक्षी भी मिलते है। यहाँ पर अनेक वन्य जीव जैसे जंगली सूअर, सांभर, नीलगाय, चीतल तथा तीतर, मोर देखे जा सकते हैं। यह हर मौसम में दर्शनीय स्थल है।

(xix) आबू पर्वत अभयारण्य

राज्य के पश्चिमी जिले सिरोही के माउण्ट आबू की पर्वत मालाओं के बीच स्थित यह बहुत ही सुन्दर दर्शनीय स्थल है, जो कि 112 वर्ग कि.मी. में फैला हुआ है। यह आबू रोड़ से 20 कि.मी. दूर है। यहाँ पर रीछ, सूअर, सांभर, नीलगाय, खरगोश, जंगली मुर्गा, तीतर तथा अनेक पक्षी मिलते हैं।

(xx) कुम्भलगढ़ राणकपुर अभयारण्य

यह अभयारण्य राज्य के दक्षिणी जिले उदयपुर में आता है, जो अरावली पर्वतमालाओं में तथा उससे लगे मैदानी भागों में स्थित है। यह उदयपुर से 80 कि.मी. दूर कुम्भलगढ़ कस्बे के पास है। यहाँ पर तेंदुआ, भालू, सांभर, नीलगाय, चीतल व जंगली मुर्गा देखने को मिलते हैं। इसके पास में राणकपुर जैन मन्दिर तथा कुम्भलगढ़ का किला है, जो अति दर्शनीय स्थल है।

(xxi) सुन्धामाता भालू अभयारण्य

राजस्थान में जालोर व सिरोही के बीच जसवन्तपुरा क्षेत्र के सुन्धामाता इलाके में भालुओं का पहला अभयारण्य (कंजर्वेशन रिजर्व) बनाने की घोषणा 20 जुलाई, 2010 को दी गई। 4468 वर्ग कि.मी. क्षेत्र इसके लिए निर्धारित किया गया है। यहाँ लगभग 300 भालू है।

आखेट निषिद्ध क्षेत्र

वन्य जीव संरक्षण की दिशा में राजस्थान में आखेट निषिद्ध क्षेत्रों का निर्धारण भी किया है।

वन्य जीव सुरक्षा अधिनियम 1972 की धारा 37 के अनुसार ऐसे क्षेत्रों को आखेट निषिद्ध क्षेत्र घोषित किया गया है, जिनमें रहने वाले वन्य प्राणियों की सुरक्षा और विकास किया जाये तथा इन जीवों का शिकार वर्जित है। राजस्थान में 26720 वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में 33 आखेट निषिद्ध क्षेत्र हैं :–

- **जयपुर** में दो (सन्थाल और महला)
- **जोधपुर** में सात (डोली, गुडा, विश्नोई, जम्मेव वरजी, ढेचू, साथिन, लोहवट और फीट कासनी)
- **बीकानेर** में पाँच (जोड़वीर, वैष्णे, मुकाम, बज्जू और दी यात्रा)
- **अजमेर** में तीन (तिलोरा, सोखलिया और गंगवाना)
- **अलवर** में दो (जोहड़िया व बर्डोद)
- **नागौर** में दो (रोतू और जरोदा)
- **जैसलमेर** में दो (रामदेवरा व उज्जला)

- **उदयपुर** में एक (बाकदरा)
- **चित्तौड़गढ़** में एक (मैनाल)
- **कोटा** में एक (सौरसन)
- **बूँदी** में एक (कनक सागर)
- **बाड़मेर** में एक (धोरी मन्ना)
- **पाली** में एक (जवाई बाँध)
- **चूरू** में एक (सम्वतसर कोटसर)
- **जालौर** में एक (सांचोर)
- **टोंक** में एक (रानीपुरा)
- **सवाई माधोपुर** में एक (कंवालजी)

मृगवन

राजस्थान में वन्य जीवों के संरक्षण में एक नवीन कदम हिरण (मृग) के लिये 'मृगवन' क्षेत्र निर्धारित कर उठाया गया है। वर्तमान में राज्य में निम्नलिखित मृगवन है–

(i) अशोक विहार मृगवन

जयपुर शहर के अशोक विहार के बीच 12 हैक्टेयर के एक भूखण्ड को अशोक विहार मृगवन के नाम से विकसित किया है। इसके पास ही 7500 वर्ग मीटर में एक और क्षेत्र विकसित किया जा रहा है। इसमें 24 हिरण तथा 8 चिंकारा संरक्षण हेतु छोड़े गए हैं।

(ii) माचिया सफारी पार्क

जोधपुर के कायलाना झील के पास यह 1985 में शुरू किया गया था। इसका क्षेत्रफल 600 हैक्टेयर के लगभग है। इसमें भेड़िया, लंगूर, सेही, मरू बिल्ली, नीलगाय, काला हिरण, चिंकारा नामक वन्य जीव तथा अनेक पक्षी देखे जा सकते हैं।

(iii) चित्तौड़गढ़ मृगवन

प्रसिद्ध चित्तौड़गढ़ दुर्ग के दक्षिणी किनारे पर इस मृगवन को 1969 में स्थापित किया गया था, जिसमें नीलगाय, चीतल, चिंकारा एवं काला हिरण आदि वन्य जीव रखे गए है।

(iv) पुष्कर मृगवन

पावन तीर्थस्थल पुष्कर के पास प्राचीन पंचकुण्ड के निकट पहाड़ी क्षेत्र में यह मृगवन विकसित किया गया है। विकास के बाद 1985 में इसमें कुछ हिरण छोड़े गए थे, जिनको आज भी सुविधापूर्वक देखा जा सकता है।

(v) संजय उद्यान मृगवन

लगभग 10 हैक्टेयर क्षेत्रफल में शाहपुरा (जिला जयपुर) के निकट राष्ट्रीय राजमार्ग पर यह उद्यान विकसित किया गया है। इसको ग्रामीण चेतना केन्द्र के रूप में विकसित किया गया है। इसमें चिंकारा, नीलगाय, चीतल आदि वन्य जीव रहते है।

(vi) सज्जनगढ़ मृगवन

यह उदयपुर के सज्जनगढ़ दुर्ग के पहाड़ी क्षेत्र में विस्तृत है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि राज्य में वन्य जीवों के संरक्षण को महत्व दिया जा रहा है। वन्य जीवों के संरक्षण एवं उनके आवासों (Habitat) को सुरक्षित रखने हेतु राज्य सरकार ने कुछ अन्य महत्वपूर्ण कदम उठाये हैं, जो निम्नलिखित है—

- वन्य जीवों के प्रबन्धन हेतु टास्क फोर्स की रिर्पोट की क्रियान्विति करने हेतु एक कमेटी गठित की गई है।
- सम्पूर्ण प्रदेश में वन्य जीवों का आकलन भारतीय वन्य संस्थान, देहरादून से कराया गया है।
- काले हिरणों हेतु प्रसिद्ध तालछापर अभयारण्य के समग्र विकास हेतु एक योजना तैयार कर हैबिटेट सुधार हेतु कार्य किया जा रहा है।
- रणथम्भौर एवं सरिस्का बाघ परियोजना क्षेत्रों में 'रैड अलर्ट' घोषित कर उनकी सीमाओं को सील कर सुरक्षा गार्ड लगाये गए हैं, जिससे यहाँ अनाधिकृत शिकार रोका जा सके।
- बाध संरक्षण की दिशा में एक विशेष कदम 'टाइगर कॉरिडोर' बनाना है। इस योजना के बाद रणथम्भौर अभयारण के टाइगर गांधी सागर अभयारण तक विचरण कर सकेंगे। 'टाइगर कॉरिडोर' के अन्तर्गत रणथम्भौर के बाघ सवाई मानसिंह अभयारण होते हुए बूंदी के क्वांलजी, रामगढ़ अभयारण धने वर, जवाहर सागर, दरा अभयारण पहुँचेंगे। यहाँ से मध्य प्रदेश के जंगलों तक जा सकेंगे।
- राज्य में ग्रासलैण्ड पारिस्थितिकीय एवं जीन पूल संरक्षण हेतु 'प्रोजेक्ट बस्टर्ड' प्रारम्भ करने की योजना है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि वन्य जीवों के संरक्षण हेतु सरकार सदैव से सचेष्ट रही है किन्तु सरकारी प्रयत्नों के साथ जन सहयोग अति आवश्यक है। जन सहयोग विशेषकर राष्ट्रीय उद्यानों और अभयारणों के निकटवर्ती क्षेत्रों के निवासियों के सहयोग से वन्य जीवों के शिकार पर रोक लगाई जा सकती है। हम में से प्रत्येक व्यक्ति को यह दायित्व स्वीकार करना चाहिए कि वे वन्य जीवों की रक्षा करेंग। सरकार और जनता के सहयाग से ही वास्तविक वन्य जीव संरक्षण सम्भव है। इसमें स्वयंसेवी संस्थाओं की भी सक्रीय भागीदारी होनी चाहिए। यदि वन और वन्य जीव संरक्षित रहेंगे तो पारिस्थितिकी तन्त्र सक्रीय रहेगा और पर्यावरण पर इसका सकारात्मक प्रभाव होगा। विद्यार्थी वर्ग का भी यह दायित्व है कि वे न केवल स्वयं अपितु अपने परिवार जनों तथा समाज को इस सम्बन्ध में जागृत कर वन्य जीव संरक्षण में सक्रीय भूमिका निभायें।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राष्ट्रीय उद्यानों की स्थापना का उद्देश्य है—
   (क) ऐतिहासिक स्थलों की रक्षा करना (ख) मृदा संरक्षण
   (ग) वन्य जीव संरक्षण (घ) जल संरक्षण ( )
2. रणथम्भौर राष्ट्रीय उद्यान किस जिले में स्थित है—
   (क) कोटा (ख) सवाई माधोपुर
   (ग) अलवर (घ) भरतपुर ( )

3. केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान अन्य किस नाम से जाना जाता है–
   (क) सरिस्का (ख) घना
   (ग) मरू उद्यान (घ) मृग उद्यान ( )

4. राष्ट्रीय मरू उद्यान को किस अन्य नाम से जाना जाता है–
   (क) जीवाश्म उद्यान (ख) केवलादेव
   (ग) सरिस्का (घ) मुकन्दरा ( )

5. सरिस्का वन्य जीव अभयारण्य का प्रारम्भ किस योजना के नाम से किया गया–
   (क) मृग संरक्षण योजना (ख) बाघ परियोजना
   (ग) पक्षी विहार योजना (घ) वन संरक्षण योजना ( )

6. काला हिरण किस अभयारण्य में मिलते हैं–
   (क) सीतामाता (ख) जयसमन्द
   (ग) सज्जनगढ़ (घ) तालछापर ( )

7. चम्बल अभयारण्य किसके लिए प्रसिद्ध है–
   (क) घड़ियाल के लिए (ख) हिरणों के लिए
   (ग) चीतल के लिए (घ) चिंकारा के लिए ( )

8. बन्ध–बारेठा अभयारण्य किस जिले में है–
   (क) अलवर (ख) भरतपुर
   (ग) जयपुर (घ) जोधपुर ( )

9. राजस्थान में कुल कितने आखेट निषिद्ध क्षेत्र है–
   (क) 43 (ख) 33
   (ग) 23 (घ) 53 ( )

10. माचिया सफारी पार्क किस जिले में स्थित है–
   (क) भरतपुर (ख) जोधपुर
   (ग) जैसलमेर (घ) अजमेर ( )

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. जैव विविधता से क्या आशय है?
2. राष्ट्रीय उद्यान किसे कहते है?
3. अभयारण्य किसे कहते है?
4. केवलादेव अभयारण्य क्यों प्रसिद्ध है?
5. राष्ट्रीय मरू उद्यान को जिवाश्म उद्यान क्यों कहते हैं?
6. रामगढ़ विशधारी अभयारण्य कहाँ स्थित है?
7. सुन्धामाता अभयारण्य किसके लिये प्रसिद्ध है?
8. राजस्थान में कितने मृगवन है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान की स्थिति एवं विशेषता का वर्णन कीजिए।
2. सरिस्का वन्य जीव अभयारण्य पर टिप्पणी लिखिये।
3. तालछापर कृष्णमृग अभयारण्य का वर्णन कीजिये।

4. फूलवाड़ी की नाल अभयारण्य का वर्णन कीजिये।
5. कैलादेवी अभयारण्य का वर्णन कीजिए।
6. आखेट निषिद्ध क्षेत्र से क्या तात्पर्य है? किन्हीं दो जिलों के आखेट निषिद्ध क्षेत्रों के नाम लिखिये।
7. पुष्कर एवं अशोक विहार मृगवन का वर्णन कीजिये।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. जैव विविधता से आप क्या समझते है? राष्ट्रीय उद्यानों की जैव विविधता संरक्षण में क्या भूमिका है?
2. राजस्थान के किन्हीं पाँच अभयारण्यों का वर्णन कीजिए।
3. राजस्थान के मृगवनों का वर्णन कीजिये।
4. राजस्थान के आखेट निषिद्ध क्षेत्रों का विवेचन कीजिए।
5. राजस्थान के राष्ट्रीय उद्यानों एवं टाइगर प्रोजेक्ट का वर्णन कीजिए।

□□□

अध्याय –6

पशुधन एवं डेयरी विकास

राजस्थान की अर्थव्यवस्था मुख्य रुप से कृषि कार्यों एव पशुपालन पर ही निर्भर करती है तथा कृषि के उपरान्त पशुपालन को ही जीविकापार्जन का साधन माना जा सकता है।

राजस्थान का पशुधन – राजस्थान के पशु–सम्पदा का विशेष रुप से आर्थिक महत्व माना गया है। राज्य के कुल क्षेत्रफल का 61 प्रतिशत मरुस्थलीय प्रदेश है जहाँ जीविकोपार्जन का मुख्य साधन पशुपालन ही है। इससे राज्य की शुद्व घरेलू उत्पत्ति का महत्वपूर्ण अंश प्राप्त होता है। राजस्थान में देश के पशुधन का 7 प्रतिशत था भेड़ों का 25 प्रतिशत अंश पाया जाता है।

भारतीय संदर्भ में पशुधन की महत्ता को दर्शाने के लिए नीचे कुछ आँकड़े दिए गए है जो इस प्रकार है।

(i) राजस्थान में देश के कुल दुग्ध उत्पादन (Milk Production)का लगभग 10 प्रतिशत अंश होता हैं

(ii) राज्य के पशुओं द्वारा भार–वहन शक्ति (draft power) 35 प्रतिशत है।

(iii) भेड़ के माँस में राजस्थान का भारत में अंश 30 प्रतिशत है।

(iv) ऊन में राजस्थान का भारत में अंश 40 % है।

(v) वर्तमान में राज्य में भेंड़ों की संख्या समस्त भारत की संख्या का लगभग 25 % है।

राजस्थान की अर्थव्यवस्था के बारे में यह कहा जाता है कि यह पूर्णत कृषि पर निर्भर करती है तथा कृषि मानसून का जुआ माना जाती है। इस स्थिति में पशुपालन का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है। राजस्थान में पशुधन का महत्व निम्नलिखित तथ्यों से देखा जा सकता है।

(1) राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में योगदान :– राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में पशुधन का योगदान लगभग 9%है।

(2) निर्धनता उन्मूलन :– निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम में भी पशु–पालन की महत्ता स्वीकार की गई है समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (IRDP) में गरीब परिवारों को दुधारु पशु देकर उनकी आमदनी बढ़ाने का प्रयास किया गया था। लेकिन इसके लिए चारे व पानी की उचित व्यवस्था करनी होती है तथा लाभान्वित परिवारों को बिक्री की सुविधाएं भी प्रदान करनी होती है।

(3) रोजगार–सृजन :– पशु–पालन में ऊँची आमदनी व रोजगार की संभावनाएँ निहित है। पशुओं की उत्पादकता को बढ़ाकर आमदनी में वृद्धि की जा सकती है। राज्य के शुष्क व अर्द्व–शुष्क भागों में कुछ परिवार (विशेषतया लघु व सीमान्त कृषक तथा खेतिहर श्रमिक) काफी संख्या में पशु–पालन करते है और इनका यह कार्य वंश–परम्परागत चलता आया है। इन क्षेत्रों में शुद्व घरेलू उत्पत्ति का ऊँचा अंश पशुपालन से सृजित होता है। इसलिए मरु अर्थव्यवस्था मूलतः पशु–आधारित है।

(4) डेयरी विकास :– पशुधन की सहायता से ग्रामीण दुग्ध उत्पादन को शहरी उपभोक्ताओं के साथ जोड़कर शहरी क्षेत्र की दूध आवश्यकता की आपूर्ति तथा ग्रामीण क्षेत्र की आजीविका की व्यवस्था होती हे। राजस्थान देश के कुल दुग्ध उत्पादन का 10 प्रतिशत उत्पादन करता है। राज्य में 1989–90 में 42 लाख टन दूध के उत्पादन हुआ जो बढ़कर 2003–04 में 80.5 लाख टन हो गया है।

(5) परिवहन का साधन :– राजस्थान में पशुधन में भार वहन करने की अपार क्षमता है। बैल, भैंसे, ऊंट, गधे, खच्चर आदि कृषि व कई परियोजनाओं में बोझा ढोने व भार खींचने के काम करते है। देश की कुल भार वहन क्षमता का 35 प्रतिशत भाग राजस्थान के पशु वहप करते है। देश में रेल व ट्रकों द्वारा कुल 30 करोड़ टन माल की ढुलाई होती हे जबकि बैलगाडियों से आज भी 70 करोड़ टन माल ढोया जाता है।

(6) खाद की प्राप्ति :– पशुपालन के द्वारा कृषि के लिए खाद की प्राप्ति भी होती है। इस समय जानवरों के गोबर से निर्मित ''वर्मी कम्पोस्ट'' खाद्य अत्यधिक प्रचलन में है।

(7) चमड़ा एवं अन्य हड्डियों की प्राप्ति भी जानवरों से होती है।

राजस्थान में पशुधन की संरचना :– राज्य में विभिन्न प्रकार के पशु पाए जाते है। जिनकी संख्या को नीचे वाली तालिका में दर्शाया गया है।

2003 में विभिन्न प्रकार के पशुओं की संख्या

गौवंश अथवा गाय–बैल	1.09 करोड़
भैंस जाति के	1.04 लाख
भेड़ जाति के	1.00 करोड़
बकरी–जाति के	1.68 करोड़
शेष ऊँट, घोड़े, गधे, सूअर आदि	0.10 करोड़ (अथवा 10 लाख)

इस प्रकार संख्या की दृष्टि से पशुओं में गाय–बैल (Cattle) तथा भेड़–बकरी प्रमुख है

राजस्थान में उपलब्ध विभिन्न जानवरों जैसे गाय, बकरी, भेंड आदि का वर्णन निम्नलिखित है।

1. राजस्थान में गाय :– गाय पशुपालन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। तथा इसकी निम्नलिखित नस्ले राजस्थान में पाई जाती है। कुल पशु–सम्पदा में गौ–वंश का 22.8 प्रतिशत है।

(i) नागौरी (Nagauri)

इसका उत्पत्ति क्षेत्र ''सुहालक'' प्रदेश नागौर है।

इस किस्म के बैल अधिकतर जोधपुर, नागौर तथा नागौर से लगने वाले पड़ौसी जिलों में पाये जाते हैं। इस नस्ल की गायें कम दूध देती है।

(ii) कांकरेज (Kankrej)

राजस्थान के दक्षिण–पश्चिमी भागों बाड़मेर, सिरोही तथा जालौर जिलों में पाई जाती है। इस नस्ल की गायें प्रतिदिन 5 से 10 लीटर दूध देती है।

इस नस्ल के बैल भी अच्छे भार वाहक होते हैं। अतः इसी कारण इस नस्ल के गौ–वंश को ''द्वि–परियोजनीय नस्ल'' कहते है।

(iii) थारपारकर (Tharparkar)

इसका उत्पत्ति स्थल मालाणी (बाड़मेर) है। यह गायें अत्यधिक दूध के लिए प्रसिद्ध है, इसे स्थानीय भागों में ''मालाणी नस्ल'' के नाम से जाना जाता है।

(iv) राठी (Rathi)

यह राजस्थान कें उत्तर–पश्चिमी भागों में श्रीगंगानगर, बीकानेर, जैसलमेर में पायी जाती है। इस नस्ल की गायें अत्यधिक दूध के लिए प्रसिद्ध है, किन्तु इस नस्ल के बैलों में भार वहन क्षमता कम होती है।

(v) गिर (Gir) यह गुजरात के सौराष्ट्र के गिर बन में रहने वाले पशु है। यह पशु दक्षिणी–पूर्वी भाग (अजमेर, चित्तौड़गढ़, बूंदी, कोटा आदि जिलों) में सर्वाधिक पाये जाते हैं।

2. भेंड़ :– देश की कुल भेंडों की लगभग 25 प्रतिशत राजस्थान में पाई जाती हें राज्य के लगभग 2 लाख परिवार पशुपालन कार्यों में संलग्न है।

भेंड की प्रमुख नस्ले इस प्रकार है।

1. **जैसलमेरी :–** यह जैसलमेर में पाई जाती है।
2. **नाली** :– हनुमानगढ़, चूरु, बीकानेर था झुँझुनू जिलों में पाई जाती है। ये अधिक ऊन के लिए प्रसिद्ध है।
3. **मालपुरी :–** इसे ''देशी नस्ल'' भी कहा जाता है।
   यह जयपुर, दौसा, टोंक, करौली तथा सवाई माधोपुर जिला में पाई जाती है।
4. **मगरा :–** यह प्रतिवर्ष औसतन 2 किलोग्राम ऊन देती है।
   इस नस्ल की भेड़ अधिकांशतः जैसलमेर, बीकानेर, चूरु, नागौर आदि में पायी जाती है।
5. **पूगल :–**इनका उत्पत्ति स्थान बीकानेर की तहसील ''पूगल'' होने के कारण इस का नाम पूगल हो गया।
6. राजस्थान की कुल भेड़ों में सर्वाधिक भेड़ें मारवाड़ी नस्ल (लगभग 45 प्रतिशत) की है।
   ये राजस्थान में सर्वाधिक जोधपुर, बाड़मेर, पाली, दौसा, जयपुर आदि जिलों में पाई जाती है।
7. **चोकला या शेखावाटी :–** इसे भारत की मेरिनो भी कहा जाता है।
   यह सबसे उत्तम किस्म की ऊन देने वाली नस्ल है। यह प्रतिवर्ष 1 से 1.5 किलो तक ऊन देती है।
8. **सोनाड़ी (चनोथर)** :–राजस्थान में बांसवाड़ा, भीलवाड़ा, डूँगरपुर, उदयपुर जिलों में पाई जाती है। जब यह भेड़ जमीन पर घास चरती है तो इसके कान जमीन को स्पर्श करते है।

पशुधन विकास की समस्याऐं :

1. मानसून की अनिश्चिता : राजस्थान में प्राय सूखे की समस्याऐं रहती है। इसी वजह से पशुओं की पर्याप्त मात्रा में चारा उपलब्ध नहीं हो पाता।
2. योजना एवं समन्वय का अभाव :– सरकार अभी तक इस क्षेत्र के विकास के लिए एक सम्पूर्ण योजना का खाका तैयार नहीं कर पायी है। तथा समन्वय का अभाव देखा गया है।
3. पशु स्वास्थ्य योजना : अक्सर देखा जाता है कि किसी एक बीमारी के कारण सभी पशु उसकी चपेट में आ जाते है। इस स्थिति को समाप्त करने के लिए योजना एवं सुविधाओं का अभाव देखा गया है।
4. पशु आधारित उद्योगों की कमी :– राजस्थान में ऊन, दूध तथा चमड़ा पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है परन्तु इन पर आधारित उद्योगों की राजस्थान में कमी होने से दूध, चमड़ा दूसरे राज्यों या में निर्यात कर देने से राज्य को पर्याप्त लाभ नहीं मिल पाता है।

पशुधन विकास हेतु समाधान :

1. **''गोपाल'' कार्यक्रम :–** यह कार्यक्रम 1990–91 में चालू किया गया था। इस गैर–सरकारी संगठन अथवा गांव के शिक्षित युवक (गोपाल) को उचित प्रशिक्षण देकर उसकी सेवाओं का उपयोग किया जाता है। इसमें विदेशी नस्ल का उपयोग बढ़ाने के

लिए गोपाल को क्रॉस प्रजनन के लिए कृत्रिम गर्भाधान की विधि का प्रशिक्षण दिया जाता है। एक क्षेत्र के बेकार सांडों को पूर्णतः बधिया दिया जाता है। पशु–पालकों को इस बात का प्रशिक्षण दिया जाता है कि वे अपने पशुओं को स्टॉल पर किस प्रकार खिलावें और सदैव बाहर चरने की विधि पर आश्रित न हों।

2. **भेड़ प्रजनन कार्यक्रम** (Sheep Breeding Programme) :– राज्य में ऊन व मांस के उत्पादन में गुणात्मक व मात्रात्मक सुधार करने के लिए भेड़ प्रजनन कार्य में सुधार के व्यापक प्रयास किए गए है। क्रॉस–प्रजनन (Cross Breeding) कार्यक्रम नाली, चोकला, सोनाड़ी व मालपुरा नस्लों पर लागू किया गया है। इसमें कृत्रिम गर्भाधान के जरिए भेड़ों की नस्ल सुधारी जाती है। इसके अलावा चयनित प्रजनन कार्यक्रम चलाया जा रहा है।
3. **विपणन व्यवस्था :–** पशुपालकों को उनके उत्पादन का उचित मूल्य प्राप्त हो, इसके लिए एक तरफ पशुओं के क्रय–विक्रय हेतु पशु मेला लगाये जाते है। दूसरी तरफ दूध को बिना मध्यस्थों के सीधा उपभोक्ता तक पहुंचाने के लिए दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों की स्थापना की गयी है। राज्य में पशु मेलों का आयोजन ग्राम पंचायत, नगरपालिका एवं पंचायत समितियों के माध्यम से किये जाते है। राज्य में वर्तमान में 50 पशु मेले लगते है जिनमें 10 मेले राज्य स्तरीय प्रसिद्ध पशु मेलें, पशुपालन विभाग द्वारा आयोजित किये जाते है।
4. **पशु चिकित्सा :–** राज्य में पशुओं की बीमारियों से रक्षा एवं रोकथाम के लिये नये चिकित्सालय खोले गये है। जहाँ 1951 में 147 चिकित्सालय थे। 2001–02 में राज्य में 12 पशु क्लिनिक्स, 22 प्रथम ग्रेड के पशु चिकित्सालय, 1386 पशु चिकित्सालय, 285 पशु औषधालय तथा 1720 उपकेन्द्र कार्यरत है। इसके अलावा 34 जिला रोग प्रयोगशालाएँ राज्य में कार्यरत है। पशुपालकों को उनके घर पर ही पशु चिकित्सा सेवा उपलब्ध कराने हेतु उपखण्ड स्तर पर 8 चल पशु चिकित्सा इकाइयाँ गठित करने की योजना बनाई है।
5. **एकीकृत पशु विकास कार्यक्रम :–** 8 वीं योजना के प्रारम्भ में यह जयपुर एवं बीकानेर संभाग में चालू किय गया था, परन्तु वर्तमान में यह कार्यक्रम प्रदेश के कोटा, जयपुर, बीकानेर, अजमेर, उदयपुर संभागों के 21 जिलों में लागू हैं जहां 749 उपकेन्द्र स्थापित किये गये है। इस योजना में पशुओं के स्वास्थ्य के अतिरिक्त कृत्रिम गर्भाधान, बेकार पशुओं का बन्ध्याकरण तथा उन्नत किस्म के चारे के बीजों का वितरण का उद्देश्य शामिल है।
6. **पशुपालन व अनुसंधान :–** राज्य में द्वितीय पंचवर्षीय योजना में दो पशु चिकित्सा महाविद्यालय बीकानेर तथा जयपुर में स्थापित किये गये है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् ने बीकानेर एवं सूरतगढ़ में भेड़ अनुसंधान केन्द्र स्थापित किये हैं। जोधपुर में ऊन एवं भेड़ प्रशिक्षण स्कूल स्थापित किया गया है। विश्व बैंक की सहायता से जामडोली में पशु चिकित्सकों एवं अधिकारियों को विशेष तकनीकी प्रशिक्षण हेतु राजस्थान पशु–धन प्रबंध संस्थान का भवन निर्माण कार्य करवाया है।
7. **राज्य में डेयरी विकास कार्यक्रम :–**डेयरी या दुग्ध विकास नीति के अन्तर्गत राजस्थान सहकारी डेयरी फैडरेशन (RCDF) अमूल के नमूने पर राष्ट्रीय डेयरी विकास के

सहयोग से राज्य में डेयरी कार्यक्रम संचालित कर रहा है। डेयरी फैडरेशन उपभोक्ताओं को उत्तम किस्म का दूध तथा दूध से बने पदार्थ उपलब्ध कराने में संलग्न है। यह पशुओं के स्वास्थ्य के प्रति सुधार, पशु आहार की सुविधा तथा दुग्ध उत्पादकों को उचित मूल्य दिलवाने का भी प्रयास कर रहा है। वर्तमान मे दूध–संकलन का कार्य 16 जिला डेयरी संघों के द्वारा संचालित किया जा रहा है जिनकी क्षमता क्रमशः 9 लाख लीटर से बढ़कर 14.30 लाख लीटर प्रतिदिन कर दी गयी है। गहन डेयरी विकास कार्यक्रम राज्य के सभी 30 जिलों में चलाया जा रहा है। इस कार्य में 16 दूग्ध उत्पादक संघों का सहयोग भी प्राप्त हो रहा है। 2006–07 में दिसम्बर 2006 तक डेयरी फैडरेशन का औसत दुग्ध संग्रहण 13.49 लाख किलोग्राम प्रतिदिन रहा था तथा इसके दूध की बिक्री प्रतिदिन औसतन 12.01 लाख लीटर की थी।

राज्य में मार्च, 2006 के अन्त में कार्यशील दुग्ध उत्पादक प्राथमिक सहकारी समितियों की संख्या 8874 हो गई और इनमें जिला दुग्ध संघों की संख्या 16 हो गई है। सहकारी समितियों के विकास के फलस्वरुप दुग्ध उत्पादकों को काफी लाभ पहुंचा। दुग्ध उत्पादन को विपणन के साथ जोड़ा जाने से दुग्ध उत्पादकों को उचित मूल्य मिल पाया है और मध्यस्थ वर्ग के शोषण से मुक्ति मिली हैं। डेयरी फैडरेशन के अधीन 4 पशु आहार संयंत्र कार्यरत है। जिनमें पशु–आहार का उत्पादन कर उसका विपणन किया जाता है।

राजस्थान में डेयरी के विकास में ग्रामीण क्षेत्रों में आमदनी व रोजगार में वृद्धि हुई है। लघु व सीमान्त कृषकों तथा भूमिहीन श्रमिकों को आर्थिक लाभ पहुँचा है। समाज के निर्धन वर्ग को लाभ हुआ है, मानवीय खुराक में प्रोटीन की मात्रा बढ़ी है तथा बायो–गैस के माध्यम से ऊर्जा के गैर–परम्परागत स्त्रोत का विकास हुआ है। शहरी क्षेत्रों में दूध व दूध से बने पदार्थों की बढ़ी हुई मांग की पूर्ति करने में मदद मिली हैं, जो अन्यथा कठिन थी।

डेयरी विकास पर टेक्नोलोजी मिशन– भारत सरकार ने डेयरी विकास पर टेक्नोलोजी मिशन प्रारम्भ किया है, इसके लिए निम्न उद्देश्य है :–

1. उत्पादकता बढ़ाने व लागत घटाने के लिए आधुनिक टेक्नोलोजी को अपनाकर ग्रामीण रोजगार व आमदनी में वृद्धि करना,
2. दूध व दूध से बनी वस्तुओं की उपलब्धि को बढ़ाना ।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. राजस्थान में देश के कुल पशुधन का कितना प्रतिशत पाया जाता है।

(क) 4 %　　(ख) 7%

(ग) 6 %　　(घ) 8 %　　(   )

2. राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में पशुधन का योगदान कितना प्रतिशत है।

(क) 10 %　　(ख) 20%

(ग) 13 %　　(घ) 15 %　　(   )

3. राजस्थान में भारत का कितना प्रतिशत ऊन उत्पादन होता है।

(क) 40 %　　(ख) 30%

(ग) 15 % (घ) 14.5 % ( )

4. थारपारकर गाय कहाँ पर पायी जाती है।

(क) नागौर (ख) बाड़मेर

(ग) जोधपुर (घ) उदयपुर ( )

5. राज्य के कितने लाख परिवार कृषि कार्यों में संलग्न है।

(क) 2 लाख (ख) 4 लाख

(ग) 5 लाख (घ) 7 लाख ( )

6. राजस्थान में कितने पशु मेले लगते है।

(क) 30 (ख) 50

(ग) 90 (घ) 110 ( )

7. राजस्थान में 1951 में कितने पशुचिकित्सालय थे।

(क) 129 (ख) 147

(ग) 141 (घ) 147 ( )

8. 2006 के अंत तक जिला दुग्ध संघों की कितनी संख्या थी।

(क) 17 (ख) 16

(ग) 13 (घ) 14 ( )

अति लघूतरात्मक प्रश्न –

1. राज्य में भेड़ों की संख्या समस्त भारत की संख्या का लगभग कितना प्रतिशत है।
2. 1989–90 में कितने लाख टन दुग्ध का उत्पादन हुआ।
3. देश में रेल एवं ट्रकों द्वारा कितने करोड़ टन माल की ढुलाई होती है।
4. राजस्थान में राठी गाय किन क्षेत्रों में पाई जाती है।
5. भारत का मेरिनो किसे कहा जाता है।
6. मगरा भेड़ औसतन प्रतिवर्ष कितना किलोग्राम ऊन देती है।
7. पूगल क्या है।
8. गिर पशु किस क्षेत्र में पाये जाते है।

लघूतरात्मक प्रश्न –

1. राजस्थान में पाई जाने वाली भेड़ो की विभिन्न नस्लों पर प्रकाश डालिए।
2. राजस्थान में डेयर विकास को समझाइए।
3. पशुधन विकास की समस्याऐं कौन सी है।
4. समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का क्या उद्देश्य था।
5. राजस्थान में पशुधन की संरचना को समझाइए।
6. गोपाल कार्यक्रम क्या है।
7. एकीकृत पशु विकास कार्यक्रम क्या है।
8. डेयरी विकास टेक्नोलॉजी मिशन के उद्देश्य क्या है।

निबंधात्मक प्रश्न –

1. पशुधन विकास हेतु प्रारंभ किए गए विभिन्न कार्यक्रमों पर प्रकाश डालिए।
2. राजस्थान में पशुधन के महत्व को समझाइए।
3. राजस्थान में उपलबध पशुओं की विभिन्न नस्लों का वर्णन कीजिए।

अध्याय – 7

लघु उद्योग, हस्तशिल्प, खादी एवं ग्रामोद्योग

कुटीर उद्योगों या ग्राम उद्योगों में ऐसे उद्योग सम्मिलित होते है जो श्रमिक के द्वारा अपने परिवार के सदस्यों की सहायता से अपने घर या अन्य स्थान पर चलाये जाते हैं। इन पर कारखाना अधिनियम लागू नही होता। राजस्थान स्टेट इण्डस्ट्रीज एक्ट, 1961 के अनुसार ग्रामीण उद्योग से आशय ऐसे उद्योग से है जो राज्य के ग्रामीण व्यक्तियों के किसी वर्ग द्वारा पूर्ण अथवा अंशकालिक उद्योग के रुप में किया जाता है।

लघु उद्योगों में ऐसे उद्योग सम्मिलित होते है जो श्रमिक के घर पर नहीं चलाये जाते। डॉ0 आबिद हुसैन समिति, 1947, के अनुसार 3 करोड़ रुपये तक की पूंजी वाले उद्योग लघु उद्योग में आते हैं वाजपेयी सरकार ने इसे एक करोड़ तक सीमित कर दिया था। एक करोड़ से अधिक लागत वाले उद्योग मध्यम या भारी उद्योगों में सम्मिलित होते हैं।

अनेक ऐसे उद्योग भी हैं जो तीनों श्रेणियों में सम्मिलित होते हैं जैसे सूती वस्त्र, चर्म, लोहे सम्बंधी एवं लकड़ी संबंधी उद्योग इसी प्रकार के है।

राजस्थान में लद्यु एवं कुटीर उद्योगों तथा हस्तकलाओं का महत्व/लाभ/भूमिका

(Importance, Role or Advatanges of Small and Cottage Industries and Handicrafts of Rajasthan)

राजस्थान में लघु एवं कुटीर उद्योगों तथा हस्तकलाओं का कई प्रकार से महत्व एवं भूमिका है। जहां एक ओर उनमें कम पूंजी से अधिक रोजगार, विकेन्द्रीकरण निर्यातों में वृद्धि तथा अधिक आय का स्त्रोत प्राप्त होता है वहां दूसरी ओर कलात्मक एवं श्रेष्ठ उत्पादन का लाभ मिलता है।

लघु एवं कुटीर उद्योगों तथा हस्तकलाओं का महत्व इस प्रकार है–

1. **रोजगार का आधार –** राजस्थान की पिछड़ी एवं विकासशील अर्थव्यवस्था में लघु एवं कुटीर उद्योग तथा हस्तकलाएँ रोजगार का आधार है। राजस्थान में लघु उद्योगों एवं हस्तकलाओं में काफी लोगों को रोजगार प्राप्त हैं। पंजीकृत लघु उद्योगों में ही 8.5 लाख लोगों को रोजगार मिला हुआ है।
2. **कम पूंजी से अधिक उत्पादन एवं रोजगार** – राजस्थान में पूंजी एवं वित्तीय साधनों का अभाव है अतः कम पूंजी से लघु एवं कुटीर उद्योगों से अधिक उत्पादन एवं अधिक रोजगार बढ़ाना संभव होता है।
3. **आय के समान वितरण में सहायता –** लघु एवं कुटीर उद्योगों में कई छोटे–छोटे उद्योगपतियों का स्वामित्व एवं संचालन होता है और उनमें प्रायः श्रमिकों की प्रधानता होती है। अतः प्राप्त उत्पादन एवं आय का वितरण कई लोगों में होने से आय के समान वितरण का मार्ग प्रशस्त होता है।
4. **अर्थव्यवस्था के संतुलित एवं सर्वागींण विकास में सहायक** – लघु एवं कुटीर उद्योगों तथा हस्तकलाओं के विकास से कृषि पर जनसंख्या का भार कम किया जा सकता है और लोगों को उत्पादन एवं रोजगार का वैकल्पिक अवसर मिलता है। इससे कृषि एवं उद्योगों में साथ–साथ विकास तो होता ही है, साथ ही सभी प्रकार की वस्तुओं का उत्पादन कर राज्य के सर्वांगीण विकास में मदद मिलती है।

5. **अर्थव्यवस्था में विकेन्द्रीकरण के लाभ मिलते हैं** – क्योंकि लघु एवं कुटीर उद्योग तथा हस्तकलाएं कभी भी बड़े–बड़ें औद्योगिक स्थानो पर केन्द्रित न होकर राज्य के सभी भागों में फैले होते है। इससे अर्थव्यवस्था में विकेन्द्रीकरण का लाभ मिलता है।
6. **औद्योगिक समस्याओं एवं दोषों से मुक्ति –** लघु एवं कुटीर उद्योग तथा हस्तकलाएँ राज्य के कई भागों में विकेन्द्रित हो जाने और उनमें परस्पर निकट सम्पर्क होने से औद्योगिक विवादों, श्रमिकों के आवास की समस्याओं, दूषित वातावरण से मुक्ति मिलती है।
7. **निर्यातों में वृद्धि और विदेशी मुद्रा अर्जन –** राजस्थान के लघु एवं कुटीर उद्योगों तथा हस्तकलाकारों से कई पूंजी लगाकर थोड़े ही समय में उत्पादन बढ़ाया जा सकता है उसके विदेशी बाजार में निर्यात में वृद्धि से विदेशी मुद्रा अर्जन का अवसर मिलता है।
8. **उत्पादन में शीघ्रता से मुद्रा स्फीति पर नियन्त्रण में सहायता मिलती है।** लघु एवं कुटीर उद्योगों में कम पूंजी लगाकर थोड़े ही समय में उत्पादन बढ़ाया जा सकता है उससे बाजार में पूर्ति में वृद्धि से मुद्रा स्फीति पर नियन्त्रण में मदद मिलती है।
9. स्थानीय कच्चे माल एवं साधनों का उपयोग होने से न केवल लागत में कमी आती है वरन् साथ ही स्थानीय लोगों की आय में वृद्धि होती है, उन्हें रोजगार मिलता है और क्षेत्रीय संतुलन का मार्ग प्रशस्त होने से असन्तुलन को कम किया जा सकता है।
10. **कलात्मक वस्तुओं का उत्पादन तथा प्रतिभाओं का विकास** – लघु उद्योगों और हस्तकलाओं में कलात्म्क एवं अच्छी किस्म की वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है उससे कलात्मक वस्तुओं का उत्पादन तो बढ़ता ही है, साथ–साथ कलाकारों एवं कलात्मक अभिरुचि वाली प्रतिभाओं का भी विकास हुआ है।
11. **संचालन में सुविधा एवं मितव्ययिता** – लघु एवं कुटीर उद्योगों तथा हस्तकला कार्यों का संचालन सरल होता है। विशिष्ट तकनीक की जरुरत नहीं होती अतः राजस्थान में जहां तकनीकी ज्ञान एवं औद्योगिक कुशलता का अभाव है वहां इन उद्योगों का संचालन सरल है।

राजस्थान में उपलब्ध लघु एवं कुटीर उद्योग :– राजस्थान में विभिन्न प्रकार के लघु एवं कुटीर उद्योग पाए जाते हैं। जिनका वर्णन आगे किया जा रहा है।

(अ) कृषि आधारित लघु एवं कुटीर उद्योग

(1) तेल–घानी उद्योग – तिलहनों पर आधारित यह उद्योग राजस्थान के लगभग 37 हजार परिवारों की आजीविका का साधन है। इस उद्योग की काफी इकाईयाँ राजस्थान के भरतपुर, कोटा, जयपुर, गंगानगर एवं पाली जिलों में कार्यरत है।

(2) गुड़ एवं खण्डसारी उद्योग – राजस्थान के गन्ना उत्पादक जिलों में गन्ने के रस से गुड़ एवं खण्डसारी उत्पादन के लिये लघु एवं कुटीर उद्योगों के रुप में यह उद्योग कोटा, बून्दी, श्रीगंगानगर, भीलवाड़ा, उदयपुर जिलों में प्रमुख है। राज्य के अन्य भागों में भी यह उद्योग चल रहा है और उसमें लगभग 55 हजार लोग रोजगार में है।

(3) आटा उद्योग – गेहूं उत्पादक क्षेत्रों में आटा उद्योग पनपा है जो मुख्य रुप से जयपुर, भरतपुर, अलवर, कोटा, सवाई माधोपुर, गंगानगर, टोंक, बून्दी और भीलवाड़ा जिलों में पनप रहे है।

(4) दाल उद्योग – राजस्थान में कई प्रकार की दलहन उपज होती हैं जिनमें उड़द, मूंग, चना, मोठ और अरहर आदि से लोग दाल बनाते हैं और उनकी औद्योगिक इकाइयां

बीकानेर, जोधपुर, कोटा, उदयपुर, भीलवाड़ा, चित्तौड़, पाली, भरतपुर, टोंक और अलवर जिलों में कार्यरत हैं।

(5) चावल उद्योग – राजस्थान में चावल उत्पादक क्षेत्रों में यह उद्योग लघु एवं कुटीर उद्योगों के रुप में चलाया जा रहा है। इसके प्रमुख क्षेत्र बांसवाड़ा, डूंगरपुर, कोटा–बूंदी, गंगानगर, झालावाड़, बारां, सवाईमाधोपुर एवं भरतपुर जिलों में है।

(6) हाथ–करघा, खादी ग्रामोद्योग – खादी–ग्रामोद्योग बोर्ड के सहयोग से राजस्थान के कई स्थानों पर खादी निर्माण, निवार, चादर, तौलिया, धोती आदि वस्त्रों का निर्माण होता है।

(7) बंधाई, छपाई एवं रंगाई उद्योग – राजस्थान के कई भागों में रंगाई, छपाई एवं बंधाई उद्योग बड़ी संख्या में पनपे हैं। रंगाई उद्योग मुख्यतः पाली एवं बालोतरा में हैं। बंधाई का कार्य जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, कोटा, कुचामन एवं नागौर में है। छपाई का कार्य मुख्यतः जयपुर, जोधपुर, बाड़मेर, चित्तौड़गढ़ एवं भरतपुर में होता है।

(8) गोटा–किनारी उद्योग – राजस्थान के अजमेर, जयपुर तथा खण्डेला में गोटा किनारी उद्योग काफी लम्बे समय से पनप रहा है। वहां औरतें और लड़के भी इस कार्य में रोजगाररत हैं।

(ब) पशुओं के उत्पाद पर आधारित लघु एवं कुटीर उद्योग

(1) चर्म उद्योग – राजस्थान में चमड़े से कई प्रकार की कलात्मक वस्तुओं का निर्माण होता है। जूतियां, बटुए, बैल्ट, बैग, आसन आदि वस्तुएं जयपुर, अजमेर, जोधपुर, बाड़मेर आदि कई स्थानों पर बनती है। बीकानेर में ऊंट की खाल से विविध सामान बनाये जाते है।

(2) हाथी दांत का कार्य – जयपुर इसके लिये राजस्थान का विख्यात केन्द्र है। जोधपुर एवं पाली में भी हाथी–दांत की चूड़ियां बनाई जाती है।

(3) पशुओं की हड्डी पीसने का उद्योग – राजस्थान में भारत की कुल पशु संख्या के 22% हैं अतः उनकी हड्डियाँ बहुतायत से मिलती हैं जिसे पीसकर अन्य उद्योगों में कच्चे माल के रुप में काम में लिया जाता है। हड्डी पीसने के कारखाने प्रायः जयपुर, जोधपुर, कोटा, भीलवाड़ा एवं फालना में हैं।

(स) वनों पर आधारित लघु एवं कुटीर उद्योग

(1) लकड़ी के विविध सामान के उद्योग – राजस्थान में लकड़ी के दरवाजे, फर्नीचर तथा खिलौने बनाने का कार्य काफी लोकप्रिय एवं कलात्मक होता है। रोहिडा तथा शीशम की लकड़ी से ढोल, ढप, तबला, ढोलक तथा अन्य लकड़ी के वाद्य यंत्र बनाये जाते हैं। बांस के पंखे, टोकरियाँ तथा चिक तैयार की जाती है। लकड़ी चीरने की कई आरा मशीनें कार्यरत है। ये राज्य के प्रायः सभी जिलों में लघु एवं कुटीर उद्योगों के रुप में चलाये जाते हैं।

(2) कागज उद्योग – धोसूण्डा में हाथ से कागज बनाने का कार्य होता है। कोटा के स्ट्राबोर्ड का कारखाना लघु उद्योग के रुप में चल रहा है। इसी प्रकार कागज की कुछ छोटी इकाइयां उदयपुर, बांसवाड़ा, कोटा, अजमेर में स्थापित की जा सकती है।

(3) बीड़ी उद्योग – राजस्थान में तेन्दू पत्ता बहुत मात्रा में मिलने से राज्य के कई स्थानों पर बीड़ी बनाने का कार्य किया जाता है। इसके प्रमुख क्षेत्र जोधपुर, चित्तौड़गढ़, भीलवाड़ा, टोंक, कोटा और अजमेर जिले हैं। टोंक में सरकार की मयूर बीड़ी फैक्ट्री प्रमुख हैं।

(4) दियासलाई उद्योग – राजस्थान के कई भागों में दियासलाई के लिये नरम लकड़ी मिलती है अतः अजमेर, पाली, फालना और अलवर आदि स्थानों पर दियासलाई के उद्योग को प्रोत्साहन मिला है।

(5) कत्था, गोंद एवं लाख उद्योग – वनों की उपज पर आधारित ये उद्योग राज्य की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। कत्था राज्य के पहाड़ी क्षेत्रों में खैर के पेड़ से तैयार किया जाता है। इसके मुख्य क्षेत्र कोटा, बूंदी, झालावाड़, सवाई माधोपुर, धौलपुर और अलवर हैं। धोक, बबूल, खैर, कूमटा और कड़ाचा पेड़ों से गोंद उद्योग को बढ़ावा मिला है।

जंगलों में पेड़ों से लाख भी प्राप्त होती हैं उस लाख से चूड़ियाँ, खिलौने एवं कलात्मक वस्तुऐं तैयार की जाती हैं। यह उद्योग जयपुर, उदयपुर, जोधपुर और अजमेर में काफी पनपा है।

(द) खनिज आधारित उद्योग

(1) संगमरमर उद्योग – राजस्थान के कई भागों में उत्तम कोटि का संगमरमर मिला है। उससे कई उद्योग स्थापित हुए हैं। यह उद्योग मकराना, सिरोही, राजनगर, चित्तौड़गढ़, उदयपुर, किशनगढ़ और जयपुर में पनपा है। इसकी कटाई, घिसाई और पोलिशिंग करने की कई लघु औद्योगिक इकाइयाँ स्थापित हो गई है।

(2) इमारती पत्थर उद्योग – राजस्थान के कई भागों में इमारती पत्थर निकलता है। उसकी घिसाई, कटाई एवं पोलिशिंग के लिये भी राजस्थान में कई लघु उद्योग इकाइयां स्थापित हुई हैं जिनमें कोटा, रामगंज मंडी, चित्तौड़गढ़, उदयपुर आदि प्रमुख हैं।

(3) ग्रेनाइट उद्योग – राजस्थान में अच्छी किस्म का ग्रेनाइट कई रंगों में पाया जाता है। उसकी कटाई, घिसाई एवं पोलिशिंग के कारखाने चित्तौड़, उदयपुर तथा जोधपुर में हैं।

(य) राजस्थान में अन्य लघु उद्योग

(1) ऊन उद्योग – राजस्थान में लगभग 1.43 करोड़ भेड़ों से प्रतिवर्ष 19.5 हजार टन ऊन प्राप्त होती है। उसका उपयोग करने के लिये बीकानेर और जोधपुर में दो कारखाने स्थापित किये गये हैं। ऊन को प्रोसिस करने के लिये 29 फैक्ट्रियाँ बीकानेर, जोधपुर, ओसिया, सीकर, भीलवाड़ा, केकड़ी, पाली और ब्यावर में कार्यरत है।

(2) रसायन उद्योग – डीडवाना में सोडियम सल्फेट कारखाना, देवारी में रासायनिक खाद बनाने का कारखाना है।

(3) इंजीनियरिंग उद्योग – राजस्थान में इसके 20 उद्योग हैं, जयपुर में मीटर बनाने का जयपुर मेटल का कारखाना, बाल बियरिंग बनाने का कारखाना, पानी के मीटर बनाने का कारखाना आदि उल्लेखनीय है। कृषि उपकरणों के लिये सिरोही, चित्तौड़, नागौर, सोजत और दिगोद में कारखाने लगाये गये है।

राजस्थान की हस्तकलाएँ/हस्तशिल्प
(Handicrafts of Rajasthan)

राजस्थान की अनेक कलात्मक वस्तुएँ विश्वभर में लोकप्रिय है और बहुत ही चाह से खरीदी जाती है। राजस्थान प्राचीनकाल से हस्तशिल्प के क्षेत्र में विश्वविख्यात रहा है। यहां की हस्तशिल्प की कलात्मक कृतियां अब देश–विदेश में आयोजित प्रदर्शनियों एवं मेलों में भेजी जाती है और उनकी मांग निरन्तर बढ़ती जा रही है, उससे हस्तशिल्पियों को प्रोत्साहन मिला है।

हस्तशिल्प/हस्तकला का अभिप्राय (Meaning of Handicrafts) –हस्तकलाओं से अभिप्राय हाथ से बनाई जाने वाली कलात्म्क वस्तुओं एवं कलाकृतियों से है जो हस्तशिल्पियों अथवा कारीगरों द्वारा तैयार की जाती हैं। इसके अन्तर्गत हम सोने–चांदी के कलात्मक आभूषणों, पीतल पर खुदाई एवं मीनाकारी के बर्तन, लाख से बनी चूड़ियां एवं अन्य सजावटी सामान, संगमरमर की सुन्दर एवं कलात्मक मूर्तियां, सांगानेरी एवं बगरु प्रिंट के कलात्मक परिधान, हाथी दांत तथा लकड़ी पर खुदाई के कलात्मक सामान, सलमा–सितारों की जूतियां आदि सब प्रकार का कलात्मक सामान आता है।

राजस्थान की प्रमुख हस्तकलाओं का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

(1) खुदाई एवं मीनाकारी तथा मूल्यवान रत्नों को तराशना – यह जयपुर में प्रमुख रुप से विकसित हुआ है किन्तु प्रतापगढ़ और नाथद्वारा में भी मीनाकारी का कार्य किया जाने लगा है। जयपुर में मूल्यवान रत्नों को तराशने का कार्य भी प्रसिद्ध है।

(2) हाथी दांत की वस्तुएँ – राजस्थानी महिलाओं में सौभाग्य की प्रतीक हाथी दांत की चूड़ियां व अन्य सामान जोधपुर में बनाया जाता है। जयपुर में हाथी दांत के खिलौने, कलात्मक वस्तुऐं तथा सजावटी सामान तैयार होता है। इसके अतिरिक्त उदयपुर, पाली एवं भरतपुर में भी हाथी दांत का सामान बनने लगा है।

(3) संगमरमर की मूर्तियाँ एवं कलात्मक सामान – यह मुख्यतः जयपुर में केन्द्रित है। इसके अतिरिक्त अलवर जिले के किशोरी ग्राम में भी यह सामान बनाया जाता है।

(4) लाख एवं कांच की चूड़ियां एवं कलात्मक सामान – जयपुर एवं जोधपुर में विविध रंगों की चूड़ियां एवं कलात्मक सामान लाख एवं काँच से बनाया जाता है, जिनमें खिलौने, मूर्तियाँ, गुलदस्ते, हार, अंगूठियां, कर्णफूल, झुमके तथा चाबियों के गुच्छे आदि का निर्माण मुख्य है।

(5) कशीदाकारी – वस्त्रों पर कलात्मक और कुशलतापूर्वक कशीदाकारी का कार्य जयपुर, जोधपुर, अजमेर, कोटा और बाड़मेर में मुख्य रुप से प्रसिद्ध है।

(6) रंगाई, छपाई और बंधेज के वस्त्र – इस कार्य में राजस्थान की दूर–दूर तक ख्याति है। पाली, बाड़मेर और सांगानेर में रंगाई, छपाई और बंधेज का कार्य बड़ी मात्रा में होता है। चित्तौड़गढ़ में जाजम छपाई, बाड़मेर का अजरक प्रिन्ट तथा सांगानेरी छपाई के लिये जयपुर का सांगानेर प्रसिद्ध है।

(7) ऊनी कम्बल, गलीचे एवं कालीन – इन्हें बनाने में जोधपुर, बीकानेर, बाड़मेर, मालपुरा और टोंक प्रसिद्ध हैं, बीकानेर में भी बनते हैं। राजस्थान के गलीचे, नमदे और कालीन विदेशों में निर्यात किये जाते हैं।

(8) चमड़े पर हस्तशिल्प – चमड़े का कलात्मक सामान राजस्थान की प्रमुख विशेषता है। यहां की कलात्मक मोजड़ियां, जूतियां, पर्स, बैग, बेल्ट, आसन तथा बीकानेर में ऊंट की खाल से बनाये जाने वाले सजावटी सामान प्रमुख हैं। ये मुख्य रुप में जोधपुर, उदयपुर, जयपुर, अजमेर, बाड़मेर आदि स्थानों पर बनाये जाते है।

(9) लकड़ी पर नक्काशी का काम एवं खिलौने एवं सजावट का सामान – ये उदयपुर, बीकानेर, सवाईमाधोपुर, तथा बाड़मेर और चित्तौड़ के बस्सी गांव में बनाये जाते है। बस्सी गांव लकड़ी के शेर, हाथी, घोड़े, एवं गणगौर बनाने की दृष्टि से प्रसिद्ध है।

खादी उद्योग :– खादी उद्योग का प्रारम्भ महात्मा गांधी द्वारा किया गया था। तथा इसके पीछे मुख्य उदे्श्य स्वदेशीकरण को बढ़ावा देना था तथा उस उद्देश्य में गांधी जी बहुत अधिक सफल भी हुयें

परन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् गांधी जी द्वारा प्रारम्भ किया गया प्रयास देश में लघु उद्योगों का एक पर्याय बन गया। तथ आज लोग बहुत बडी संख्या में इस क्षेत्र में कार्य कर रहे है। तथा सरकार भी अपने स्तर पर इस क्षेत्र का विकास करने के लिए अत्यधिक प्रयासरत है। यह ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि वर्ष 2008–09 में खादी का 18.14 करोड़ रु. का उत्पादन हुआ है।

राजस्थान खादी एवं ग्रामोद्योग : यह बोर्ड वर्तमान में ''फेशन फॉर डवलपमेंट'' प्रोग्राम चला रहा हैं। जिसका प्रमुख उदे्श्य परम्परागत उद्योगों की उत्पादकता को बढ़ाना समेकित विकास के लिए मार्केट को बढाना तथा बिल की समस्या का समाधान करना प्रमुख उद्देश्य हैं

राजस्थान खादी ग्रामोद्योग के द्वारा एक सम्पूर्ण योजना का खाका तैयार किया गया है। जिसके प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार है–

1. उत्पादन में वृद्धि
2. उत्पादन में वृद्धि एवं तकनीकी विकास
3. उत्कृष्ट उत्पाद
4. समेकित विकास को ध्यान में रखते हुए नई डिजाइन को प्रोत्साहित करना
5. युवाओं में ,खादी का प्रचार
6. रोजगार में वृद्धि
7. कार्य के लिए स्वच्छ वातावरण का विकास
8. न्यूनतम मजदूरी में वृद्धि

योजनाओं में राजस्थान में लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास

(Development of small and Cottage Industries in Rajasthn During Plans)

राजस्थान सरकार ने कम पूंजी में अधिक रोजगार देने तथा राज्य में विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहित करने के लिये लघु एवं कुटीर उद्योगों को बढ़ावा दिया है। उनके विकास के लिये वित्तीय एवं राजकोषीय प्रेरणाऐं उपलब्ध कराई हैं, इससे उनके तीव्र विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ है। यह निम्न तथ्यों से उजागर होता है–

(1) लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास पर बढ़ता व्यय – राजस्थान सरकार ने लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास पर पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान विकास व्यय बढ़ाया है, जैसा निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट है –

योजनाओं में लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास व्यय

योजना	व्यय करोड़ रु.		
प्रथम	0.32	पंचम	3.95
द्वितीय	3.25	छठी	23.02
तृतीय	1.98	सातवी	28.4
चतुर्थ	0.88	आठवीं	70.97
		नवीं	47.06

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि यद्यपि राज्य की प्रथम, तृतीय एवं चतुर्थ योजना में लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास पर सार्वजनिक क्षेत्र में व्यय बहुत कम हुआ किन्तु पांचवीं योजना के बाद लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास व्यय में तेजी से वृद्धि का रुख है। नवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002) में लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास पर सार्वजनिक क्षेत्र में 170.97 करोड़ रु. व्यय का प्रावधान रहा है।

(2) लघु उद्योगों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि – जहां 1955–56 में लघु उद्योगों की संख्या राजस्थान में केवल 2750 थी वहां यह संख्या 1969–70 में बढ़कर 8216 और 1980–81 में बढ़कर 44,756 हो गई। 1993–94 में यह संख्या 1.66 लाख हो गई जबकि 1990–91 में 1.53 लाख थी। 2005–06 में यह संख्या लगभग 2.75 लाख हो गई।

(3) लघु उद्योगों के उत्पादन में उत्तरोत्तर वृद्धि – राजस्थान में लघु उद्योगों के विकास के प्रयासों से उनके उत्पादन में वृद्धि हो रही है। जहां 1983–84 में लघु एवं ग्रामीण उद्योगों में उत्पादित माल का मूल्य 59.2 करोड़ रु. के लगभग था वह बढ़कर 1990–91 में 125 करोड़ रु. हो गया जबकि 1993–94 में लघु उद्योगों का उत्पादन लगभग 150 करोड़ रु. था। 2005–06 में यह बढ़कर 400 करोड़ रु. होने का अनुमान है।

(4) पूंजी विनियोग में वृद्धि – राजस्थान के लघु उद्योगों में सरकार के प्रयासों से पूंजी विनियोग काफी बढ़ा है। जहां 1950–51 में लघु उद्योगों में लगी पूंजी नाम मात्र थी वहां 2005–06 में उनमें लगभग 4368 करोड़ रु. की पूंजी विनियोग का अनुमान रहा है।

(5) रोजगार में वृद्धि – राजस्थान में लघु उद्योगों में रोजगार निरन्तर बढ़ा है। जहां 1981 में पंजीकृत फैक्ट्रियों में कुल रोजगार केवल 1.66 लाख थे वहां लघु उद्योगों में बढ़कर 2005–06 10.55 लाख होने का अनुमान रहा है।

(6) खादी एवं ग्रामोद्योगों का तेजी से विकास – राजस्थान खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड के अथक प्रयासों से राज्य में 2001–02 में सूती एवं उनी खादी का उत्पादन 27.14 करोड़ रु. होने का अनुमान है। इसी प्रकार ग्रामोद्योगों में उत्पादन का मूल्य भी 463.5 करोड़ रु. होने का अनुमान है। उनमें रोजगार भी लगभग 8 लाख लोगों को मिला होने का अनुमान रहा है।

(7) राजस्थान में लघु उद्योगों के विकास हेतु कई संस्थाओं की स्थापना की गई है, उनमें (i) लघु उद्योग सेवा संस्थान प्रोजेक्ट तैयार करता है और उद्योगपतियों को प्रशिक्षण तथा तकनीकी सहयोग देता है। (ii) राज्य में 34 जिला उद्योग केन्द्र तथा 7 उप–जिला उद्योग केन्द्र कार्यरत हैं जो चार श्रेणियों में विभाजित है।

राजस्थान में लघु एवं कुटीर उद्योगों तथा हस्तकलाओं की समस्यायें एवं समाधान के सुझाव

राजस्थान में इन उद्योगों के सामने कई प्रकार की समस्याऐं एवं कठिनाईयां हैं, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं तथा उनके समाधान के सुझाव भी दिये जा रहे हैं –

(1) कच्चे माल की समस्यायें – राजस्थान में भी लघु एवं कुटीर उद्योगों को कच्चे माल की प्राप्ति में कई कठिनाइयां आती हैं जिनमें एक–सा कच्चा माल न मिल पाना, महंगा मिलना,

स्थानीय स्तर पर घटिया किस्म का माल तथा सरकार द्वारा नियंत्रित कच्चे माल की आपूर्ति में कठिनाई आती है। यह समय पर भी नहीं मिल पाता।

इस समस्या का समाधान सहकारिता के आधार पर कच्चे माल की पूर्ति तथा सरकार द्वारा कच्चे माल की समय पर पूर्ति से संभव है।

(2) वित्तीय समस्याऐं – सभी प्रकार के उद्योगों और हस्तकलाकारों के सामने सस्ती तथा पर्याप्त वित व्यवस्था का अभाव सबसे बड़ी समस्या है। यद्यपि सरकार ने वित व्यवस्था के लिए बैंकों तथा वित्तीय संस्थाओं से ऋण की व्यवस्था की है पर वे अपर्याप्त हैं अतः सरकार को सस्ते एवं पर्याप्त वित्तीय सुविधाओं की व्यवस्था को बढ़ाना चाहिए।

(3) उत्पादित माल की बिकी की समस्याएं – लघु एवं कुटीर उद्योगों के सामने उत्पादन से भी अधिक निर्मित माल के विक्रय की समस्या आती है। संगठित विक्रय व्यवस्था के अभाव में उचित मूल्य नहीं मिल पाता। बिचौलियों के माध्यम से माल बेचने पर हानि उठानी पड़ती हैं। अतः सहकारी स्तर पर बिक्री संगठन से समस्या हल हो सकती है।

(4) बड़े उद्योगों से प्रतिस्पर्द्धा की समस्या – लघु एवं कुटीर उद्योगों को अपने माल की बिक्री तथा कच्चे माल की आपूर्ति में बड़े उद्योगों से प्रतिस्पर्द्धा करनी पड़ती है और वे उनके आगे नहीं टिक पाते। अतः उन्हें हानि उठाकर भी माल बेचना पड़ता है।

यद्यपि सरकार ने लघु एवं कुटीर उद्योगों के उत्पादन क्षेत्र निर्धारित कर दिये हैं और सरकारी माल क्रय में लघु उद्योगों को वरीयता दी जाती है फिर भी समस्या विकट है।

(5) विद्युत आपूर्ति की समस्या – राजस्थान में विद्युत शक्ति की आपूर्ति उसकी मांग से लगभग 30 प्रतिशत कम है अतः उद्योगों को समय पर विद्युत आपूर्ति न मिलने से उत्पादन की हानि होती है। श्रमिकों को बेकार में मजदूरी चुकाने का भार उठाना पड़ता है और बहुत–सी नई औद्योगिक इकाइयों को कनेक्शन मिलने में देरी होने से उद्योग प्रभावित होते है।

(6) उन्नत उत्पादन तकनीक की समस्या – लघु एवं कुटीर उद्योगों में उन्नत तकनीक का प्रयोग सीमित रहने से उत्पादन कम तथा लागत अधिक बैठती है अतः जापान की भांति राजस्थान के लघु एवं कुटीर उद्योगों में उन्नत तकनीक को बढ़ावा देना चाहिए।

(7) औद्योगिक रुग्णता की समस्या – कई कम अनुभवी उद्योगपति उद्योगों में वित्तीय संस्थाओं से प्राप्त धन का दुरुपयोग करते हैं। अनुभव के अभाव में उद्योगों में घाटा उठाते हैं परिणामस्वरुप औद्योगिक रुग्णता में वृद्धि की समस्या बड़ी विकट होती जा रही है। इसके लिए वित्तीय संस्थाओं द्वारा प्रदत्त सहायता के सदुपयोग पर प्रभावी नियंत्रण के साथ–साथ समय–समय पर मार्गदर्शन देने से समस्या का समाधान संभव है।

(8) कुशल प्रबंध की समस्या – लघु एवं कुटीर उद्योगों के प्रबन्ध में प्रशिक्षण प्राप्त व्यावसायिक प्रबन्धकों की नियुक्ति नहीं की जाती। स्वयं उद्यमकर्ता ही अपने विवेक से प्रबन्ध करता है अतः कुशल प्रबन्ध नहीं होने से साधनो का अपव्यय एवं घाटे की समस्याऐं आती है। इस समस्या के समधान के लिए समय–समय पर प्रशिक्षण की व्यवस्था के साथ–साथ कुशल प्रबन्धकों की नियुक्ति को बढ़ावा देना चाहिये।

(9) प्रमाणीकरण तथा अच्छी किस्म की वस्तुओं के निर्माण की समस्या – बड़े उद्योगों के प्रभाव के अनुसार लघु एवं कुटीर उद्योगों का माल न होने से उनके माल को ग्राहक खरीदना पसन्द नहीं करते। वे उसे घटिया माल समझते है। इस समस्यया के समाधान भी अच्छी किस्म के

प्रमाणीकृत माल की बिक्री एवं भरोसे का अच्छा माल बेचने की गारन्टी से समस्या का समाधान संभव है।

समाधान :–

1. **सहकारिता** :– सहकारिता आंदोलन का विकास करके कच्चे माल की पूर्ति की समस्या को समाप्त कया जा सकता है। जिससे लघु उद्यमी उत्पादन सही समय पर कर सकें।
2. **वित्तीय उपाय** :– व्यापार के संदर्भ में यह कहा जाता है कि कम पूंजी व्यापार को नष्ट कर देती है। तथा छोटे उद्यमी के लिए वित्त समस्या हमेशा बनीं रहती है इसके लिए सरकार द्वारा वित्तीय संस्थाओं की स्थापना की गई है जो समय–समय पर इन्हें उचित दरों पर ऋण उपलब्ध करवाती है।
3. **सहकारी बिक्री संगठन** :– उत्पादन के साथ–साथ किसानों के माल को उचित मूल्य पर बेचने में भी समस्या का सामना करना है। इसलिए सरकार द्वारा सहकारी संगठन का निर्माण किया जाना चाहिए। तथा अनिश्चित काल में सही समर्थन मूल्य दिया जाना चाहिए।
4. **लघु उद्योगों के लिए आरक्षण की नीति :–** लगातार प्रतिस्पर्धा के कारण लघु उद्योग बड़े उद्योगों की तुलना में बाजार में टिक नहीं पाते। अतः कुछ उद्योगों को आरक्षण की सूची में रखा जाना चाहिए।
5. **विद्युतीकरण को बढ़ावा** :– गांवों एवं कस्बों में विद्युतीकरण को बढ़ावा देंना चाहिए साथ ही साथ विद्युत की पूर्ति का भी ध्यान रखा जाना चाहिए।
6. **नई तकनीकी का उपयोग** :– किसानों को आधुनिक तकनीक का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। तथा साथ–साथ उन्हें तकनीकी परीक्षण भी उपलब्ध करवाना चाहिए।
7. **कुशल प्रबंध की समस्या** :– अगर कृषिगत कार्यों को कुशल प्रबंध द्वारा नियोजित किया जाए तो उत्पादन क्षमता 20 प्रतिशत तक बढ़ाई जा सकती है।
8. **प्रमाणिक किस्म की वस्तुओं का उत्पादन** :– प्राय लोग बड़े उद्योगों की वस्तुओं को खरीदना पसन्द करते है। इस समस्या के समाधान के लिए सरकार को लघु उद्योगों की वस्तुओं को प्रमाणित करना चाहिए।

कुटीर व लघु उद्योगों के विकास के लिए सरकारी उपाय

सरकार ने कुटीर व लघु उद्योगों के विकास के लिए कई उपाय काम में लिए हैं जिनका संबंध विशेषतया इनके लिए कच्चे माल, पूंजी व तकनीकी सहायता, बिक्री आदि की सुविधाओं से रहा है। इनका वर्णन नीचे किया जा रहा है। –

(1) व्यापक सहायता कार्यक्रम – भारत सरकार ने लघु उद्यमकर्त्ताओं को सहायता देने के लिए व्यापक सहायता कार्यक्रम चलाया हैं। लघु उद्योग विकास संगठन (SIDO) के अन्तर्गत लघु उद्योग–सेवा–संस्थान (SISI), शाखा–संस्थान व जाँच तथा उत्पाद–केन्द्र स्थापित किये गये हैं। राज्यों मे उद्योग निदेशालय भूमि या फैक्ट्री शेड आवंटित करते हैं तथा इनके लिए कच्चे माल व पूंजी की उपलब्धि में सहायता करते हैं।

(2) लघु उद्योगों के लिए क्षेत्र सुरक्षित (रिजर्वेशन) करने की नीति – बड़ें पैमाने की इकाईयों को प्रतिस्पर्धा से बचाने के लिए कुछ वस्तुओं के उत्पादन को छोटे पैमाने के लिए रिजर्व कर दिया गया है। देश में 836 मदों का उत्पादन पूर्णतया लघु पैमाने के उद्योगों के लिए आरिक्षत किया

गया है। लेकिन भारत सरकार ने एस.डी. श्रीवास्तव समिति के सुझाव अनुसार जनवरी, 1986 में 250 मदों को रिजर्व सूची से हटाने का फैसला किया था। इसका कारण यह था कि कई वर्षों तक इन उद्योगों का विकास नहीं हो पाया था तथा माल की मात्रा व किस्म आवश्यकतानुसार विकसित नहीं किये जा सके थे। इनमें उच्च टेक्नोलॉजी व अधिक मात्रा में पूंजी की आवश्यकता के कारण पर्याप्त विनियोग नहीं किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में इन क्षेत्रों में बड़ें उद्योगों का प्रवेश हो गया जिससे इन मदों को लघु उद्योगों की रिजर्व सूची से हटाना आवश्यक हो गया था। आज भी लघु उद्योगों के लिए रिजर्वेशन की नीति जारी है।

(3) दुर्लभ कच्चे माल का आवंटन – सरकार स्वदेशी व विदेशी कच्चे माल के आवंटन में लघु उद्योगों के हितों का ध्यान रखने लगी है। पिछले वर्षों में भारत सरकार की निर्यात–आयात नीति में लघु इकाइयों को आयात लाइसेन्स देने में अधिक उदारता बरती गई है। लघु इकाइयों के लिए कच्चे माल, मशीनरी व कल–पुर्जों के आयात की व्यवस्था बढ़ाई गई है।

(4) वित्तीय सहायताा – लघु उद्योगों को विभिन्न प्रकार वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए निम्नलिखित सरकारी व संस्थागत एजेन्सियाँ कार्यरत हैं –

(अ) जोखिम पूंजी (Risk Capital) –

(i) राज्य वित्त निगम, (ii) लघु उद्योग निगम ।

(आ) दीर्घकालीन व मध्यमकालीन कर्ज –

(i) उद्योगों के राज्य–निदेशालय (उद्योगों को राजकीय सहायता अधिनियम के अन्तर्गत)।

(इ) अल्पकालीन कार्यशील पूंजी – व्यापारिक बैंक।

(ई) किस्तों की स्कीम (Hire-purchase Scheme)-

(i) राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम,

(ii) लघु उद्योग विकास निगम।

लघु उद्योग विकास कोष (Small Industries Development Fund (SIDF)) की स्थापना – देश में लघु उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए भारतीय औद्योगिक विकास बैंक ने 20 मई 1986 को एक लघु उद्योग विकास कोष (SIDF) की स्थापना की थी। इस कोष में धनराशि की व्यवस्था भारतीय औद्योगिक विकास बैंक के सामान्य कोष से की गई थी। इस कोष से लघु उद्योगों के विकास, विस्तार, विविधीकरण, आधुनिकीकरण व पुनर्स्थापना के लिए कर्ज देने का कार्यक्रम रखा गया है। वित्तीय सहायता राज्य वित्त निगमों, राज्य औद्योगिक विकास निगमों, व्यापारिक बैंकों व अन्य संस्थाओं के माध्यम से देने की व्यवस्था की गई है।

एक राष्ट्रीय–इक्विटी कोष (NEF) भारत सरकार की साझेदारी में स्थापित किया गया है जिसका उदेश्य रुग्ण लघु पैमाने की इकाइयों के पुनर्स्थापन के लिए इक्विटी–किस्म की सहायता देना है। यह प्रति प्रोजेक्ट 75 हजार रुपये तक की सहायता स्वीकृत कर सकता है, जिस पर सर्विस चार्ज 1 प्रतिशत होता है। यह बैंकों को पुनर्वित की सहायता देता हैं जो उद्योग को कार्यशीलन पूंजी व अवधि–कर्ज की सुविधा प्रदान करते हैं।

भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (SIDBI)– अब लघु विकास कोष (SIDF) व राष्ट्रीय इक्विटी–कोष (NEF) दोनों का संचालन भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (SIDBI) को सौंप दिया गया है, जो IDBI का एक सहायक संस्थान बनाया गया है।

SIDBI की स्थापना का अधिनियम संसद में अक्टूम्बर,1989 में पारित हुआ था और इसने 2 अप्रैल, 1990 में अपना कार्यारम्भ कर दिया था। यह निम्न बातों पर बल देता है– (अ). चालू इकाइयों के टेक्नोलॉजिकल उत्थान व आधुनिकीकरण के लिए कदम उठाना, (ब.) इनके लिए घरेलू व विदेशी बाजारों का विस्तार करना, (स) अर्द्ध–शहरी क्षेत्रों में इनके माध्यम से रोजगार के अवसर बढ़ाना ताकि जनसंख्या का पलायन शहरों व महानगरों की तरफ रुक सके।

SIDBI– की वित्तीय सहायता राज्य वित्त निगमों, राज्य औद्योगिक विकास निगमों, व्यापारिक बैंकों, सहकारी व प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों के मार्फत लघु उद्योगों को पहुंचाई जाती है।

अभियांत्रिकी स्नातकों, भूतपूर्व सुरक्षा सेवा कर्मचारियों, विज्ञान– स्नातकों आदि को लघु इकाइयाँ स्थापित करने के लिए जो सुविधाऐं दी जाती है वे पिछड़े क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जन जातियों के व्यक्तियों को भी दी गई है।

औद्योगिक बस्तियों के कार्यक्रम द्वारा लघु इकाइयों को लाभ पहुंचाया जाता है।

सरकार माल की खरीद में लघु इकाइयों को प्राथमिकता देती है। आजकल कई प्रकार की वस्तुऐं लघु इकाइयों से खरीदी जाती है ताकि इनकी बिक्री की समस्या काफी सीमा तक हल हो सके।

पिछड़ें क्षेत्रों में विकास के लिए विशेष रियायतें – 1 मार्च 1973 से सरकार ने पिछड़े क्षेत्रों में स्थापित किये जाने वाले उद्योगों के लिए सब्सिडी की राशि स्थिर पूंजी–निवेश का 15 प्रतिशत या 15 लाख रुपये, जो भी कम हो निर्धारित की गई थी। 1971 से परिवहन–सब्सिडी की स्कीम लागू की गई थी जिसमें पिछड़े क्षेत्रों में कच्चे माल व निर्मित माल की ढुलाई पर परिवहन–लागत का 50% सब्सिडी के रुप में देने की व्यवस्था की गई थी, जिसे सितम्बर 1983 में बढ़ाकर 75 प्रतिशत कर दिया गया था। इस प्रकार पिछड़े जिलों में लघु व मध्यम इकाइयों के विकास के लिए सब्सिडी की व्यवस्था की गई है। बीच में केन्द्रीय–विनियोग–विकास के लिए सब्सिडी की स्कीम 1 अक्टूम्बर, 1988 से बंद कर दी गई थी, जिसे 1 अप्रैल, 1990 से पुनः पिछड़े क्षेत्रों में लघु उद्योगों को 15 प्रतिशत सब्सिडी देने के रुप में चालू किया गया ।

सरकार निर्यात बढ़ाने में भी लघु इकाइयों की मदद करती है।

आजकल सहायक उद्योगों के रुप में लघु उद्योगों के विकास पर विशेष रुप से बल दिया जा रहा है। इस कार्यक्रम में लघु उद्योग व बड़े उद्योगों के लिए आवश्यकता साज–सामान बनाते हैं जिससे दोनों के उत्पादन में प्रभावपूर्ण ताल–मेल व समन्वय बैठाया जा सकता है। सहायक उद्योगों का विकास विशेषतया निम्न क्षेत्रों में किया गया है – संचार, इलेक्ट्रोनिक्स व मोटरगाड़ियाँ, भारी इंजीनियरिंग तथा कृषि–आधारित उद्योग।

सरकार ने लघु उद्योगों के विकास के लिए जिला–उद्योग केन्द्रों (District Industries Centers) को पुर्नगठन किया गया है। अब तक स्वीकृत डीआईसी की संख्या 422 हो गई है जो 428 जिलों में फैले हुए है। इनमें कई लघु औद्योगिक इकाइयाँ स्थापित की गई हैं और बहुत से लोगों को रोजगार दिया गया है। DICs के माध्यम से उद्योगों के लिए साख की व्यवस्था भी की गई है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. राजस्थान में कितने प्रतिशत लोगों के रोजगार का आधार पंजीकृत लद्यु उद्योग है।

(क) 9.5 लाख (ख) 8.5 लाख

(ग) 10 लाख (घ) 7 लाख ( )

2. राजस्थान में भारत की कुल पशु संख्या का कितना प्रतिशत पाया जाता है।

(क) 15 % (ख) 22%

(ग) 25 % (घ) 27 % ( )

3. राजस्थान में आठवीं पंचवर्षीय योजना में लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास व्यय है।

(क) 1.98 करोड़ रु. (ख) 70.97 करोड़ रु.

(ग) 47.6 करोड़ रु. (घ) 3.95 करोड़ रु. ( )

4. 1955–66 में लघु उद्योगों की राजस्थान में संख्या थी।

(क) 2750 (ख) 5230

(ग) 3210 (घ) 4700 ( )

5. 1993–94 में लघु उद्योगों का उत्पादन कितना करोड़ था।

(क) 200 (ख) 250

(ग) 210 (घ) 150 ( )

6. लघु उद्योगों मं अनुमानित पूँजी विनियोग 2005–06 में कितना था।

(क) 4368 (ख) 5368

(ग) 6930 (घ) 4540 ( )

7. डॉ0 आबिद हुसैन समिति के अनुसार कितनी पूँजी वाले उद्योग लघु उद्योगों की श्रेणी में आते है।

(क) 1 करोड़ (ख) 2 करोड़

(ग) 3 करोड़ (घ) 4 करोड़ ( )

8. राजस्थान में कितने जिला उद्योग केन्द्र है।

(क) 34 (ख) 32

(ग) 28 (घ) 27 ( )

अति लघूतरात्मक प्रश्न –

1. लघु उद्योग विकास निगम की स्थापना किस सन् में हुई ?
2. IDBI के सहायक संस्थान का नाम बताइए।
3. खादी उद्योग का प्रारंभ किस के द्वारा किया गया ?
4. मयूर बीड़ी फैक्ट्री कहां स्थित है ?
5. किस स्थान परन ऊंट की खाल से विविध सामान बनाए जाते है।
6. हाथी दांत के लिए राजस्थान में विख्यात केन्द्र का नाम बताइए।
7. गुड एवं खांडसारी उद्योग में कितने लोगों को रोजगार मिला हुआ है।
8. खादी उद्योग किस सन् में प्रारंभ हुआ ?
9. 1 करोड़ से अधिक लागत वाले उद्योग किन उद्योगों या श्रेणी में शामिल होते है ?

लघूतरात्मक प्रश्न –

1. कुटीर उद्योग से क्या तात्पर्य हैं ?
2. आबिद हुसैन समिति के अनुसार लघु उद्योग से क्या तात्पर्य हैं ?
3. हस्त कला का क्या अभिप्राय है ?
4. लघु उद्योगों के लिए आरक्षण की नीति से आप क्या समझते है ?
5. खादी का प्रारंभ गांधी जी द्वारा क्यो किया गया ?

6. ''फैशन फॉर डवलपमेंट'' को समझाइए।
7. राजस्थान खादी ग्रामोद्योग के प्रमुख उद्देश्य बताइए।
8. व्यापक सहायता कार्यक्रम को समझाइए।

निबंधात्मक प्रश्न —

1. लघु एवं कुटीर उद्योगों के महत्व पर प्रकाश डालिए।
2. राजस्थान में पाये जाने वाले लघु एवं कुटीर उद्योगों का वर्णन कीजिए।
3. कुटीर एवं लघु उद्योगों के विकास हेतु सरकारी उपाय बताइए।
4. कुटीर एवं लघु उद्योगों की समस्या एवं समाधान पर प्रकाश डालिए।

1. NDA age: 16 ½ - 19 Qualification: 10 +2 or Equivalent for Army and with Physics and Maths for AirForce &Navy. After selection training at NDA Khadakwasla Pune. Duration : 3 yrs at NDA & 1 yr at IMA.

2. 10 +2Tech Entry Scheme(TES)age:16½ -19½ Qualification:10+2Physicis, Chemistry and Maths (Aggregate70%and above) After selection training at IMA Dehradun Duration : 5 yrs (1 yr IMA & 4 Yrs Engg Degree Permanent Commission after 4 yrs

3. NCC (Spl) Entry for Men & Women age: 19 – 25 Qualification: Graduation with 50% aggregate marks 2 yrs service in NCC Sr Div. Army with minimum 'B' grade in 'C' certificate exam. After selection training at OTA Chennai Duration : 49 weeks.

अध्याय – 8

पंचायतीराज एवं ग्रामीण विकास

''ग्रामीण विकास का तात्पर्य एक ऐसी व्यूह–रचना से है जिसके द्वारा ग्रामीण लोगों के जीवन–स्तर में सुधार तथा उनकी आय व रोजगार के स्तर में वृद्धि का प्रयास किया जाता है।''
विस्तृत अर्थ में ग्रामीण विकास की अवधारणा का इतिहास भारत में अत्यन्त प्राचीन है। भारत प्राचीन काल से गांवों का देश रहा है। भारत की प्राचीन अर्थव्यवस्था मुख्यतः 'ग्राम प्रधान अर्थव्यवस्था' थी। ग्रामीण जनता की आवश्यकतायें सीमित थी जिनकी पूर्ति ग्रामीण उत्पादन द्वारा ही पूरी हो जाती थी। गांव आर्थिक दृष्टि से प्रायः आत्मनिर्भर थे। ग्रामीण जनसंख्या व्यावसायिक आधार पर किसानों, दस्तकारों और सेवकों में विभाजित थी। गांव के झगड़े ग्रामीण पंचायत द्वारा निपटा दिये जाते थे। गांव शहरों की उथल–पुथल से प्रायः अप्रभावित रहते थे। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में मध्यस्थों का अभाव था। यद्यपि कृषि ही मुख्य व्यवसाय था, लेकिन अन्य उद्योग भी बड़े प्रसिद्ध थे। भारत के हस्त–शिल्प विख्यात थे।

ग्रामीण विकास की अवधारणा का सूत्रपात एवं विकास

(Beginning and Expansion of the Concept of Rural Development)

ग्रामीण विकास की अवधारणा का सूत्रपात महात्मा गांधी के इस कथन से हुआ ''भारत की आत्मा गांवों में बसती है। जब तक गांवों का विकास नहीं होगा तथा गांव पुनः आत्म–निर्भर नहीं होगें, तब तक देश का विकास नहीं हो सकता।''ग्रामीण विकास के संबंध में गांधीजी की उपर्युक्त अवधारणा को स्वीकार करते हुए प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि विकास को उच्च प्राथमिकता दी गयी। लेकिन इसके बाद पं. नेहरु ने महालानोबिस के मोडल के आधार पर औद्योगिक विकास पर अधिक बल दिया। लाल बहादुर शास्त्री ने 'जय जवान–जय किसान' का नारा देकर कृषि के महत्व को पुनः प्रतिष्ठित किया तथा श्रीमती इंदिरा गांधी ने ग्रामीण विकास का मार्ग प्रशस्त किया
।

सामुदायिक विकास :– सामुदायिक विकास ग्रामीण विकास प्रक्रिया का ही एक अंग माना जाता है। जिसके तहत सभी समुदायों के विकास पर बल दिया है। जिसके द्वारा सामाजिक असमानता को कम करने का प्रयास किया जाता है। सामुदायिक विकास की अवधारणा को साकार करने के लिए पंचायती राज संस्थाओं का प्रारंभ किया गया। तथा इस अवधारणा को साकार करने के लिए सरकार प्रयासरत है।

पंचायतीराज व्यवस्था :– भारतीय संघ के अधिकांश राज्यों में पंचायत राज संस्थाओं के गठन के लिए अधिनियम पारित किये गये। बलवन्तराय मेहता समिति की सिफारिशों के अनुसार स्थानीय शासन की इस त्रि–स्तरीय योजना में पंचायत समिति सबसे महत्वपूर्ण संस्था है। मुख्य विकास कार्य पंचायत समिति को ही सौपें गये है और जिला परिषद का कार्य तो पंचायत समितियों के कार्य संचालन एवं उनमें तालमेल स्थापित करना है। पंचायत राज संस्थाओं का संगठनात्मक ढांचा निम्न तीन स्तरों पर निर्मित है–

1. ग्राम सभा व ग्राम पंचायत
2. पंचायत समितियां
3. जिला परिषदें।

भारतीय संविधान के प्रावधानों के अनुसार भारत के प्रत्येक राज्य को त्रिस्तरीय पंचायती राज की व्यवस्था अपनाये जाने का सामान्य निर्देश दिया गया है। इन्ही प्रावधानों में 20 लाख से कम की जनसंख्या वाले राज्यों को पंचायती राज की मध्यवर्ती इकाई के गठन से छूट प्रदान की गई है। भारत में पंचायती राज संस्थाओं का संगठन एवं कार्यों को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है।

ग्राम सभा :– पंचायतीराज व्यवस्था में ग्राम सभाओं का विशेष महत्व माना गया है। यद्यपि बलवन्त राय मेहता समिति ने पंचायतीराज के ढॉचे में ग्राम सभा को कोई स्थान नहीं दिया था, फिर भी पंचायतीराज को अपनाने वाले राज्यों ने ग्राम सभा की रचना का महत्व स्वीकार किया और इसे पंचायतीराज व्यवस्था के आधार के रुप में विकसित किया है। यह माना गया है कि ग्राम स्तर पर पंचायत, ग्राम सभा से ही अपने अधिकार ग्रहण करे और ग्राम सभा के प्रति निरन्तर उत्तरदायी रहे, क्योंकि ग्राम सभा में गांव के सभी वयस्क नागरिक सम्मिलित होते है। वस्तुतः किसी भी पंचायत क्षेत्र के समस्त वयस्क नागरिकों के सम्मिलित स्वरुप या समूह को 'ग्राम सभा' कहते है।

ग्राम सभा का गठन–राजस्थान पंचायतीराज अधिनियम 1994 के अनुसार प्रत्येक पंचायत सर्किल के लिए एक ग्राम सभा के गठन का प्रावधान किया गया है, जिसमें पंचायत क्षेत्र के भीतर समाविष्ट गांव या गांवों के समूह से सम्बन्धित निर्वाचक नामावलियों में पंजीकृत व्यक्ति होंगे। 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने वाला प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह किसी भी जाति या लिंग का हो, ग्राम सभा का सदस्य हो सकता है।

I. ग्राम पंचायत :– ग्राम पंचायत ग्राम स्तर पर एक ऐसी निर्वाचित इकाई है जो ग्राम सभा की कार्यकारी इकाई होती है। पंचायतीराज व्यवस्था में यह निम्नस्तरीय इकाई है। भारत में ग्राम पंचायत को भिन्न–भिन्न नामों से जाना जाता है। राजस्थान में इसे 'पंचायत' के नाम से जाना जाता है। हमारे देश में औसतन लगभग 2 हजार की जनसंख्या पर एक पंचायत गठित की जाती है। विभिन्न राज्यों में ग्राम पंचायतों के सदस्यों की संख्या सामान्यतया 5 से लेकर 31 के बीच होती है। वर्तमान में भारतीय संविधान में किये गये 73 वें संशोधन के पश्चात् देश में लगभग सभी राज्यों में पंचायतों का कार्यकाल 5 वर्ष कर दिया गया है। पंचायत के सदस्य 'पंच' कहलाते है और उनका चुनाव प्रत्यक्ष रुप से किया जाता है।

II. पंचायत समिति (Panchayat Samiti) :– पंचायत समिति पंचायती राज व्यवस्था का मध्यवर्ती स्तर है। इस स्तर को राजस्थान, बिहार, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र व उड़ीसा में 'पंचायत समिति' कहते है । 73 वें संविधान संशोधन अधिनियम के अनुसार वर्तमान में पंचायत समितियों का कार्यकाल 5 वर्ष का है। राजस्थान ही नहीं, वरन् अन्य प्रान्तों में भी पंचायती राज व्यवस्था में 'पंचायत समिति' को महत्वपूर्ण इकाई माना गया है। यह विकास के कार्यक्रम बनाती है और उन्हें कियान्वित करती है। इसे अधिनियम द्वारा मौलिक, प्रशासनिक और वित्तीय कार्य व शक्तियां सौपी गई है।

III जिला परिषद् (Zila Parishad) -पंचायती राज व्यवस्था में सबसे शीर्ष पर प्रत्येक जिले में एक जिला–परिषद होती है। राजस्थान, बिहार, उड़ीसा, पंजाब, हरियाणा, गुजरात, मध्यप्रदेश तथा प. बंगाल में इसे 'जिला परिषद' ही कहते है। गुजरात सरकार द्वारा पंचायत अधिनियम का 1986 तक जो संशोधित प्रारुप प्रकाशित किया गया है उसके अनुसार जिला स्तरीय इकाई को

'जिला पंचायत' का नाम दिया गया है। 73 वें संविधान संशोधन के पश्चात् प्रायः सभी राज्यों में इसे जिला परिषद या जिला पंचायत कहा गया है।

73 वॉ संविधान संशोधन : पंचायती राज संस्थाओं को स्वशासित संस्थाओं के रुप में विकसित करने के लिए केन्द्रीय सरकार ने 24 अप्रैल 1993 को संविधान के 73वें संविधान संशोधन विधेयक को लागू कर पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक अहमियत प्रदान की। 73 वें संविधान संशोधन द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को वैधानिक मान्यता प्रदान की गई है। 24 अप्रेल 1993 से लागू 73वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1993 की कुछ प्रमुख विशेषताऐं या प्रावधान निम्नलिखित हैं –

(1) पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक स्तर – 73 वां संविधान संशोधन अधिनियम पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक स्तर प्रदान करने के लिए लाया गया है। इस अधिनियम द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक मान्यता और चुनावों से संबंधित प्रत्याभूति प्रदान की गई है। फलतः अब इन संस्थाओं को संवैधानिक मान्यता प्राप्त हो गई है।

(2) ग्राम सभा का प्रावधान –73वां संविधान संशोधन अधिनियम यह उपबन्ध करता है कि ग्राम स्तर पर ग्रामसभा होगी जो ऐसी शक्तियों का संव्यवहार और कर्त्तव्यों का निर्वाह कर सकेगी जो राज्य विधानमण्डल अधिनियम द्वारा विनिश्चित करें। राजस्थान में वर्ष में कम से कम चार बार ग्रामसभा के आयोजन का प्रावधान किया गया है।

(3) पंचायती राज संस्थाओं का गठन – भारतीय संविधान का अनुच्छेद 243 ख यह प्रावधान करता है कि प्रत्येक राज्य में ग्राम स्तर पर, मध्यवर्ती स्तर पर और जिला स्तर पर पंचायती राज संस्थाओं का गठन किया जायेगा, किन्तु उस राज्य में जिसकी जनसंख्या 20 लाख से अधिक नहीं है।

(4) पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव – पंचायती राज की मध्यवर्ती व जिला स्तरीय इकाइयों के सभापति/अध्यक्ष के चुनाव के लिए इस संशोधन से यह प्रावधान किया गया है कि संबंधित इकाइयों के निर्वाचित सदस्य अपने में ही से एक को सभापति/अध्यक्ष के रुप में निर्वाचित कर सकेंगे।

(5) पंचायती राज संस्थाओं के चुनावों में आरक्षण – पंचायती राज संस्थाओं के चुनावों में आरक्षण के संबंध में 73 वां संविधान संशोधन के माध्यम से निम्न प्रावधान किये गये है –

(i) अनुसूचित जाति/जनजाति के लिए आरक्षण – प्रत्येक पंचायत क्षेत्र में अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के लिए निर्वाचन हेतु स्थानों/सीटों का आरक्षण किया जायेगा। इन वर्गों के लिए उपर्युक्त रीति से आरक्षित की गई कुल सीटों में कम से कम एक–तिहाई स्थान अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के लिए आरक्षित किये जायेंगे।

(ii) महिलाओं के लिए आरक्षण – 73वें संविधान संशोधन के माध्यम से प्रत्येक पंचायती राज संस्था के चुनावों में महिलाओं हेतु स्थानों का आरक्षण भी किया गया है। एक–तिहाई स्थानों को महिलाओं के लिए आरक्षित किया जायेगा और इस प्रकार आरक्षित किये गये स्थानों का आवर्तन बारी–बारी से किया जाता रहेगा।

(iii) सभापति/अध्यक्ष के लिए आरक्षण – संविधान अधिनियम में यह भी प्रावधान किया गया है कि ग्राम पंचायत व पंचायती राज की अन्य इकाईयों के अध्यक्ष/सभापति के पद भी

अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति व महिलाओं के लिए, राज्य विधानमण्डल अधिनियम बनाकर प्रक्रिया निर्धारित करते हुए आरक्षित किये जा सकेंगे।

(iv) पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण – संविधान संशोधन अधिनियम में यह भी प्रावधान किया गया है कि राज्य विधान मण्डल, समस्त पंचायती राज संस्थाओं में पिछड़े वर्गों के लिए भी आरक्षण का प्रावधान, अधिनियम बनाकर कर सकेंगे।

(v) कार्यकाल– 73 वें संविधान संशोधन अधिनियम के अनुसार प्रत्येक पंचायती राज इकाई का कार्यकाल, यदि यह राज्य में तत्समय प्रवर्तित किसी विधि के अधीन पहले भंग नहीं कर दी जाती है तो 5 वर्ष का होगा और इससे अधिक नहीं। अधिनियम में यह भी प्रावधान किया गया है कि इन संस्थाओं के चुनाव उनके निर्धारित कार्यकाल समाप्त होने के पूर्व कराये जायेंगे, और यदि ये संस्थाऐं समय से पूर्व भंग कर दी जाती हैं तो भंग किये जाने की तिथि से 6 माह की अवधि में नये चुनाव कराये जाने होंगे।

(vi) अर्हताओं के सम्बन्ध में प्रावधान – 73वें संविधान संशोधन अधिनियम में कहा गया है कि सम्बन्धित राज्य में चुनाव की अनर्हताओं या अयोग्यताओं से सम्बन्धित प्रवर्तित किसी कानून द्वारा अयोग्य घोषित किये जाने पर व्यक्ति इन संस्थाओं के चुनावों में भाग नहीं ले सकेगा।

(vii) पंचायती राज संस्थाओं की शक्तियां और दायित्व – संविधान संशोधन अधिनियम में कहा गया है कि संविधान के प्रावधानों के अधीन रहते हुए राज्य विधान मण्डल कानून बनाकर इन संस्थाओं को स्वायत्त शासन की इकाइयों के रुप में कार्य करने में सक्षम बनाने के लिए आवश्यक शक्तियां एवं सत्ता दे सकेंगे।

(viii) कर लगाने व कोष एकत्रित करने की शक्तियां – 73वें संविधान संशोधन मे यह प्रावधान है कि जो कर राज्य सरकार द्वारा लगाये जायेंगे उनका राज्य सरकार व पंचायती राज इकाइयों के मध्य वितरण किया जा सकेगा और जो कर पंचायती राज संस्थाऐं आरोपित करेंगी उन्हें न केवल एकत्र कर सकेंगी अपितु उनका व्यव भी अपने स्तर पर कर सकेंगी।

(ix) वित आयोग के गठन का प्रावधान – संविधान संशोधन अधिनियम में यह व्यवस्था की गई है कि राज्यों के राज्यपाल 73वें संविधान संशोधन अधिनियम के लागू होने के एक वर्ष की अवधि में और उसके पश्चात् प्रति 5 वर्ष के अन्तराल पर राज्यों की पंचायती राज संस्थाओं की वित्तीय स्थिति की समीक्षा और संस्थाओं की वित्तीय स्थिति में सुधार के लिए किये जाने वाले उपायों तथा वित्तीय स्वरुप के संदर्भ में सौंपे गये किन्ही भी अन्य कार्यों का निष्पादन करने के लिए राज्य वित्त आयोग का गठन करेंगे।

(x) पंचायती राज संस्थाओं के लेखा व अंकेक्षण के सम्बन्ध में प्रावधान–संविधान संशोधन अधिनियम में यह भी प्रावधान है कि विभिन्न स्तर की पंचायती राज संस्थाओं द्वारा रखे जाने वाले लेखे व उसके अंकेक्षण के सम्बन्ध में, राज्य विधान मण्डल विधि बनाकर आवश्यक प्रावधान कर सकेंगे।

(xi) चुनावों से सम्बन्धित प्रावधान – 73वॉ संविधान संशोधन अधिनियम यह भी व्यवस्था करता है कि राज्य में निर्वाचक नामावलियों की तैयारी, चुनावों के आयोजन और पंचायती राज संस्थाओं के चुनावों से सम्बन्धित समस्त पक्षों का अधीक्षण, निर्देशन और नियन्त्रण राज्यपाल द्वारा नियुक्त किये गये एक राज्य निर्वाचन आयोग में निहित होगा।

(xii) ग्रामसभा के अधिकार एवं शक्तियों में वृद्धि –73 वें संविधान संशोधन अधिनियम के अन्तर्गत ग्रामसभा को गौण वनोत्पदों के स्वामित्व, विकास योजनाओं की मंजूरी, विभिन्न कार्यक्रमों के लाभार्थियों के चयन, भू–अधिग्रहण के बारे में परामर्श, गौण जलाशयों आदि के प्रबंध, खनिज पट्टों के नियन्त्रण, नशीले पदार्थों की बिक्री के नियमन/निषेध, अनुसूचित जनजातियों की भूमि के अवैध हस्तारण को रोकने तथा ऐसी हस्तान्तरित भूमि वापस दिलाने, गांव की मण्डियों के प्रबन्ध, अनुसूचति जनजातियों को दिये जाने वाले ऋण पर नियन्त्रण और सभी सामाजिक क्षेत्रों में संस्थाओं और कार्यकर्त्ताओं के नियन्त्रण सम्बन्धी शक्तियां प्रदान की गई हैं।

(xiii) जिला समितियों का गठन – 73 वें संविधान संशोधन के अनुसार सम्पूर्ण जिले की विकास योजना का मसौदा तैयार करने के लिए जिला नियोजन समिति का गठन किया जायेगा।

(xiv) पंचायतों के कार्य – संविधान की 11वीं अनुसूची में 29 विषय सम्मिलित किये गये हैं,जिन पर पंचायतें विधि या कानून बनाकर जिन कार्यो को कर सकेंगी, वे इस प्रकार हैं– (1)कृषि जिसके अन्तर्गत कृषि विस्तार भी शामिल है, (2) भूमि सुधार, भूमि सुधार कार्यान्वयन,चकबंदी और भूमि संरक्षण, (3) लघु सिंचाई, जल प्रबंध और जल आच्छादन तथा अन्य कार्य ।

नई पंचायती राज व्यवस्था की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें समाज के कमजोर वर्गों एवं महिलाओं के लिए स्थान आरक्षित किये जाने की योजना है। राजस्थान में तो अन्य पिछड़ा वर्ग को भी आरक्षण प्रदान दिया गया है। दूसरी विशेषता यह है कि पंचायती राज संस्थाओं का कार्यकाल सुनिश्चित किया गया है। बीच में एक समय ऐसा आया जब पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव उपेक्षित से हो गये। वर्षों तक इन संस्थाओं के चुनाव नहीं हुए जिससे जनसाधारण की इस व्यवस्था के प्रति आस्था डगमगाने लगी। इसी आस्था को पुनः 73वें संविधान संशोधन ने पुनःकायम किया है। तीसरी विशेषता पंचायती राज संस्थाओं को व्यापक शक्तियां प्रदान किया जाना है। संविधान में 11वीं अनुसूची जोड़कर पंचायती राज संस्थाओं के अधिकार एवं शक्तियां सुनिश्चित कर दी गई।

पंचायती राज अधिनियम 1994

भारत में शहरी स्थानीय निकायों को सशक्त बनाने तथा इन्हें संवैधानिक आधार प्रदान करने के उद्‌देश्य से भारतीय संसद द्वारा 1992 में पारित और 1 जून 1993 से लागू 'नगरपालिकाऐं' शीर्षक से नया भाग जोड़ा गया है।

राजस्थान पंचायती राज अधिनियम, 1994 की प्रमुख विशेषताऐं निम्नलिखित हैं –

1. 24 अप्रेल, 1994 से लागू – राजस्थान पंचायती राज अधिनियम, 1994 को राज्य सरकार द्वारा विधानसभा में पारित करवा कर 24 अप्रैल, 1994 से सम्पूर्ण राज्य में लागू कर दिया गया है।

2. **ग्रामसभा** – राजस्थान पंचायती राज अधिनियम, 1994 के अनुसार राज्य में प्रत्येक पंचायत सर्किल के लिए एक ग्रामसभा होगी जिसमें पंचायत क्षेत्र के भीतर समाविष्ट गांव या गांवों के समूह संबंधित निर्वाचक नामावलियों में पंजीकृत व्यक्ति सदस्य होगें। जनवरी 2000 में एक अध्यादेश द्वारा ग्रामसभा के स्थान वार्ड ग्राम सभा का प्रावधान किया गया है। वार्ड सभा की प्रतिवर्ष कम'–से–कम दो बैठकें होंगी।

कार्य – ग्रामसभा निम्नांकित कार्य करेगी– (i) पंचायत क्षेत्र से संबंधित विकास योजनाओं के कियान्वयन में सहायता करना, –;(ii) ऐसे क्षेत्र से संबंधित विकास योजनाओं के कियान्वयन हेतु हिताधिकारियों की पहचान, (iii) सामुदायिक कल्याण कार्यक्रमों के लिए स्वैच्छिक श्रम और वस्तु रुप में या नकद दोनों ही प्रकार के अभिदान जुटाना, (iv) ऐसे क्षेत्र के भीतर प्रौढ़ शिक्षा और परिवार कल्याण को प्रोत्साहित करना, ;(vi) पंचायत क्षेत्र में समाज के सभी समुदायों में एकता और सौहार्द्र बढ़ाना, ;(v) किसी भी क्रियाकलाप, योजना, आय और व्यय–विशेष के बारे में पंचायत के सरपंच और सदस्यों से स्पष्टीकरण चाहना, तथा ;(vii) अन्य कार्य, जो विहित किये जायें।

3. पंचायत की स्थापना – राज्य सरकार, किसी नगरपालिका या किसी छावनी बोर्ड में शामिल नहीं किये गये किसी गांव या गॉवों के किसी समूह को समाविष्ट करने वाली किसी भी स्थानीय क्षेत्र की पंचायत सर्किल घोषित कर सकेगी तथा इस घोषित सर्किल के लिए एक पंचायत होगी।

4. पंचायत समिति की स्थापना – राज्य सरकार एक ही जिले के भीतर के किसी भी स्थानीय क्षेत्र को एक खण्ड के रुप में घोषित कर सकेगी तथा इस घोषित प्रत्येक खण्ड के लिए एक पंचायत समिति होगी।

5. जिला परिषद् की स्थापना – प्रत्येक जिले के लिए एक जिला परिषद् होगी जिसकी संरचना इस प्रकार होगी –

(i) इतने प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्यक्षतः निर्वाचित सदस्य जो अनुच्छेद 14(2) के अधीन अवधारित किये जायें,

(ii) ऐसे निर्वाचन क्षेत्रों का प्रनिधित्व करने वाले लोकसभा के और राज्य विधानसभा के सभी सदस्य जिनमें जिला परिषद क्षेत्र सम्पूर्णतः या अंशतः समाविष्ट है।

(iii) जिला परिषद क्षेत्र के भीतर निर्वाचकों के रुप में पंजीकृत राज्यसभा के सभी सदस्य।

6. स्थानों का आरक्षण – राजस्थान पंचायती राज अधिनियम, 1994 में व्यवस्था है कि प्रत्येक पंचायती राज संस्था इसी क्रम में यह भी प्रावधान है कि प्रत्येक पंचायती राज संस्था में प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले स्थानों की कुल संख्या के एक–तिहाई से अन्यून स्थान जिनमें अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और पिछड़े वर्गों की महिलाओं के लिए आरक्षित स्थानों की संख्या में विभिन्न वार्डों या निर्वाचन क्षेत्रों के लिए चक्रानुक्रम द्वारा ऐसी रीति से आवंटित किये जायेगें जो विहित किये जायें।

7. अध्यक्षों के पदों का आरक्षण – राजस्थान पंचायती राज अधिनियम के तहत सरपंचों, प्रधानों, जिला प्रमुखों के पद अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, पिछड़े वर्गों तथा महिलाओं के लिये आरक्षित किये गये है।

8. पंचायती राज संस्थाओं का कार्यकाल और निर्वाचन – प्रत्येक पंचायती राज संस्था यदि पहले विघटित नहीं कर दी जाये तो सम्बन्धित संस्थाओं की प्रथम बैठक के लिए राज्य सरकार द्वारा नियत तारीख से पांच वर्ष तक बनी रहेगी, इससे अधिक नहीं। किसी पंचायती राज संस्था का गठन करने हेतु निर्वाचन उसके कार्यकाल की समाप्ति के पूर्व और विघटन की स्थिति में, उसके विघटन की तारीख से छः मास की कालावधि की समाप्ति से पूर्व पूरा किया जायेगा। अधिनियम

में यह भी प्रावधान है कि यदि भंग की हुई संस्था का कार्यकाल निर्धारित कार्यकाल 6 महीने से कम रह गया है तो ऐसे चुनाव करवाये जाने आवश्यक नहीं होंगे। भंग किये जाने के पश्चात् नई चुनी हुई पंचायती राज इकाई, उस शेष अवधि के लिए ही कार्य करेगी जितनी अवधि के लिए वह इकाई कार्य करती, यदि वह भंग नहीं होती।

9. पंचायत सलाहकार समिति– राजस्थान पंचायती राज अधिनियम, 1994 में प्रत्येक पंचायत स्तर पर प्रशासक को सलाह देने के लिए सलाहकार समिति गठित करने का प्रावधान किया हुआ है। अधिनियम की अनुपालना में राजस्थान सरकार ने एक अधिसूचना जारी कर इस प्रकार की समितियों का गठन कर दिया है।

सचिव, ग्राम पंचायत या ग्रामसेवक को इस सलाहकार समिति का अध्यक्ष बनाया गया है।

10. राज्य वित्त आयोग – राजस्थान पंचायती राज अधिनियम 1994 में यह व्यवस्था है कि राज्य सरकार अधिसूचना जारी कर पंचायतों के लिए राज्य वित्त आयोग का गठन कर सकेगी।

11. दोहरी सदस्यता पर निर्बन्धन – कोई भी व्यक्ति, राजस्थान पंचायती राज अधिनियम द्वारा अभिव्यक्ततः प्राधिकृत के सिवाय दो या अधिक पंचायती राज संस्थाओं का सदस्य नहीं होगा।

राजस्थान पंचायती राज (संशोधन) अध्यादेश, 2000

(Rajasthan Panchayati Raj (amendment) Ordinance, 2000)

राजस्थान सरकार द्वारा राजस्थान पंचायती राज अधिनियम, 1994 में 7 जनवरी, 2000 को एक अध्यादेश जारी कर अनेक संशोधन किये गये हैं। इस अध्यादेश के माध्यम से पंचायत समितियों को और अधिकार एवं शक्तियां प्रदान की गई है। इसके प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित हैं–

1. ग्रामसभा के स्थान पर वार्ड सभा की व्यवस्था की गई है। इस दृष्टि से राजस्थान देश का पहला ऐसा राज्य है। अब वार्ड सभा के माध्यम से ही उस वार्ड में गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों को लाभान्वित किया जायेगा।

2. वार्ड सभा ही वार्ड विकास की योजनाऐं बनाने एवं अन्य महत्वपूर्ण कार्य करवायेगी। इस सभा की वर्ष में कम–से–कम दो बैठकें अवश्य होंगी।

3. वार्डसभा की सभी बैठकों में ऐसा कोई भी विषय जिसे पंचायत, पंचायत समिति, जिला परिषद्, राज्य सरकार या इसके लिए अधिकृत कोई भी अधिकारी रखे जाने की अपेक्षा करे, रखा जा सकता है।

4. वार्ड सभा सरकार की विभिन्न प्रकार की कल्याणकारी सहायता प्राप्त करने वाले व्यक्तियों की पात्रता को सत्यापित करेगी।

5. ग्राम पंचायत क्षेत्र के लिए एक ग्रामसभा होगी, जिसमें पंचायत क्षेत्र के सभी गांव से संबंधित निर्वाचक नामावलियों में पंजीकृत व्यक्ति सदस्य होंगे।

6. ग्रामसभा की एक वर्ष में कम–से–कम दो बैठकें अवश्य होगी।

7. ग्रामसभा का कार्य सामाजिक तथा आर्थिक विकास की योजनाओं एवं कार्यक्रमों तथा वार्ड सभा द्वारा अनुमोदित योजनाओं तथा कार्यक्रमों को पंचायत द्वारा लागू करने के लिए हाथ में लेने से पूर्व अनुमोदन करना है।

8. जिस वर्ग के वार्ड सरपंच (जैसे अनुसूचित जाति) को हटाया जायेगा, उसके स्थान पर उसी वर्ग (केवल अनुसूचित जाति) का वार्ड उप–सरपंच कार्यभार ग्रहण कर सकता है।

9. निर्वाचित जनप्रतिनिधियों के हस्तक्षेप को रोकने के लिए यह व्यवस्था की गई है कि वहां गठित स्थायी समिति के अध्यक्ष के साथ मिलकर संस्था का कार्य चलाया जायेगा।

10. दो से अधिक बच्चे होने पर व्यक्ति पंचायत चुनाव लड़ने के लिए अयोग्य हो जायेगा।
11. पंचायत स्तर पर स्थायी समिति एवं सतर्कता समिति के गठन का प्रावधान है।
12. पंचायत की ऋण राशि नहीं चुकाने वाले व्यक्ति को चुनाव के अयोग्य घोषित किया गया है।
13. पंचायत चुनावों के लिए खर्च की सीमा निर्धारित की गई है। यह खर्च पोस्टर, बैनर, पर्चे आदि पर सरपंच पद के लिए पांच हजार रुपये, पंचायत समिति सदस्य के लिए दस हजार रुपये तथा जिला परिषद् सदस्य पद के लिए बीस हजार रुपये अधिकतम निर्धारित किया गया है।

पंचायत समिति के कार्य व शक्तियां :–

1. सरकार द्वारा दी गई योजनाओं का प्रभावी तरीके से कियान्वन करवाना एवं प्राकृतिक आपदाओं में सहायता उपलब्ध करवाना।
2. कृषि विकास को प्रोत्साहित करते हुए कृषि साख का विस्तार करना।
3. भूमि सुधार एवं मुद्रा संरक्षण कार्यकमों का विस्तार ।
4. गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों का आयोजन एवं कियान्वयन करना।
5. मछली पालन को प्रोत्साहित करना।
6. पशुपालन सेवाओं का निरीक्षण एवं कियान्वयन तथा नई नस्ल का सुधार।
7. खादी एवं ग्रामीण व कुटीर उद्योग के विकास के लिए हरसंभव प्रयास करना।
8. ग्रामीण आवासन स्कीमों का कियान्वयन एवं उधार किश्तों की वसूली ।
9. जल प्रदूषण का निवारण एवं नियंत्रण तथा स्वच्छ पेयजल की सुविधा उपलब्ध करवाना।
10. शिक्षा के विकास को बढ़ावा देना तथा भवनों एवं अध्यापकों को समुचित व्यवस्था करना।
11. स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण कार्यकमों के बारे में लोगों को बताना तथा कार्यक्रमों का क्रियान्वयन करना।
12. महिला एवं बाल विकास से संबंधित कार्यकमों का कियान्वयन ।
13. सहकारिता आन्दोलन द्वारा लोगो की समूह में कार्य करने के लिए प्रेरत करना।
14. सामुदायिक सम्पतियों का रखरखाव एवं नियन्त्रण ।

पंचायती राज संस्थाओं का सशक्तिकरण : जनवरी 2000 को अधिसूचना जारी कर पंचायती राज संस्थाओं के अधिकारों में वृद्धि की गई है कुछ मुख्य अधिकार इस प्रकार है :–

1. प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र एवं उपकेन्द्र पंचायतीराज के अधीन कर दिए गये है। इन संस्थाओं पर तकनीकी नियन्त्रण चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग का रहेगा, लेकिन प्रशासनिक नियन्त्रण जिला परिषद का होगा।
2. जनस्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण के सभी कार्यकमों को प्रभावी ढंग से लागू करने का उत्तरदायित्व पंचायतीराज संस्थाओं को सौंपा गया है।
3. ग्रामीण क्षेत्रों में संचालित 'ब' श्रेणी के आयुर्वेदिक औषधालयों का नियन्त्रण पंचायतीराज संस्थाओं को सौंपा गया है, लेकिन इन पर तकनीकी नियन्त्रण आयुर्वेदिक विभाग का ही रहेगा।
4. एकीकृत ग्रामीण उर्जा कार्यकम के तहत गैरपरम्परागत उर्जा गतिविधियां जैसे स्ट्रीट लाईट, घरेलू बिजली आदि का क्रियान्वयन इन्हीं संस्थाओं के मार्फत होगा।
5. हैण्डपम्प संधारण का सम्पूर्ण कार्य, स्टाफ और बजट के साथ पंचायतीराज संस्थाओं को धीरे–धीरे सौंपा जाएगा।

6. पशु उपचिकित्सा केन्द्र भी इन संस्थाओं को हस्तान्तरित किए गए है।
7. ग्राम वन सुरक्षा समिति।
8. मछलीपालन तालाबों का संधारण एवं आवंटन का कार्य भी इन्हें सौंपा गया है।
9. एकीकृत ग्रामीण विकास योजनाओं के तहत जलग्रहण विकास के कार्यों में पंचायतीराज।
10. कृषि विस्तार कार्यकर्ताओं को पंचायतीराज संस्थाओं के अधीन कर दिया गया है।
11. राशन की दुकान का आवंटन, वितरित की गई सामग्री का पूर्ण लेखा–जोखा, नए राशन कार्ड संस्थाओं की पूर्ण सहभागिता रखी गई है। राशन कार्ड बनाने का अनुमोदन, राशन की दुकान की समयावधि बढ़ाने और निरस्त करने बाबत निर्णय ग्राम पंचायत में चर्चा कर किए जाएंगें और सार्वजनिक वितरण प्रणाली के पर्यवेक्षण के लिए गठित सर्तकता समिति में इन संस्थाओं को जोड़ा गया है।
12. सिंचाई विभाग के अधीन तालाबों का नियंत्रण एवं रखरखाव।
13. आंगनबाड़ी को भी पंचायत के अधीन कर दिया गया है।
14. खादी का प्रशासनिक नियंत्रण भी इन्हें ही दे दिया गया है।

पंचायती राज सशक्तिकरण : ग्राम विकास को नये आयाम देने तथा गांवों के सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान की दिशा में पंचायती राज संस्थाओं का महत्व सर्वविदित है। इस दिशा में प्रयासरत सरकार ने गांधी जयन्ती (2 अक्टूम्बर, 2010) के अवसर पर राज्य सरकार ने पंचायती राज संस्थाओं को प्रारम्भिक शिक्षा, कृषि, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य, महिला एवं बाल विकास तथा सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग की जिला स्तरीय गतिविधियों का हस्तारण पंचायती राज संस्थाओं को कर दिया है।

पंचायती राज संस्थाऐं अब सशक्त होकर उभरें, इस दिशा में सरपंच से लेकर जिला प्रमुख तक सभी को पहले के मुकाबले अधिक सजग होकर अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन भली प्रकार से करना होगा। इन विभागों का सुचारु रुप से हस्तान्तरण सुनिश्चित करवाने में इन सभी की महत्ती भूमिका होगी। जो अधिकार पंचायती राज संस्थाओं को सौंपे गये हैं उनकी जानकारी देने के लिए एक लघु पुस्तिका का प्रकाशन करवाया गया है। जिला स्तर पर जिला कलेक्टर की अध्यक्षता में इस कार्य को अमली जामा पहनाने के लिए एक समिति का गठन किया गया है तथा राज्य स्तर पर इस दिशा में आने वाली कठिनाइयों एवं समस्याओं के निराकरण के लिए एक समिति का गठन भी किया गया है।

राज्य सरकार की यह मंशा है कि भविष्य में और विभाग भी पंचायती राज संस्थाओं को सौंपे जायेंगे। सफलतापूर्वक सुपुर्द किए गए 5 विभागों की जिला स्तरीय गतिविधियों का संचालन पंचायती राज संस्थाओं को ही करना होगा। यह एक महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है, जिसके निर्वहन की दिशा में संवेदनशील, पारदर्शी एवं जवाबदेही के साथ कार्य करने की आवश्यकता है।

पंचायती राज संस्थाऐं ग्रामीण विकास की धुरी बनकर आमजन को सुशासन देते हुए ग्रामीणों की जन समस्याओं का त्वरित निराकरण सुनिश्चित करें ताकि उन्हें यह अहसास हो कि गांव की समस्या का निराकरण अब गांव में ही संभव है। ग्राम पंचायत के कार्यालय नियमित रुप से खुले, निर्धारित तिथियों पर बैठकों का आयोजन हो तथा ग्रामीण विकास की योजनाओं के साथ ही राज्य सरकार द्वारा संचालित की जा रही जन कल्याण से जुड़ी

योजनाओं का व्यापक प्रचार–प्रसार गांवों में हो, जिससे आम आदमी को विकास का लाभ मिल सके।

यहां पर आशा कि जाती है कि पंचायती राज संस्थाऐं एक नय रुप में जन आकांक्षाओं का केन्द्र बनकर ग्राम स्वराज की परिकल्पना का सपना साकार करेंगी।

राजस्थान में ग्रामीण विकास के लिए कई योजनाओं का आरंभ किया गया उनमें से कुछ महत्वपूर्ण योजनाओं का वर्णन नीचे किया गया है।

1. **राजस्थान में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम** : राजस्थान में नवम्बर 1977 में 'अन्त्योदय' कार्यक्रम शुरु किया गया जिसका उद्देश्य ग्रामीण निर्धनतम परिवारों के जीवन–स्तर में सुधार लाना था। इस कार्यक्रम को अभूतपूर्व सफल कार्यक्रमों का उदाहरण माना जाता है। अन्त्योदय कार्यक्रम के महत्व को दृष्टिगत रखते हुए भारत सरकार ने इस कार्यक्रम में कुछ परिवर्तन लाते हुए 1978–79 में एक कार्यक्रम शुरु किया जिसे समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (IRDP) की संज्ञा दी गई।

2. **ग्राम स्वरोजगार योजना :** अप्रैल 1999 से ग्राम स्वरोजगार योजना (SGSY) नामक एकल कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया हैं अब ग्रामीण क्षेत्र के गरीबो के लिए स्वरोजगार का यह एक मात्र कार्यक्रम है। इसके अन्तर्गत विभिन्न कार्यक्रम जैसे समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम डवारका आदि चलाए जा रहे है।

3. **1 अप्रैल 1989 से जवाहर रोजगार योजना** प्रारंभ की गई इस योजना का मुख्य उद्देश्य रोजगार के अतिरिक्त अवसर उपलब्ध कराकर ग्रामीण क्षेत्रों के निर्धन परिवारों के जीवन–स्तर में सुधार लाना है। साथ ही यह भी ध्येय है कि गांवों में निर्माण कार्य कराकर सार्वजनिक सम्पत्तियों का सृजन हो जिससे गांवों का आर्थिक और सामाजिक आधारभूत ढांचा सुदृढ़ हो सके।

4. **जवाहर ग्राम समृद्धि योजना :–** अप्रैल 1999 से जवाहर रोजगार योजना का पुनर्गठन कर इसे ''जवाहर ग्राम समृद्धि योजना'' का नाम दिया गया है। इसके पुनर्गठन का मुख्य उद्देश्य योजना को प्रभावी ढंग से लागू करना है। वास्तव में यह जवाहर रोजगार योजना का पुनर्गठित, व्यवस्थित एवं व्यापक रुप है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य गांवों में रहने वाले गरीबों के जीवन स्तर में सुधार करने के लिए उन्हें लाभप्रद रोजगार के अवसर उपलब्ध करवाना है।

5 **प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना** : अच्छी जीवनचर्या (विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में) के लिये सामाजिक आर्थिक ढांचे के पांच घटक बहुत महत्वपूर्ण है – शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल, आवास एवं सड़कें। लेकिन हमारे देश के योजनाकारों ने गांवों को सड़कों के द्वारा शहरों से नहीं जोड़कर बहुत बड़ी गलती की है। आजादी के बाद लगभग छः दशक की अवधि बीत जाने के बावजूद देश के ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत सेवाओ की स्थिति संतोषजनक नहीं है। देश के चालीस प्रतिशत गांवों में उपयुक्त सड़कें नहीं है। हजारों गाँवों में पेयजल की समस्या हैं लगभग 140 लाख ग्रामीण आवासों की कमी है तथा ग्रामीण स्वास्थ्य सुविधाओं में बहुत बड़ी विसंगतियाँ एवं कमियाँ है।

उपर्युक्त समस्याओं को दृष्टिगत रखते हुए रखते हुए भारत सरकार ने वर्ष 2000 से प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना (PMGY) शुरु की। ग्रामीण निर्धन लोगों की मूलभूत

आवश्यकताओं की पूर्ति समयबद्ध कार्यक्रम के रुप में इस कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य था। इस कार्यक्रम की अनुवर्ती कार्यवाही के रुप में विशेषकर ग्रामीण संयोजनता के उद्देश्य से 25 दिसम्बर, 2000 को प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना (Pradhan Mantri Gramodaya Yojana-PMGY)– यह कार्यक्रम वर्ष 2000–01 से देश के सभी राज्यों एवं केन्द्रशासित प्रदेशों में शुरु किया गया ताकि ग्राम स्तर पर स्थायी मानव दिवस के उद्देश्य को पूरा किया जा सके। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों को कुछ चुनी हुई आधारभूत न्यूनतम सेवाओं के लिए अतिरिक्त केन्द्रीय सहायता प्रदान की गई ताकि सरकार द्वारा घोषित कुछ प्राथमिक क्षेत्रों पर अधिक ध्यान दिया जा सके।

6. नरेगा :– (National Rural Employment Guarantee Act)

सितम्बर, 2005 में पारित हुए NREGA अधिनियम के साथ राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी स्कीम को देश के 200 अभिज्ञात जिलों में 2 फरवरी 2006 से प्रारम्भ किया गया। एन. आर.ई.जी.ए. को ऐसे प्रत्येक ग्रामीण परिवार को न्यूनतम 100 दिन का गारण्टीयुक्त अकुशल मजदूरी रोजगार उपलब्ध कराए जाने के उद्देश्य से कार्यान्वित किया गया जो इसके लिए इच्छुक होगें । SGRY के चल रहे कार्यक्रमों और काम के बदल अनाज कार्यक्रम (NFWP) को इन जिलों में NREGA के अन्तर्गत मिला दिया गया है। वर्ष 2007–08 में NREGA का विस्तार करते हुए इसे 330 जिलों में लागू कर दिया गया। वर्ष 2008–09 में इसे देश के सभी ग्रामीण जिलों में लागू कर दिया गया। वर्तमान में योजना का क्रियान्वयन 619 जिलों में किया जा रहा है। एनआरईजीए एक मांग आधारित स्कीम है जिसका केन्द्र बिन्दु जल संरक्षण, सूखाग्रस्त क्षेत्रों का उद्धार (वानिकी/वृक्षारोपण सहित) भूमि विकास, बाढ़ नियन्त्रण/संरक्षण (जल ठहराव वाले क्षेत्रों में जल निकासी सहित) और सभी मौसमों में अच्छी सड़कों हेतु सड़क सम्बद्धता से सम्बन्धित क्षेत्रों पर ध्यान देना रहा है।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम का उद्देश्य : इस अधिनियम का उद्देश्य, प्रत्येक वित्तीय वर्ष में, प्रत्येक ग्रामीण परिवार अकुशल शारीरिक कार्य करने के इच्छुक वयस्क सदस्य को कम से कम 100 कार्य दिवसों का रोजगार प्रदान करके देश के ग्रामीणों क्षेत्रों के परिवारों को आजीविका प्रदान करना है।

7 प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना का उद्देश्य ग्राम स्तर पर ऐसे आवासों (Habitat) का निर्माण करना है जो रहने लायक हों।

(i) प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना–ग्रामीण पेयजल परियोजना – इस कार्यक्रम के अन्तर्गत सम्बन्धित राज्य सरकार कुल आवंटित राशि का कम से कम 25 प्रतिशत राशि की रेगिस्तान विकास कार्यक्रम /सुखा प्रभावित क्षेत्र कार्यक्रम वाले क्षेत्रों में निम्नांकित परियोजनाओं/कार्यक्रमों के लिए प्रयुक्त करेगी–

क. जल संरक्षण ख. जल एकत्र करना

ग. पेयजल स्त्रोतों को पुनः भरना तथा उनका अस्तित्व बनाये रखना।

(ii) **प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना :–** 25 दिसम्बर, 2000 को ग्रामीण जुडाव (Rural Connectivitiy) के उद्देश्य से प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना का शुभारम्भ किया। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 500 व्यक्तियां या इससे अधिक जनसंख्या वाली 1.60 लाख ग्रामीण

बस्तियों (जो उस समय तक सड़कों से नहीं जुड़ी थी) दसवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि की समाप्ति (2007) तक अच्छी सड़कों (Good all weather roads) द्वारा जोड़ने का लक्ष्य रखा गया। इस कार्यक्रम पर लगभग 60,000 करोड़ रु. व्यय होगा। इस कार्यक्रम की देखरेख सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से सीधे केन्द्र सरकार द्वारा की जाएगी। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना (PMGSY) के अन्तर्गत सर्वप्रथम 1000 से अधिक जनसंख्या वाले गांवों को तीन वर्ष की अवधि के अन्दर अच्छी सड़कों से जोड़नें का लक्ष्य रखा गया। केन्द्र सरकार द्वारा वर्ष 2000–01, 2001–02 एवं वर्ष 2002–03 के लिए प्रत्येक वर्ष PMGSY हेतु 2500 करोड़ रु. का प्रावधान रखा। वर्ष 2004–05 से 2468 करोड़ तथा 2005–06 में 4220 करोड़ रु आवंटित किये गये।

(iii) PMGSY का क्रियान्वयन सभी राज्यों/केन्द्र शासित प्रदेशों में किया जा रहा है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत सभी पंचायत मुख्यालयों एवं पर्यटन की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थानों को सड़क से जोड़ा जा रहा है। इसके लिए उन स्थानों की जनसंख्या के आकार को ध्यान में नहीं रखा जा रहा है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत दिसम्बर 2007 तक 27,382 करोड़ रु. के व्यय से 1,42,750 कि.मी. लम्बी सड़क का निर्माण कार्य पूरा हो चुका था।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. नरेगा योजना का प्रारंभ कब से हुआ।

(अ) 2006 (ब) 2008
(स) 2004 (द) 2005 ( )

2. राजस्थान पंचायती राज अध्यादेश में परिवर्तन कब हुए।

(अ) 2001 (ब) 2004
(स) 2006 (द) 2000 ( )

3. पंचायत के कार्य काल की समय सीमा कितने वर्ष तय की गई है।

(अ) 2 (ब) 4
(स) 5 (द) 6 ( )

4. पंचायती राज्य व्यवस्था का मध्यवर्ती स्तर कौना सा है।

(अ) ग्राम पंचायत (ब) पंचायत समिति
(स) जिला परिषद (द) कोई नहीं। ( )

5. प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना किस सन् में प्रारंभ की गईं ।

(अ) 2001 (ब) 2000
(स) 2003 (द) 2003 ( )

6. ग्रामसभा की न्यूनतम कितनी बैठके एक वर्ष में होनी अनिवार्य है।

(अ) 1 (ब) 2
(स) 4 (द) 8 ( )

7. पंचायतीराज अधिनियम राजस्थान में कब लागू किया गया।

(अ) 24 अप्रेल 1994 (ब) 1 जनवरी 1994

(स) 12 फरवरी 1994 (द) 24 दिसम्बर 1994 ( )

8. कितने वर्ष की आयु में व्यक्ति ग्रामसभा का सदस्य हो सकता है।

(अ) 18 (ब) 21

(स) 24 (द) 30 ( )

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. पंचायती राज के तीन स्तर कौनसे है ।
2. 'ग्रामसभा' से क्या तात्पर्य है।
3. 'ग्राम पंचायत' के कोई दो कार्य लिखिए।।
4. पंचायती राज के मध्यवर्ती स्तर को किस नाम से जाना जाता है ।
5. पंचायत समिति के कोई दो साधारण कार्य लिखिए।
6. राजस्थान में पंचायत समिति के अध्यक्ष को किस नाम से जाना जाता है ?
7. राजस्थान में पंचायती राज संस्थाओं का कार्यकाल कितना है ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. पंचायतों के साधारण कार्य क्या है ?
2. ग्राम सभा के बारे में आप क्या जानते है ?
3. ग्राम सभा के कार्य लिखिए।
4. जिला स्तरीय इकाई को किस नाम से जाना जाता है।
5. ग्राम सभा पर टिप्पणी लिखिएं
6. पंचायत समिति के बारे में आप क्या जानते हैं

निबंधात्मक प्रश्न –

1. ग्राम एवं खण्ड स्तर पर ग्रामीण विकास प्रशासन पर एक लेख लिखिए।
2. पंचायती राज अधिनियम 1994 को समझाइए।
3. पंचायत समिति के कार्यों एवं शक्तियों पर प्रकाश डालिए।

अध्याय – 9

राजस्थान में महिला सशक्तिकरण

भारतीय परंपरा और चिंतन में स्त्री को बहुत महत्वपूर्ण माना गया है। हमारा अतीत भी इस बात का साक्षी है। किंतु समय परिवर्तन के साथ स्थितियों में बदलाव आया और स्त्रियों को अनेक विषमताओं का शिकार होना पड़ा। समय ने एक और करवट ली और स्थितियों को फिर से स्त्रियों के अनुकूल बनाने के प्रयास होने लगे। देश की आज़ादी के बाद विभिन्न राजकीय और अराजकीय स्तरों पर स्त्रियों को समाज और जीवन में उनका उचित स्थान दिलवाने के अगणित प्रयास हुए और उन प्रयासों के परिणाम भी नज़र आए। स्थिति यह है कि आज हमारे देश में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, प्रशासनिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक यानि तमाम क्षेत्रों में स्त्रियां पुरुषों के कंधे से कंधा मिलाकर चलती दिखाई देने लगी हैं। निश्चय ही यह बदलाव किसी एक के किए नहीं आया है। पूरे समाज ने इसमें अपनी सकारात्मक भूमिका का निर्वाह किया है। वैसे, इस बदलाव को लाने में सबसे बड़ी भूमिका शिक्षा की रही है। याद करें कि वर्ष 1961 की जनगणना में देश में साक्षर पुरुषों का प्रतिशत 40 था जबकि साक्षर महिलाओं का प्रतिशत मात्र 15 था। दस वर्ष बाद, 1971 में महिला साक्षरता बढ़कर 22 प्रतिशत हो गई और वर्ष 2001 तक आते–आते तो यह 54.16 प्रतिशत तक पहुंच गई। यह बदलाव इसलिए मुमकिन हुआ कि लड़कियों, विशेष रूप से समाज के वंचित वर्ग की लड़कियों को विद्यालयों तक लाने के लिए विभिन राज्य सरकारों ने निशुल्क पुस्तकें, निशुल्क पोशाकें, छात्रवृत्तियां, दोपहर का भोजन, छात्रावास और लाड़ली योजना जैसे अनेक प्रयास किए और अब तो, भारतीय संसद ने 6 से 14 वर्ष तक के आयु समूह के लड़के–लड़कियों को निशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने के अधिकार का विधेयक पारित करके एक बहुत ही क्रांतिकारी काम कर डाला है। इसके सुपरिणाम हमें कुछ वर्षों के बाद देखने को मिलने लगेंगे। केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री का यह भी कहना है इस विधेयक के बाद अब केंद्र सरकार 18 वर्ष तक के किशोर–किशोरियों के लिए माध्यमिक शिक्षा अभियान चलाएगी। केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने भी राष्ट्रीय साक्षरता मिशन में अब पूरा ज़ोर महिलाओं की शिक्षा पर ही देने का फैसला किया है। योजना है कि इस कार्यक्रम के अंतर्गत वर्ष 2017 तक देश की 80 प्रतिशत महिलाओं को साक्षर कर दिया जाएगा।

महिलाओं में साक्षरता बढ़ने का एक सुपरिणाम यह हुआ है कि सरकारी और गैर सरकारी कार्यालयों तथा स्वायत्त संस्थानों में महिला कर्मचारियों की संख्या बढ़ने लगी है। सरकारी नौकरियों में वर्ष 1995 में पुरुषों के मुक़ाबले महिला कर्मचारियों का अनुपात मात्र मात्र 7.43 प्रतिशत था जो 2001 में थोड़ा–सा बढ़कर 7.53 प्रतिशत हुआ और 2004 में बढ़कर 9.68 प्रतिशत हुआ. यह अनुपात संतोषप्रद तो नहीं है किंतु इसकी दिशा आश्वस्त अवश्य करती है. महिला शिक्षा प्रसार का एक अन्य सुपरिणाम यह भी हुआ है कि देश में पुरुषों की तुलना में स्त्रियों के अनुपात में जो खाई बढ़ती जा रही थी, अब न केवल उस खाई के विस्तार पर रोक लगी है, उसमें कमी भी आने लगी है। दिल्ली में तो स्त्रियों का अनुपात पुरुषों की तुलना में बढ़ा हुआ तक पाया गया है।

क्या है महिला सशक्तिकरण का आशय

तो, देश बहुत तेज़ी से महिला सशक्तिकरण की दिशा में आगे बढ़ रहा है। हम इस चर्चा को आगे बढ़ाएं उससे पहले यह जान लेना उपयुक्त होगा कि महिला सशक्तिकरण का आशय क्या है। असल में महिला सशक्तिकरण एक बहु आयामी और बहु स्तरीय अवधारणा है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो महिलाओं को संसाधनों पर अधिक भागीदारी और अधिक नियंत्रण प्रदान करती है। ये संसाधन नैतिक, मानवीय, बौद्धिक और वित्तीय सभी हो सकते हैं. सशक्तिकरण का मतलब है, घर, समाज और राष्ट्र के निर्णय लेने के अधिकार में महिलाओं की हिस्सेदारी। दूसरे शब्दों में सशक्तिकरण का आशय है अधिकारहीनता से अधिकार प्राप्त की तरफ बढते क़दम. शुरुआती क़दम के रूप में लोकतंत्र का प्रथम सोपान है पंचायतों और नगरपालिकाओं में महिलाओं की भागीदारी। 73 वां संविधान संशोधन पारित होने के बाद अनेक पंचायतों में कानून के अंतर्गत मिले एक तिहाई आरक्षण से भी अधिक महिला प्रतिनिधि चुने जाने लगे हैं। अनेक पंचायतों में तो पचास प्रतिशत से भी अधिक महिलाएं चुनी जाती हैं और कहीं–कहीं तो सभी सदस्य महिलाएं ही होती हैं। केन्द्रीय मंत्री मण्डल ने पंचायतों और नगर पालिकाओं के सभी स्तरों पर महिलाओं का आरक्षण मौजूदा एक तिहाई से बढ़ाकर कम से कम पचास प्रतिशत कर देने के प्रस्ताव को मंजूरी दे दी है। इसके लिए संविधान में संशोधन किया जाएगा। बिहार, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ तो पहले से ही पंचायतों में महिलाओं के लिए पचास प्रतिशत स्थान आरक्षित कर सशक्तिकरण की दिशा में क्रांतिकारी पहल कर चुके हैं। उत्तराखण्ड ने तो एक क़दम और आगे बढ़ाते हुए पंचायतों में महिलाओं को पचपन प्रतिशत प्रतिनिधित्व दे दिया है। राज्य सभा ने भी दो तिहाई से अधिक बहुमत से महिला आरक्षण विधेयक पारित करके महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक युगांतरकारी क़दम उठाया है। लोकसभा और विधान सभाओं में इस विधेयक को पारित करवाने के लिए प्रयास जारी हैं और उम्मीद है कि वहां भी यह विधेयक पारित हो जाएगा।

और जैसे इतना ही काफी न हो, वर्तमान केन्द्र सरकार के न्यूनतम साझा कार्यक्रम में दिए गए छह बुनियादी सिद्धांतों में भी महिलाओं को शैक्षिक, आर्थिक और कानूनी रूप से सशक्त बनाने के सिद्धांत को स्वीकार किया गया है। इसी क्रम में महिला अधिकारिता को मूर्त रूप देने के लिए महिला सशक्तिकरण आयोग का भी गठन किया गया है। महिला अधिकारिता के इस अभियान को दिल्ली उच्च न्यायालय के एक फैसले से भी बल मिला है, जिसके द्वारा सेना की नौकरी में स्त्रियों को भी पुरुषों की तरह स्थायी कमीशन देने का निर्देश सरकार को दिया गया है। भारत सरकार ने इस वर्ष महिला और बाल विकास के लिए अपने योजना व्यय में लगभग 50 प्रतिशत की वृद्धि की है। महिला साक्षरता को और बढ़ाने के उद्देश्य से राष्ट्रीय साक्षरता मिशन का पुनर्गठन करके *साक्षर भारत* नाम से एक नया कार्यक्रम प्रारंभ किया जा रहा है। इस कार्यक्रम के द्वारा जिन सात करोड़ वयस्क निरक्षरों को साक्षर बनाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है उनमें छह करोड़ महिलाएं शामिल हैं। इसी तरह महिला कृषकों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए एक *महिला किसान सशक्तिकरण योजना* भी शुरू की गई है। इनके अतिरिक्त रेल मंत्रालय ने *मातृभूमि* नाम से 21 महिला स्पेशल ट्रेनें चलाने का निर्णय भी किया है।

भारत सरकार की इस तरह की बहुत सारी पहलें देश में स्त्रियों की स्थिति को सुदृढ़ बनाने में मददगार साबित हो रही हैं और होंगी, इसमें कोई शक नहीं है। यहां बात हमें क्योंकि अपने प्रांत राजस्थान के सन्दर्भ में करनी है, हम अधिक विस्तार में नहीं जा पा रहे हैं।

राजस्थान में महिला सशक्तिकरण

वर्ष 2011 में हुई जनगणना के अनुसार राजस्थान की कुल जनसंख्या 6 करोड़ 86 लाख में से 48 प्रतिशत अर्थात 3 करोड 30 लाख महिलाएं हैं। राजस्थान में महिलाओं की यह संख्या देश की महिला जनसंख्या का 5.46 प्रतिशत है। किसी भी प्रांत की लगभग आधी आबादी उसकी तस्वीर और प्रगति की रफ्तार को बहुत प्रभावित करती है।

इतिहास में स्त्री

राजस्थान का अपना एक विशिष्ट अतीत रहा है और इसकी अपनी सुदृढ परंपराएं और जीवन शैली है। अगर हम अतीत की तरफ देखें तो पाते हैं कि स्त्रियों के सम्बन्ध में राजस्थान के प्राचीन और मध्यकालीन समाज का नज़रिया पर्याप्त गतिशील किंतु द्वन्द्वात्मक रहा है। स्त्रियों की हालत और हैसियत के मामले में यह समाज आदर्श तो नहीं था, लेकिन वैसा भी नहीं था जैसा इसे आरंभिक उपनिवेशकालीन इतिहासकारों ने दिखाया है। पितृसत्तात्मक समाज होने की वजह से यहां पुरुष वर्चस्व था, स्त्रियों के साथ भेदभाव बरता जाता था, लेकिन यह भी नहीं भूला जा सकता कि स्त्रियों के सम्मान और सुरक्षा के भी अनेक प्रावधान तब विद्यमान थे। पितृसत्तात्मक शास्त्रीय विधान इस समाज में बहुत लचीले और उदार हो गए थे और लोक में इनको लेकर बहुत अधिक आग्रह नहीं था। प्राचीन और मध्यकाल में स्त्रियां धार्मिक और दैनंदिन गतिविधियों में पुरुषों के साथ बराबर की हैसियत से मौजूद रहती थीं। महाराणा कुम्भा और राजसिंह कालीन साक्ष्यों से इस बात की पुष्टि होती है। राजकाज में सामंत स्त्रियों की निर्णायक भूमिका हुआ करती थी। महाराणा लाखा की पत्नी हंसाबाई ने चूण्डा के स्थान पर अपने पुत्र मोकल को सत्तारूढ़ करवा कर मेवाड़ के इतिहास की दिशा ही बदल दी थी। महाराणा सांगा की पत्नी करमेती ने भी अपने पुत्र विक्रमादित्य और उदयसिंह को मेवाड़ का शासक बनवाने में निर्णायक भूमिका अदा की।

प्राचीन और मध्यकालीन राजस्थान के समाज में स्त्रियों की सुरक्षा और उनके संरक्षण के भी प्रावधान थे। यहां बहन–बेटियों को भी जागीरें दी जाती थीं। महाराणा राजसिंह कालीन पट्टा बहियों में ऐसी कई बहन–बेटियों के नाम हैं जिन्हें जागीरें दी गई थीं। सामंत स्त्रियां विवाहोपरांत अंत:पुर में कमोबेश स्वायत्त हैसियत के साथ रहती थीं। उन्हें उनके निजी व्यय के लिए पृथक जागीरें दी जाती थीं और उनके प्रबंध के लिए उनके अपने कामदार हुआ करते थे। इनसे होने वाली आय को खर्च करने के मामले में वे लगभग स्वतंत्र थीं। इस राशि से वे दान पुण्य़ और तीर्थाटन करती थीं और भवनों–बावड़ियों का निर्माण करवाती थीं। राजस्थान में सामंत स्त्रियों द्वारा बनवाई हुई ऐसी अनेक बावड़ियां हैं। इन कालों में विधवाओं को अलबत्ता पितृसत्तात्मक मर्यादाओं के दायरे में रहना होता था लेकिन वे सर्वथा अरक्षित और उपेक्षित फिर भी नहीं होती थीं। उनके निर्वाह और जीविका के पारंपरिक प्रावधान थे और उनका सम्मान भी होता था। महाराणा कुम्भा की विधवा पुत्री रमाबाई को निर्वाह के लिए जावर का परगना दिया गया था।

इतिहास की छाया और वर्तमान का सूर्य

राजस्थान की महिलाएं अपनी कलात्मक भावना, गायन, नृत्य और विभिन्न पारंपरिक कलाओं के लिए पूरी दुनिया में जानी जाती हैं। वे निर्माण स्थलों पर कठोर मेहनत करने की अपनी क्षमता के लिए भी उतनी ही प्रसिद्ध हैं। प्रदेश की विषम आर्थिक परिस्थितियों ने जब यहां के पुरुषों को जीविकोपार्जन के लिए अन्य प्रांतों में जाने को विवश किया तो यहां की महिलाओं ने तमाम मुसीबतें सहकर भी अपनी गृहस्थी को सम्हाला। लेकिन प्रांत के अतीत की कुछ खास बातें स्त्रियों की स्थिति के अनुकूल नहीं भी रही हैं. कुछ रूढ़ियां, कुछ परंपराएं, कुछ खास तरह का सोच महिलाओं के प्रतिकूल रहा। इन सबके अवशेष, भले ही वे कितने भी फीके क्यों न पड़ते जा रहे हों, आज भी मौजूद हैं, इस बात को स्वीकार करना ही होगा। लेकिन, हर्ष की बात यह है कि स्वाधीनता के बाद और विशेष रूप से हाल के वर्षों में राज्य सरकार के प्रयासों से यह स्थिति बहुत तेज़ी से बदलती जा रही है. एक संकेत पर्याप्त होगा। देश के अन्य राज्यों की तुलना में राजस्थान को देखें तो इस बात पर सुखद आश्चर्य होता है कि वर्ष 1991 की तुलना में 2001 में यहां पुरुष जनसंख्या की वृद्धि दर 28.01 थी जबकि स्त्री जनसंख्या वृद्धि दर 29.34 थी और जैसे इतना ही काफी न हो शहरी क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में यह लिंगानुपात बेहतर रहा है. इसी तरह साक्षरता की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण बदलाव लक्षित किए जा रहे हैं। 1991 में जो साक्षरता दर 38.55% थी वह 2011 में बढकर 67.06% हो गई। और इसी अवधि में महिला साक्षरता की दर 20.44% से बढकर 52.66% तक पहुंच गई। इससे भी अधिक महत्व की बात यह है कि 1991 में जहां ग्रामीण क्षेत्रों में महिला साक्षरता दर मात्र 9.2% थी वह 2001 में छलांग लगागर 37.74% तक जा पहुंची. इन और इस तरह के अनेक परिवर्तनों ने राजस्थान में स्त्री को उस हैसियत की तरफ अग्रसर करने में महती भूमिका निबाही है जिसकी वो वाकई हक़दार है।

राजस्थान में राजकीय स्तर पर महिला सशक्तिकरण की दिशा में बहुत गम्भीर प्रयास किए जा रहे हैं। असल में राजस्थान ही देश का ऐसा पहला राज्य है जिसने 1984 में ही सात ज़िलों में महिलाओं के विकास के लिए *महिला विकास कार्यक्रम* की शुरुआत कर दी थी। बाद में इस कार्यक्रम के सफल और सकारात्मक परिणामों के आकलन के बाद इसका विस्तार पूरे राज्य में कर दिया गया। यह अपने आप में एक अनूठा कार्यक्रम है। महिलाओं को निष्क्रिय लाभार्थी मानते हुए उन्हें सेवाएं और सुविधाएं उपलब्ध कराने की बजाय इस कार्यक्रम के माध्यम से जानकारी, शिक्षा और प्रशिक्षण के द्वारा आर्थिक एवं समाजिक सशक्तिकरण करते हुए उन्हें विकास की मुख्यधारा से जोड़ने का प्रयास किया जाता है। इस योजना की मुख्य रणनीति यह है कि स्वयंसेवी संस्थानों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जाए। राज्य तथा ज़िला स्तर पर *'इदारा'* (सूचना विकास एवं सन्दर्भ एजेंसी) के रूप में किसी प्रतिष्ठित स्वयंसेवी संस्था का चयन किया जाता है। *'इदारा'* महिला विकास कार्यक्रम के लिए तकनीकी, अकादमिक एवं सन्दर्भ सहायता प्रदान करता है। विभिन्न विभागों की भी अनेक योजनाएं हैं जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से महिलाओं की स्थिति में सुधार लाने के लिए प्रयास करती हैं। महिला विकास कार्यक्रम इन सभी योजनाओं में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करता है। इसी क्रम को

जारी रखते हुए राज्य सरकार ने दो और बहुत महत्वपूर्ण फैसले किए जिनके अंतर्गत राजस्थान राज्य महिला आयोग की स्थापना की गई और महिलाओं के लिए सरकारी सेवाओं में तीस प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया गया।

राज्य महिला आयोग

राजस्थान में राज्य महिला आयोग की स्थापना के लिए राज्य सरकार द्वारा 23 अप्रेल, 1999 को एक विधेयक राज्य की विधान सभा में प्रस्तुत किया गया. इस विधेयक के पारित हो जाने पर 15 मई, 1999 को राज्य सरकार द्वारा एक अधिसूचना जारी करके राजस्थान राज्य महिला आयोग का गठन कर दिया गया।

राजस्थान राज्य महिला आयोग के मुख्य कार्य निम्न हैं:

–महिलाओं के खिलाफ होने वाले किसी भी प्रकार के अनुचित व्यवहार की जांच कर, विनिश्चय करके उस मामले में सरकार को सिफारिश करना,
–प्रवृत्त विधियों व उनके प्रवर्तन को महिलाओं के हित में प्रभावी बनाने के लिए क़दम उठाना,
–राज्य लोक सेवाओं और राज्य लोक उपक्रमों में महिलाओं के विरुद्ध किसी भी प्रकार के भेदभाव को रोकना,
–महिलाओं की दशा में सुधार करने की दृष्टि से क़दम उठाना,
–आयोग की दृष्टि में यदि किसी भी लोक सेवक ने महिलाओं के हितों का संरक्षण करने में अत्यधिक उपेक्षा या उदासीनता बरती है तो उसके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही के लिए सरकार से सिफारिश करना,
–महिलाओं से सम्बन्धित विद्यमान कानूनों की समीक्षा करना तथा महिलाओं को समुचित न्याय मिले इस दृष्टि से कानून में आवश्यक संशोधन की सरकार से सिफारिश करना।

महिला सशक्तिकरण के लिए आयोग द्वारा किए गए प्रयास

सीधे जनता से जुड़कर सुनवाई व जन संवाद

डाक द्वारा प्राप्त प्रतिवेदनों पर कार्यवाही

ज़िलों में जन सुनवाई व्यक्तिगत सुनवाई समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचारों पर प्रसंज्ञान

राजस्थान राज्य महिला आयोग की संरचना

राजस्थान राज्य महिला आयोग 1999 के अधिनियम की धारा 3 के अनुसार आयोग की संरचना निम्नानुसार है. सदस्यों में से एक अनुसूचित जाति अथवा अनुसूचित जनजाति की और एक अन्य पिछड़ी जाति की महिला होनी अनिवार्य है।

अध्यक्ष: एक, इन्हें राज्य सरकार द्वारा तीन वर्ष के लिए मनोनीत किया जाता है।

सदस्य: तीन.

सदस्य सचिव: एक, राज्य सरकार द्वारा पदस्थापित अधिकारी।

राजस्थान में महिला अधिकारिता के निमित्त संचालित विभिन्न योजनाएं एवं कार्यक्रम

यह लक्षित किया गया कि महिला विकास की जितनी योजनाएं और कार्यक्रम बनाए गए उन्हें बनाने और लागू करने में महिलाओं का बहुत कम जुड़ाव रहा। इसलिए यदि महिला विकास को गति देनी है तो महिलाओं को इन सभी कार्यक्रमों से जोड़ा जाना अपेक्षित होगा. दूसरी

बात, महिलाओं की सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों को देखते हुए किसी औपचारिक कार्यक्रम के माध्यम से महिला विकास के उद्देश्यों की पूर्ति कठिन प्रतीत होती है क्योंकि जब तक नीचे के स्तर तक महिलाओं में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता नहीं आएगी तब तक महिलाओं का वास्तविक रूप में न तो विकास हो पाएगा और न ही उनका सशक्तिकररण संभव होगा। इसी सोच को सामने रखकर राज्य में 18 जून, 2007 को *महिला अधिकारिता निदेशालय* का गठन किया गया। इसका मुख्य उद्देश्य महिलाओं की वैयक्तिक, सामाजिक, आर्थिक एवं आयोत्पादक गतिविधियों को बढावा देना एवं विकास रहा। महिला अधिकारिता निदेशालय के अंतर्गत वर्तमान में महिला विकास से सम्बन्धित समस्त योजनाएं, जो कि महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु राज्य/ज़िला/ब्लॉक स्तर पर संचालित हैं, का क्रियान्वयन एवं प्रबंधन किया जाता है। महिला अधिकारिता निदेशालय द्वारा विभिन्न विभागों की योजनाओं एवं नीतियों में समन्वय कर महिलाओं को वास्तविक लाभ पहुंचाने का प्रयास किया जा रहा है। महिलाओं को शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, परिवार कल्याण, रोज़गार तथा प्रशिक्षण एवं उनका समाजिक सशक्तिकरण महिला अधिकारिता के प्रमुख क्षेत्र हैं। विभिन्न विभागों द्वारा इस निमित्त निम्न प्रमुख कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं —:

1. महिला विकास कार्यक्रम: महिलाओं के समग्र विकास के उद्देश्य से वर्ष 1984 में राज्य के सात ज़िलों जयपुर, अजमेर, जोधपुर, भीलवाड़ा, उदयपुर, बांसवाड़ा और कोटा में महिला विकास कार्यक्रम शुरू किया गया। कार्यक्रम की सफलता एवं महिलाओं के इसके प्रति रुझान को देखकर विभिन्न चरणों में इस कार्यक्रम का विस्तार किया गया और अब यह कार्यक्रम राज्य के सभी ज़िलों में चल रहा है। वर्ष 2007—08 में पृथक से निदेशालय महिला अधिकारिता की स्थापना की गई, जो वर्तमान में आयुक्तालय महिला अधिकारिता के रूप में महिला सशक्तिकरण से सम्बन्धित विभिन्न कार्यक्रमों/योजनाओं का संचालन कर रहा है।

महिला विकास कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य विभिन्न विभागों की योजनाओं और नीतियों में समन्वय स्थापित कर इनका लाभ महिलाओं तक पहुंचाना है। इसके साथ ग्रामीण स्तर तक महिलाओं के अधिकारों के पक्ष में तथा व्याप्त सामाजिक कुरीतियों के विपक्ष में वातावरण बनाना है. महिला विकास कार्यक्रम का क्रियान्वयन ज़िला स्तर पर महिला विकास अभिकरण के माध्यम से किया जा रहा है।

महिला विकास कार्यक्रम की केन्द्र बिंदु है मानदेय प्राप्त ग्राम स्तरीय *साथिन*। साथिन महिलाओं को विकास की मूलधारा से जोड़ने का काम करती है तथा समाज में महिलाओं के प्रति सकारात्मक सोच एवं जागरूकता पैदा करती है।

महिला विकास कार्यक्रम के उद्देश्य ये हैं **:**

1. महिलाओं के विकास और अधिकारिता के लिए सकारात्मक आर्थिक एवं सामाजिक नीति के माध्यम से अवसर उपलब्ध कराने हेतु वातावरण तैयार करना,
2. महिलाओं को उनके राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं नागरिक अधिकारों के प्रति जागरूक करना,
3. महिलाओं को शिक्षा, उच्च शिक्षा एवं तकनीकी शिक्षा तथा स्वास्थ्य रक्षा और नियोजन आदि के बराबर अवसर उपलब्ध कराना,
4. लैंगिक समानता के लिए वातावरण तैयार करना,

5. बालिकाओं एवं किशोरियों के विशेष संरक्षण और सुरक्षा के प्रयास करना. उनके लिए गुणवत्तायुक्त शिक्षा व स्वास्थ्य सेवाओं की व्यवस्था और सभी प्रकार की हिंसा - पारिवारिक एवं सामाजिक, शोषण एवं अन्य विपरीत परिस्थितियों से उनकी रक्षा करना।

2. **पांच सूत्रीय महिला सशक्तिकरण कार्यक्रम:** राज्य में वर्ष 2011 तक अधोलिखित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए पांच सूत्रीय महिला सशक्तिकरण कार्यक्रम चलाया जा रहा है:

1. कक्षा 10 तक शत प्रतिशत बालिकाओं का ठहराव
2. बालिकाओं में शिशु विवाह की पूर्ण समाप्ति
3. हर महिला को संस्थागत प्रसव की सुविधा उपलब्ध कराना
4. सकल जन्म दर को 21 प्रति हज़ार तक ले आना
5. महिलाओं के लिए स्व रोज़गार के अवसर सृजित करना जिससे आने वाले तीन वर्षों में प्रत्येक ज़िले में कम से कम 1 हज़ार महिलाओं को रोज़गार उपलब्ध कराया जा सके।

3. **सामूहिक विवाहों हेतु अनुदान:** समाज में विवाहों पर अनावश्यक व्यय की बढती जा रही प्रवृत्ति पर नियंत्रण के लिए सामूहिक विवाह अनुदान नियम,1996 बनाए गए और उनमें समय–समय पर यथावश्यता संशोधन किए गए. सामूहिक विवाह अनुदान के अंतर्गत एक समय में एक बार में कम से कम दस जोड़ों को और अधिक से अधिक 166 जोड़ों को अनुदान दिया जा सकता है। प्रति जोड़ा अनुदान की दर 6,000/– है। अनुदान की कुल सीमा 2.00 लाख को 02.03.2009 के आदेश से बढ़ाकर 10.00 लाख कर दिया गया है। अनुदान राशि 6000/– प्रति जोड़ा का 25 प्रतिशत आयोजनकर्ता को तथा शेष 75 प्रतिशत दुल्हन के नाम से तीन वर्ष के लिए सावधि जमा करवाए जाने का प्रावधान है।

4. **ज़िला महिला सहायता समिति :** शोषित एवं उत्पीड़ित महिलाओं को अविलम्ब राहत देने, उन्हें आवश्यक सहायता एवं मार्ग–दर्शन देने एवं शोषण के प्रकरणों का पुनरीक्षण कर शीघ्र कार्यवाही कराने के उद्देश्य से समस्त ज़िलों में कलक्टर की अध्यक्षता में ज़िला स्तरीय महिला समिति गठित है। इस समिति में पुलिस अधीक्षक, मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट/न्यायाधीश पारिवारिक न्यायालय, संयुक्त निदेशक सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग, दो कानूनी सलाहकार (राज्य स्तर पर मनोनीत), प्रतिष्ठित स्वयंसेवी संस्था के प्रतिनिधि (राज्य स्तर पर मनोनीत) सदस्य हैं एवं ज़िला उपनिदेशक महिला एवं बाल विकास विभाग सदस्य सचिव हैं। यह समिति एक स्थायी समिति है और इसकी बैठक तीन माह में एक बार या जितनी बार अध्यक्ष आवश्यकता महसूस करे उतनी बार आयोजित की जाती है। समिति उत्पीड़ित, निराश्रित, शोषित महिलाओं को तात्कालिक आश्रय एवं विधिक सहायता और परामर्श उपलब्ध कराती है तथा उत्पीड़न/शोषण के प्रकरणों का पुनरीक्षण कर आवश्यक समझाइश अथवा विधिक कार्यवाही करती है।

5. घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005: महिलाओं को घरेलू हिंसा से संरक्षण दिए जाने और उन्हें तुरंत व आपातकाल में राहत देने के उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा यह अधिनियम लागू किया गया। यह अधिनियम व इसके अंतर्गत घरेलू हिंसा से संरक्षण नियम, 2006 पूरे देश में एक साथ दिनांक 26 अक्टूबर, 2006 से प्रभावी किए गए हैं। इस अधिनियम की एक विशेषता यह है कि इसमें पहली बार घरेलू हिंसा को परिभाषित किया गया है. इससे पूर्व किसी भी कानून में विवाह के अलावा अन्य रिश्तों को शामिल नहीं किया जाता था। अब घरेलू सम्बन्धों में बहिन, विधवा मां, बेटी, अकेली अविवाहित महिला आदि को सम्मिलित किया गया है. इसके अतिरिक्त साझा घर (Shared Household) की भी परिभाषा की गई है ताकि व्यथित महिला को निवास सम्बन्धी सुविधा से वंचित न किया जा सके।

इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए घरेलू हिंसा शब्द की व्यापक परिभाषा की गई है। इसमें प्रत्यर्थी का कोई भी ऐसा कार्य, लोप या आचरण घरेलू हिंसा कहलाएगा, यदि वह व्यथित व्यक्ति (पीड़िता) के स्वास्थ्य, उसकी सुरक्षा, जीवन, उसके शारीरिक अंगों या उसके कल्याण को नुकसान पहुंचाता है या क्षतिग्रस्त करता है या ऐसा करने का प्रयास करता है। इसमें व्यथित व्यक्ति (पीड़िता) का शारीरिक दुरुपयोग, शाब्दिक या भावनात्मक दुरुपयोग और आर्थिक दुरुपयोग शामिल है। इसमें किसी वस्तु की मांग (दहेज आदि) को भी सम्मिलित किया गया है।

राजस्थान में इस अधिनियम के तहत सभी उपनिदेशकों, बाल विकास परियोजना अधिकारियों एवं प्रचेताओं सहित कुल 548 अधिकारियों को संरक्षण अधिकारी नियुक्त किया गया है और 79 ग़ैर सरकारी संगठनों को सेवा प्रदाता के रूप में मान्यता दी गई है। राज्य के सभी अस्पतालों, डिस्पेंसरियों, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों को चिकित्सा सुविधा के रूप में अधिकृत किया गया है।

6. जननी सुरक्षा योजना: राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के तहत जननी सुरक्षा योजना लागू की गई है। महिलाओं को इस योजना का लाभ दिलवाने में आशा सहयोगिनियां मदद करती हैं. इस योजना के अंतर्गत निम्न मुख्य सेवाएं व लाभ प्रदान किए जा रहे हैं**:**

1. सरकारी संस्थान या मिशन के तहत पंजीकृत निजी संस्थान में संस्थागत प्रसव करवाने पर प्रत्येक ग्रामीण महिला को प्रसव के बाद संस्थान से छुट्टी मिलने के समय 1400/– चैक द्वारा प्राप्त होते हैं। यदि आशा–सहयोगिनी साथ न हो तो वाहन खर्च के लिए 300/– अतिरिक्त प्राप्त होते हैं।
2. बी.पी.एल. कार्डधारक महिला को 1400/– में से 500/– पोषण के लिए गर्भ के सातवें महीने में प्राप्त होते हैं और शेष 900/– संस्थागत प्रसव करवाने पर संस्थान से छुट्टी मिलने के समय पर प्राप्त होते हैं।
3. प्रसव के बाद महिला की देखभाल हेतु अस्पताल/स्वास्थ्य केन्द्र पर कम से कम 24 घण्टे ठहरने की व्यवस्था की गई है।
4. महिला के साथ जाने पर आशा सहयोगिनी को 400/– परिवहन राशि तथा 200/– प्रोत्साहन राशि दी जाती है।
5. बी.पी.एल. कार्डधारी महिलाओं को घरेलू प्रसव के लिए 500/– दिए जाते हैं।

6. शहरी क्षेत्र में संस्थागत प्रसव करवाने पर सभी महिलाओं को 1000/– तथा आशा सहयोगिनी को 200/– की राशि दी जाती है।

7. बी.पी.एल. कार्डधारक महिला को प्रथम प्रसव संस्थागत होने पर 5 लीटर घी भी दिया जाता है।

7. मुख्यमंत्री बालिका संबल योजना: राज्य में बालिकाओं की संख्या में गिरावट को रोकने के लिए मुख्यमंत्री बालिका संबल योजना की घोषणा की गई है। इस योजना के अंतर्गत ऐसे दंपती जिनके एक भी पुत्र न हो और जिन्होंने एक या दो पुत्रियां होने पर नसबंदी करवाई हो उन्हें राज्य सरकार द्वारा प्रत्येक बालिका के नाम पर 10 हज़ार रुपये की राशि यू.टी.आई. म्यूच्युअल फण्ड की सी.पी.पी. योजना के बॉण्ड के माध्यम से दी जाती है।

8. शिशु पालना गृह (Creche): राज्य में ग्रामीण कामकाजी महिलाओं के बच्चों को दैनिक देखभाल की सुविधा उपलब्ध कराने तथा बच्चों के स्वास्थ्य एवं पोषण स्तर में सुधार हेतु शिशु पालन गृह चलाए जा रहे हैं। विभाग द्वारा वर्तमान में 18 ज़िलों में 263 शिशु पालना गृह संचालित किए जा रहे हैं। इनके माध्यम से ग्रामीण कामकाजी महिलाओं के सात माह से पांच वर्ष तक के बच्चों की दैनिक देखभाल, चिकित्सकीय सुविधा तथ बच्चों के लालन–पालन की सुविधा उपलब्ध कराई जा रही है।

9. जैंडर संवेदनशील बजटिंग: महिला विकास और सशक्तिकरण कार्यक्रमों के सन्दर्भ में पिछले कुछ समय से एक नई सोच विकसित हुई है। अभी तक महिलाओं के हित में जो भी कार्यक्रम बनाए गए हैं उनका महिलाओं की स्थिति पर उतना प्रभाव नहीं पड़ा है जितना अपेक्षित था। नवीन अवधारणा यह है कि बजट का आवंटन वर्ग आधारित होने की बजाय जैण्डर आधारित होना चाहिए ताकि सभी वर्गों को विकास का लाभ समान रूप से मिल सके। इसी अवधारणा को मूर्त रूप देने के लिए विभिन्न विभागों से उनके कार्यक्रमों/योजनाओं के पुनरावलोकन और प्राथमिकताओं के पुनर्निधारण हेतु अनुरोध किया गया है ताकि योजनाएं और कार्यक्रम जैण्डर आधारित हो सकें। इसी क्रम में राज्य सरकार जैण्डर संवेदनशील बजटिंग की दिशा में प्रयास कर रही है। इसके प्रथम चरण के रूप में वर्ष 2005–06 में स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि, महिला एवं बाल विकास, मुद्रांक एवं पंजीयन तथा सामाजिक अधिकारिता एवं न्याय विभाग। इन छह विभागों के बजट का आकलन किया गया। वर्ष 2006–07 में आठ और विभागों ग्रामीण विकास, स्वायत्त शासन, जनजाति क्षेत्र, उद्योग, सहकारिता, वन, पशु पालन एवं उद्यान विभागों के बजट का जैण्डर आधारित अंकेक्षण किया गया। इस प्रकार कुल चौदह विभागों का जैण्डर आधारित विश्लेषण कर लिया गया है। राज्य सरकार जैण्डर रेस्पोंसिव बजटिंग को एक संस्थागत रूप देने पर भी विचार कर रही है ताकि समय–समय पर संबंधित विभागों के बजट प्रावधानों का जैण्डर अधारित मूल्यांकन सम्भव हो सके और संबद्ध विभागों को उपयुक्त दिशा–निर्देश प्रदान किए जा सकें।

10. किशोरी शक्ति योजना: भारत सरकार द्वारा संपोषित किशोरी शक्ति योजना को राज्य में भी एक नवाचार के रूप में संचालित करने का निर्णय लिया गया है। यह योजना राज्य के सभी

शहरी एवं ग्रामीण ब्लॉकों में 11 से 18 वर्ष तक की स्कूल न जाने वाली अथवा बीच में ही स्कूल छोड़ देने वाली किशोर बालिकाओं के लिए सभी 274 शहरी एवं ग्रामीण ब्लॉकों में संचालित की जा रही है। इस योजना में सभी 237 पंचायत समितियों/ब्लॉक्स की एक–एक ग्राम पंचायत मुख्यालय पर तथा शहरी क्षेत्रों में दो आंगनवाड़ियों में 30–30 बालिकाओं को लाभान्वित किया जा रहा है। इस योजना के द्वारा किशोरियों के पोषण और स्वास्थ्य स्तर को सुधारने, उन्हें साक्षरता, संख्यात्मक और व्यावसायिक कौशल प्रदान करने, तथा उनके सामाजिक वातावरण से सम्बद्ध मुद्दों के प्रति बेहतर समझ देने का प्रयास किया जाता है।

11. महिला स्वयं सहायता समूह कार्यक्रम: राज्य में महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने के लिए वर्ष 1997–98 से *स्वयं सहायता समूह कार्यक्रम* चलाया जा रहा है। यह कार्यक्रम राज्य के सभी ज़िलों में संचालित हो रहा है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत 10 से 20 महिलाएं स्वयं अपने निर्णय लेकर एक समूह बनाती हैं और अपनी–छोटी–छोटी बचतों के माध्यम से, सहयोग से स्वावलम्बन की प्रवृत्तियां विकसित करती और स्वरोज़गार की राह पर आगे बढती हैं। राज्य में अब तक 1,75,034 समूहों का गठन किया जा चुका है और उनमें से 1,36,367 समूहों द्वारा बैंकों में खाते खोल कर अपनी बचत राशि जमा करवाई जा रही है. इन समूहों की आंतरिक बचत राशि 1 अरब 6 करोड़ 91 लाख रुपये है। अब तक 1,37,112 समूहों को बैंकों द्वारा 294.07 करोड़ रुपये के ऋण विभिन्न आर्थिक गतिविधियों और घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उपलब्ध कराए गए हैं। स्वयं सहायता समूहों द्वारा उत्पादित सामग्री को लोकप्रिय बनाने के लिए वर्ष 2004–05 से राज्य स्तर पर स्वयं सहायता समूह हाट बाज़ार आयोजित किया जा रहा है. इस तरह के हाट बाज़ार संभाग, ज़िला और ब्लॉक स्तर पर आयोजित किए जा रहे हैं।

इस कार्यक्रम के सकारात्मक परिणामों को देखते हुए *प्रियदर्शिनी आदर्श स्वयं सहायता समूह योजना* प्रारम्भ की गई है जिसके अंतर्गत प्रत्येक ज़िले में दस स्वयं सहायता समूहों की पहचान कर उन्हें विभिन्न प्रशिक्षणों के माध्यम से स्वरोज़गार तक ले जाया जाएगा। प्रत्येक स्थायी समूह को पच्चीस हज़ार रुपये की राशि दी जाएगी तथा स्वरोज़गार गतिविधि प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद महिला समूहों द्वारा निर्मित उत्पादों के विपणन के अवसर भी सुलभ कराए जाएंगे। इसी क्रम में वर्ष 2010 से अमृता पुरस्कार भी प्रारम्भ किए गए हैं, जिसके अंतर्गत श्रेष्ठ प्रदर्शन करने वाले एक सहायता समूह को पचास हज़ार रुपये एवं स्वयं सहायता समूह कार्यक्रम में श्रेष्ठ अनुभव एवं परिणाम देने वाले एक स्वयंसेवी संगठन को बीस हज़ार रुपये का पुरस्कार दिया जाएगा।

12. मुख्यमंत्री का सात सूत्रीय महिला सशक्तिकरण कार्यक्रम:

राज्य के मुख्यमंत्री द्वारा महिलाओं के व्यक्तिगत, सामाजिक, आर्थिक सशक्तिकरण के लिए वर्ष 2009–10 के बजट भाषण में सात सूत्रीय महिला सशक्तिकरण कार्यक्रम की घोषणा की गई. कार्यक्रम के सात सूत्र ये हैं:

1. सुरक्षित मातृत्व
2. शिशु मृत्यु दर में कमी लाना

3. जनसंख्या स्थिरीकरण
4. बाल विवाहों की रोकथाम
5. लड़कियों का कम से कम कक्षा 10 तक ठहराव
6. महिलाओं को सुरक्षा तथा सुरक्षित वातावरण प्रदान करना जिसमें स्वयं सहायता समूह कार्यक्रम के माध्यम से स्वरोज़गार के अवसर प्रदान करते हुए आर्थिक सशक्तिकरण भी शामिल है।
7. मुख्य सचिव की अध्यक्षता में राज्य स्तर पर प्रकोष्ठ बनाकर इस कार्यक्रम की मॉनिटरिंग की जाएगी।

इस कार्यक्रम को कारगर बनाने के लिए स्वास्थ्य, शिक्षा, पंचायती राज, राजस्व, ग्रामीण विकास, रोज़गार, गृह, परिवहन, कृषि और महिला और बाल विकास विभागों के विभिन्न कार्यक्रमों को समन्वित किया जा रहा है। विभिन्न विभागीय कार्यक्रमों को समन्वित करने के बाद भी इन लक्ष्यों को अर्जित करने में कोई गैप रहता है अथवा अतिरिक्त संसाधनों की आवश्यकता रहती है तो इसके लिए पृथक से 100 करोड़ रुपये का कॉरपस बनाया गया है।

13. अन्य: इनके अतिरिक्त भी राज्य सरकार के ऐसे अनेक क़दम हैं जिनसे महिला सशक्तिकरण को बहुत बल मिला है. यहां हम संक्षेप में उनकी चर्चा कर रहे हैं।

–राज्य के सभी शेष 1262 बालिका विद्यालयों को उच्च प्राथमिक विद्यालयों में क्रमोन्नत कर दिया गया है ताकि प्राथमिक से उच्च प्राथमिक स्तर पर होने वाली 14 प्रतिशत ड्रॉप आउट दर को नियंत्रित किया जा सके।

–राजकीय विद्यालयों में अध्ययनरत कक्षा 10 की माध्यमिक बोर्ड की मेरिट लिस्ट में आने वाली प्रथम तीन छात्राओं को विदेश में स्नातक स्तर की शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्रदान किया जाएगा और उनकी शिक्षा पर होने वाला सम्पूर्ण व्यय बालिका शिक्षा फाउण्डेशन द्वारा वहन किया जाएगा।

–साक्षरता एवं सतत शिक्षा के अंतर्गत 3,967 विशेष महिला शिविर आयोजित कर 90,204 महिलाओं को साक्षर किया गया। इस पर 7 करोड़ 41 लाख रुपये व्यय हुआ. महिलाओं के लिए 401 व्यावसायिक कौशल उन्नयन प्रशिक्षण शिविर भी आयोजित किये गए जिनमें 20 हज़ार 60 महिलाओं ने प्रशिक्षण प्राप्त किया।

–राज्य में 19 महिला थाने कार्यरत हैं। यदि कोई पीड़ित महिला अभियोग दर्ज़ न कराकर आपसी समझौता चाहती है तो महिला सलाहकार एवं सुरक्षा केन्द्रों एवं पारिवारिक परामर्श केन्द्रों द्वारा महिला के ससुराल पक्ष को बुलाकर सुलह करवाने का प्रयास किया जाता है। राज्य में अभी 12 महिला सलाह एवं सुरक्षा केन्द्र तथा 39 पारिवारिक परामर्श केंद्र कार्यरत हैं। इनके अतिरिक्त थाना स्तर पर सभी थानों में महिला डेस्क कार्यरत हैं जो महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों की सुनवाई कर त्वरित गति से कार्यवाही कर राहत प्रदान करते हैं।

–महिलाओं पर अत्याचार और उत्पीड़न की घटनाओं को रोकने के लिए प्रभावी योजना की क्रियान्विति के लिए सीकर, जालोर, बांसवाड़ा, हनुमानगढ़ और बारां में महिला थाने खोलने की अधिसूचना 13.12.2009 को जारी कर दी गई।

राज्य सरकार की इन योजनाओं के अतिरिक्त केन्द्र सरकार की एक पहल की चर्चा विशेष रूप से आवश्यक है, जिससे महिला सशक्तिकरण के प्रयासों को अत्यधिक बल मिला है। *महात्मा*

गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी अधिनियम ने पूरे देश की ग्रमीण महिलाओं को रोज़गार, सम्मान, समानता और नेतृत्व का अधिकार दिया है। इस अधिनियम के द्वारा महिलाओं के लिए निम्न व्यवस्थाएं की गई हैं:

–महिलाओं को रोजगार के आवंटन में प्राथमिकता दी जाएगी और एक तिहाई रोज़गार महिलाओं को मिलेगा। –महिलाओं को पुरुषों के बराबर मज़दूरी दी जाएगी. उनके साथ कोई भेदभाव नहीं किया जाएगा –यदि कार्यस्थल पर महिलाओं के साथ छह बरस से कम उम्र के पांच से अधिक बच्चे आते हैं तो उन्हें संभालने के लिए एक महिला मज़दूर को लगाया जाएगा. –ग्राम स्तरीय चौकसी और निगरानी समितियों के लिए सद्स्यों का चयन ग्राम सभा करेगी. सदस्यों का चुनाव करते हुए इस बात का खयाल रखा जाएगा कि उसमें अनुसूचित जाति/अनुसूचित जन जाति तथा महिलाओं को भी उचित प्रतिनिधित्व मिले।

–इस योजना के अंतर्गत राज्य में मेट के पैनल में 50% महिलाओं को शामिल करने की व्यवस्था है।

इन प्रावधानों को दृष्टिगत रखते हुए राजस्थान ने महिलाओं को समुचित भागीदारी देने के अपने दायित्व का बहुत अच्छी तरह निर्वाह किया है। यही वजह है कि वर्ष 2009–10 में जहां महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारण्टी योजना में सृजित मानव दिवसों में राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं का प्रतिशत लगभग 48 था वहीं, राजस्थान में महिलाओं की भागीदारी 67 प्रतिशत रही। इसी तरह राजस्थान मे 6,41,353 गांवों में ग्राम स्तरीय चौकसी एवं निगरानी समितियों में महिलाओं को समुचित प्रतिनिधित्व दिया गया और 9166 ग्राम पंचायतों में ग्राम पंचायत स्तरीय सामाजिक अंकेक्षण समिति में महिलाओं को प्रति समिति दो सदस्यों के हिसाब से प्रतिनिधित्व दिया गया। मेट पैनल में महिलाओं की भागीदारी पचास प्रतिशत है।

राजस्थान राज्य की महिला नीति

विगत कुछ वर्षों में महाराष्ट्र मध्यप्रदेश और तमिलनाडु की राज्य सरकारों ने महिलाओं के लिए नीति की घोषणा की है। भारत सरकार के महिला एवं बाल विकास विभाग ने भी राष्ट्रीय महिला नीति पर 1996–97 में एक चर्चा आरम्भ की थी। इन सभी प्रयासों से समानता एवं सामाजिक न्याय के लिए महिलाओं के संघर्ष में ऐसे दस्तावेज़ की उपादेयता पर चर्चा प्रारम्भ हुई। अनेक विशेषज्ञों का मत है कि प्रगतिशील नीतियां एवं कानूनी प्रावधान नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा में सहायक सिद्ध होते हैं। भारत का संविधान भी महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक विभेद को मान्यता देता है। महिलाओं के पक्ष में इस सकारात्मक धारणा ने महिला समर्थक कानूनों, आरक्षण एवं विशेष कार्यक्रमों को वैधता प्रदान की है। राजस्थान सरकार का भी यह मत है कि महिलाओं के पक्ष में उठाया गया प्रत्येक क़दम समान अधिकारों की प्राप्ति के संघर्ष में महिलाओं की मदद करेगा। इसी धारणा को दृष्टिगत रखते हुए राजस्थान सरकार ने भी महिलाओं के लिए एक नीति पत्रक जारी करने का निश्चय किया। यह आशा की गई है कि यह नीति पारंपरिक नीति दस्तावेज़ों से हटकर होगी। इसे एक कार्यकारी दस्तावेज़ के रूप में, जो एक गतिशील और आशावादी दृष्टिकोण रखता है, देखना उचित होगा। इस नीति पत्रक में न तो सब प्रश्नों के उत्तर समाहित हैं और न ही यह दम्भ है कि इसमें महिलाओं से सम्बन्धित सभी बिन्दु सम्मिलित कर लिए गए हैं। यह दस्तावेज़ परिधियों को

चिह्नित करने का प्रयास है और आशा की जाती है कि जैसे–जैसे अनुभव प्राप्त होगा, इसमें और परिष्कार किया जाएगा। असल में इस दस्तावेज़ का उद्देश्य कोई नई बात न कहकर, इस देश के कानूनों की क्रियान्विति सुनिश्चित करने के प्रति सरकार की प्रतिबद्धता को पुष्ट करना है।

नीति के उद्देश्य

इस नीति का उद्देश्य समाज में बालिकाओं तथा महिलाओं के स्तर एवं उनकी स्थिति में सुधार करना तथा शोषण एवं शोषणवादी कुरीतियों को समाप्त करने के लिए प्रक्रियाओं, पद्धतियों व तंत्र को गतिशील बनाना और राज्य में महिलाओं एवं बालिकाओं के समग्र विकास हेतु सहायक वातावरण तैयार करना है।

इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए ये उपाय प्रस्तावित हैं:

–ऐसी नीतियां और कार्यक्रम लागू करना जो लिंग समानता एवं सामाजिक न्याय (जेंडर न्याय सहित) प्रदान करने तथा महिलाओं को अपने संवैधानिक अधिकारों को प्राप्त करने में समर्थ बनाएं।
–घर की अर्थ व्यवस्था, समाज एवं राज्य में महिलाओं की उत्पादक भूमिका को मान्यता देना. सरकार संसाधनों एवं विकास के परिमापों तक सबकी समान पहुंच एवं नियंत्रण के लिए प्रयास करेगी।
–अत्यधिक दरिद्रता एवं विषम परिस्थितियों में बालिकाओं, किशोरी कन्याओं एवं महिलाओं की विशेष ज़रूरतों को मान्यता देना व समाज के दुर्बल वर्गों के विकास हेतु प्रयासों को लक्षित करना।
–महिलाओं में कुपोषण, अस्वस्थता, जल्दी बच्चे पैदा होने एवं अधिक मृत्यु के जीवन–चक्र को मान्यता देना, महिलाओं के स्वास्थ्य के प्रति जीवन–चक्र के ऐसे दृष्टिकोण को अपनाना जो बचपन से वृद्धावस्था तक प्रत्येक चरण पर आवश्यकताओं को मान्यता देता है। महिलाओं को प्रजनन स्वास्थ्य पर अधिक नियंत्रण करने और अनचाहे गर्भधारण को रोकने के लिए सहायता प्रदान करना।
–सभी बालिकाओं को कम से कम प्राथमिक शिक्षा दिलाना, निरक्षर एवं नव–साक्षर किशोरियों एवं महिलाओं को बुनियादी एवं सतत शिक्षा के अवसर प्रदान करना तथा महिलाओं को शिक्षा के सभी स्तरों पर समान सुविधाएं दिलाना।
–सभी स्तरों पर सभी विभागों में सरकारी कर्मचारियों की जेण्डर संवेदनशीलता के लिए सहायक वातावरण एवं उपयुक्त तंत्र सृजित करना तथा राजनीतिज्ञों, राय निर्माताओं एवं मीडिया को संवेदनशील करना।
–राजनीतिक प्रक्रिया में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी को प्रोन्नत करना एवं समर्थन देना तथा विकास में निर्णायक भूमिका निभाने वाली सरकारी व गैर–सरकारी संस्थाओं व संगठनों तक महिलाओं की पहुंच को प्रोत्साहित करना।

त्रि–आयामी दृष्टिकोण

यह किसी भी नीति में मुमकिन नहीं होता है कि महिलाओं को प्रभावित करने वाले सभी कारकों को सूचीबद्ध कर लिया जाए। राजस्थान जैसे विशाल और विविधता भरे प्रदेश में तो यह काम और भी अधिक कठिन है। यहां की क्षेत्रीय–आर्थिक–भौगोलिक विषमताएं और विभिन्न

सामाजिक एवं पारंपरिक दृष्टिकोण महिलाओं के लिए एक असमान वातावरण का निर्माण करते हैं। प्रत्येक समुदाय की अपनी कुछ परंपराएं और विशिष्ट संस्कृति है जिनके मूल स्वरूप को बचाए रखते हुए उनमें व्याप्त कुप्रथाओं को दूर कर जैंडर समता का उद्देश्य अर्जित करना कठिन कार्य है। इस नीति की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह नीति एक व्यूह रचना के रूप में संविधान द्वारा प्रतिपादित समानता, सामाजिक न्याय व समान नागरिकता को आधार स्तंभ मानकर प्रारूपित की गई है। इस नीति की क्रियान्विति के लिए इसे त्रि–आयामी रूप प्रदान किया गया है. ये त्रि–आयाम निम्न हैं**:**

1. अधिकार परिप्रेक्ष्य की पुन अभिपुष्टि: यह आयाम इस नीति को दार्शनिक आधार प्रदान करते हुए कल्याणकारी विचारधारा के स्थान पर सशक्तिकरण व अधिकार प्रदत्त करने की भावना को अधिक महत्व देता है। वर्तमान परिदृश्य में यह आवश्यक है कि इस प्रकार का वातावरण तैयार किया जाए जिससे महिलाएं सामाजिक व राजकीय तंत्र पर पूर्णतः आश्रित न होकर स्वयं सशक्त बनें और अपने अधिकारों व दायित्वों को समझते हुए विकास की दिशा में निर्णायक भूमिका निभाएं। इसके लिए प्रशासकों, नीति–निर्माताओं, राजनीतिक व सामाजिक नेताओं एवं सेवा प्रदानकर्ताओं की महिलाओं के प्रति अधिष्ठायी मानसिकता को बदलना आवश्यक है।

2. विषम परिस्थितियों में घिरी हुई महिलाओं व विशेष फोकस ग्रुपों तक पहुंचना: यह आयाम हमारे समाज के दुर्बल वर्गों को चिह्नित करता है तथा यह स्वीकार करता है कि सभी महिलाएं एक ही श्रेणी की नहीं हैं. इससे प्रशासकों व सेवा प्रदानकर्ताओं को अपने प्रयत्नों को उन समूहों पर लक्षित करने में मदद मिलेगी जिन्हें उनकी नितांत आवश्यकता है।

3. समुचित विधान, कार्यक्रम विकास, परिनिरीक्षण एवं कार्य के लिए प्राथमिकता क्षेत्र: यह आयाम उन प्राथमिकताओं को अनुसूचित करता है जिन पर सरकारी व गैर–सरकारी संगठनों, विभिन्न सामाजिक संस्थाओं व अन्य क्षेत्रों से कार्य अपेक्षित हैं. इससे सभी को अपने–अपने क्षेत्र में कार्य योजनाएं तैयार कर प्राथमिकताओं को ध्यान में रखते हुए क्रियान्वयन की दिशा निर्धारित करने में मदद मिलेगी।

अधिकारों के परिप्रेक्ष्य की पुन अभिपुष्टि

समान अधिकारों की संवैधानिक गारण्टी से अभिप्रेत यह नीति महिलाओं के मौलिक अधिकारों की प्राप्त हेतु कार्य करने की सरकार की वचनबद्धता की अभिपुष्टि करती है। महिला दशक (1975–85) की अवधि में महिला विकास के प्रति सरकार के दृष्टिकोण में बदलाव आया व सरकार महिलाओं को निष्क्रिय लाभग्राही न मानकर उनको सशक्त बनाने की ओर उन्मुख हुई. भारत सरकार ने महिलाओं के विरुद्ध सब प्रकार के भेदभावों को समाप्त करने सम्बन्धी संयुक्त राष्ट्र संघ के दिसंबर, 1979 के समझौते पर हस्ताक्षर किए। यह नीति दस्तावेज़ इस समझौते की अधिकार–परक परिप्रेक्ष्य की भावना पर आधारित है। विशेष रूप से यह नीति निम्नलिखित अधिकारों का वर्णन करती है**:**

- जीवन, उत्तरजीविता, जीविका के साधनों, आश्रय एवं मूलभूत आवश्यकताओं का अधिकार।

- समान कार्य के लिए समान वेतन का अधिकार, भेदभावरहित वातावरण तथा प्रजनन में महिलाओं के योगदान की अभिस्वीकृति तथा कामकाजी महिलाओं के लिए बाल रक्षा सेवाओं के लिए सह–प्रतिबद्धता का अधिकार।
- प्राकृतिक संसाधनों एवं सामान्य सम्पत्ति संसाधनों तक पहुंच का अधिकार।
- ऐसे सुरक्षित वातावरण का अधिकार जो वर्तमान एवं भावी पीढ़ियों के जीवन में सहायता करे।
- अबोध शिशु से लेकर वृद्धावस्था तक जीवन के प्रत्येक स्तर पर स्वास्थ्य की देखभाल का अधिकार।
- स्वयं के शरीर पर अधिकार एवं स्वेच्छा से गर्भधारण करने का अधिकार।
- शिक्षा, सूचना, कौशल विकास एवं ज्ञान के नए साधनों का अधिकार।
- हिंसा, अतिक्रमणों एवं दासता के विरुद्ध संरक्षण का अधिकार। गरिमा एवं व्यक्तित्व का अधिकार, हिंसा एवं सभी प्रकार के अतिक्रमणों से मुक्ति का अधिकार।
- ग़रीब महिलाओं के लिए विधिक सहायता सहित विधिक एवं सामाजिक न्याय का अधिकार।
- सभी समुदायों एवं जातियों की महिलाओं के लिए अविभेदकारी वैयक्तिक कानून का अधिकार।
- सार्वजनिक स्थानों, संस्थाओं एवं रोज़गार के लिए समान पहुंच का अधिकार।
- राजनीतिक, प्रशासनिक एवं शासन की सामाजिक संस्थाओं में समान भागीदारी का अधिकार।

ये अधिकार नीति निर्धारण के लिए दार्शनिक आधार प्रदान करते हैं एवं स्वीकार करते हैं कि महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य, कौशल, प्रशिक्षण, जीविका आदि तक पहुंच अपने आप में ही महत्वपूर्ण है न कि केवल वंश वृद्धि के सहयोगी साधन के रूप में। यह नीति महज जनन दृष्टिकोण से दूर हटने तथा शक्ति प्राप्त करने एवं अधिकारों में पैठ करने की अभिपुष्टि करती है। यह अपेक्षा की जाती है कि महिलाओं को अब और अधिक समय तक कल्याण कार्यों में निष्क्रिय प्राप्तकर्ता के रूप में नहीं देखा जाएगा, अपितु अधिक स्वायत्तता, विश्वास, ज्ञान, सूचना, गतिशीलता एवं दक्षता प्रदान करने के लिए बने कार्यक्रमों की प्रकृति एवं विषय–सामग्री को सुनिश्चित करने में सक्रिय सहभागी के रूप में देखा जाएगा। संक्षेप में, यह अवधारणा महिलाओं को सशक्त बनाने में कार्य करने में सरकार को समर्थ बनाएगी।

विधान, कार्यक्रम विकास एवं कार्य के लिए प्राथमिकता क्षेत्र

यद्यपि यह नीति राज्य सरकार द्वारा सभी के सहयोग और विचार–विमर्श से निर्धारित की गई है किंतु राज्य सरकार की यह मान्यता है कि इसका सफल क्रियान्वयन केवल राज्य सरकार एवं इसके तंत्र द्वारा न तो सम्भव होगा और न ही वांछित होगा। फलस्वरूप ग़ैर–सरकारी एवं स्वैच्छिक संगठनों/ अकादमिक संस्थानों, सामाजिक एवं सामुदायिक संगठनों, सभी स्तर के जन–प्रतिनिधियों तथा नया नेतृत्व प्रदान करने वाले वर्गों को इस नीति के क्रियान्वयन से

जोड़ना आवश्यक होगा। इस बात को भी आत्मसात करने की आवश्यकता है कि महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए केवल कतिपय विभागों या कतिपय संगठनों की अलग–अलग कार्ययोजनाओं के स्थान पर एक सर्वांगीण तथा एकीकृत कार्यक्रम की आवश्यकता होगी। महिलाओं की अधिकांश समस्याएं एक–दूसरे की पूरक हैं। अतः उनके समाधान में भी इस तथ्य का समावेश करना होगा। सामाजिक सेवाओं जैसे बच्चों की देख–रेख, स्वच्छ पेयजल, उचित सफाई सुविधाएं, आय अर्जित करने के अवसर तथा घर एवं समाज में महिलाओं के विरुद्ध हिंसा से निबटने के लिए तंत्र आदि, सबको एक साथ काम करना होगा. जनसंख्या वृद्धि में कमी लाना असम्भव होगा जब तक पुरुष एवं महिलाएं दोनों ही अपने बच्चों के उत्तरजीवी होने के बारे में निश्चिंत न हो जाएं एवं उन्हें अपने जीविकोपार्जन के अवसर प्राप्त न हों. प्रजनन का भार महिलाओं पर डालने एवं जनसंख्या नियंत्रण के लिए उन्हें लक्ष्य बनाए जाने से कोई परिणाम नहीं निकलेगा।

इस नीति में महिला विकास से सम्बन्धित निम्न तीन मुख्य बिन्दुओं की पहचान की गई है और मुख्य मुख्य विभागों की सूची दी गई है तथा संबंधित राजकीय विभागों को चिह्नित कर उनका उत्तरदायित्व निर्धारित किया गया है। ऐसा महिला विकास के लिए एक एकीकृत कार्ययोजना बनाने में सुविधा की दृष्टि से किया गया है। तीन बिंदु ये हैं –

1. आर्थिक सशक्तिकरण 2. सामाजिक समर्थक सेवाएं

3. स्वास्थ्य, पोषण एवं जन स्वास्थ्य (पानी, सफाई आदि)

यह सम्पूर्ण वृत्तांत स्पष्ट करता है भारत सरकार और राजस्थान सरकार दोनों ही महिला सशक्तिकरण के लिए पूर्णतः प्रतिबद्ध हैं और अपनी प्रतिबद्धता को अपनी विभिन्न गतिविधियों से मूर्त रूप देने में जुटे हैं। कहना अनावश्यक है कि देश और प्रांत के नागरिक भी इन सारे सरकारी प्रयासों का भरपूर लाभ ले रहे हैं और समाज के एक हिस्से में व्याप्त उस सोच में, जिसके अनुसार स्त्री को दोयम दर्ज़े का नागरिक माना जाता था, बहुत तेज़ी से बदलाव आ रहा है। निश्चय ही यह बदलाव स्वागत योग्य है। आखिर कोई भी देश अपनी आधी आबादी को साथ लिए बगैर तो तरक्की कर नहीं सकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. 1961 की जनगणना में भारत में साक्षर महिलाओं का प्रतिशत था :

(अ) 15 (ब) 20 (स) 40 (द) 60. ( )

2. भारत के रेल मंत्रालय ने इस नाम से इक्कीस महिला स्पेशल ट्रेनें चलाने का निर्णय किया है:

(अ) स्त्री शक्ति (ब) मातृ भूमि
(स) भारतीय नारी (द) झांसी की रानी ( )

3. वर्ष 2001 की जनगणना में राजस्थान की कुल जनसंख्या थी:

(अ) 10 करोड़ (ब) 7 करोड़
(स) 5 करोड़ 65 लाख (द) 4 करोड़ 20 लाख ( )

4. राजस्थान राज्य महिला आयोग का गठन किस वर्ष में किया गया:

(अ) 2010 (ब) 2005
(स) 2000 (द) 1999. ( )

5. राजस्थान में वर्ष 1984 में महिला विकास कार्यक्रम कितने ज़िलों में आरंभ किया गया:

(अ) सात (ब) ग्यारह
(स) पन्द्रह (द) बीस. ( )

6. पांच सूत्रीय महिला सशक्तिकरण कार्यक्रम में सकल जन्म दर को कहां तक ले आने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है:

(अ) 17 प्रति हज़ार (ब) 21 प्रति हज़ार
(स) 25 प्रति हज़ार (द) 30 प्रति हज़ार ( )

7. घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 पूरे देश में किस तिथि से प्रभावी किया गयाहै:

(अ) 1 जनवरी 2005 (ब) 26 जनवरी 2005
(स) 26 अक्टूबर 2006 (द) 31 दिसंबर 2006. ( )

8. राजस्थान में बालिकाओं की संख्या में गिरावट रोकने के लिए चलाई जा रही योजना का नाम है :

(अ) बालिका घटाओ योजना (ब) बालिका विस्तार योजना
(स) कन्या वृद्धि योजना (द) मुख्यमंत्री बालिका सम्बल योजना. ( )

9. राजस्थान के मुख्यमंत्री ने वर्ष 2009–10 के अपने बजट भाषण में महिला सशक्तिकरण के लिए कितने सूत्रीय कार्यक्रम की घोषणा की थी:

(अ) सात (ब) ग्यारह
(स) पन्द्रह (द) बीस. ( )

10. वर्ष 2009–10 में महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारण्टी योजना में सृजित मानव दिवसों में राजस्थानी महिलाओं की भागीदारी का प्रतिशत क्या था:

(अ) 60 (ब) 67
(स) 80 (द) 99. ( )

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. राजस्थान में स्त्रियों की दशा सुधारने में सबसे बड़ी भूमिका किसकी है?
2. सशक्तिकरण का क्या आशय है?
3. महिला साक्षरता को बढ़ाने के लिए राष्ट्रीय साक्षरता मिशन का पुनर्गठन करके शुरू किए जाने वाले नए कार्यक्रम का नाम क्या है?
4. राज्य तथा ज़िला स्तर पर सूचना विकास एवं सन्दर्भ एजेंसी का संक्षिप्त नाम क्या है?
5. राजस्थान राज्य महिला आयोग के अध्यक्ष का मनोनयन कौन करता है?
6. राजस्थान में महिला विकास कर्यक्रम को संचालित करने वाले विभाग का नाम क्या है?
7. ज़िला महिला सहायता समिति का अध्यक्ष कौन होता/होती है?

8. किस अधिनियम में घरेलू हिंसा शब्द की व्यापक परिभाषा की गई है?
9. जननी सुरक्षा योजना का लाभ दिलवाने में कौन मदद करती हैं?
10. राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारण्टी अधिनियम के साथ किस महापुरुष का नाम जुड़ा हुआ है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. मध्यकाल में राजस्थान में स्त्रियों की स्थिति कैसी थी?
2. पांच सूत्रीय महिला सशक्तिकरण कार्यक्रम के पांच सूत्र लिखिए।
3. जननी सुरक्षा योजना क्या है?
4. जैण्डर संवेदनशील बजटिंग का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
5. राजस्थान में चलाए जा रहे महिला स्वयं सहायता समूह पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
6. मुख्य मंत्री जी के महिला सशक्तिकरण कार्यक्रम के प्रमुख सूत्र क्या हैं?
7. राजस्थान राज्य की महिला नीति के उद्देश्य क्या हैं?
8. राजस्थान राज्य की महिला नीति के त्रिआयामी दृष्टिकोण के तीनों आयामों के नाम लिखिए।

निबंधात्मक प्रश्न

1. स्त्रियों की दशा सुधारने में शिक्षा की भूमिका पर प्रकाश डालिए।
2. राज्य महिला आयोग के कार्यों का परिचय दीजिए।
3. राजस्थान में चलाए जा रहे महिला विकास कार्यक्रम पर एक परिचयात्मक टिप्पणी लिखिए।
4. घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 का संक्षेप में परिचय दीजिए।
5. राजस्थान राज्य की महिला नीति पर एक परिचयात्मक टिप्पणी लिखिए।

10 Commandments of safe driving

- Don't jump traffic lights
- Drive wearing seat belts
- Don't drive without wearing a helmet
- Don't talk on mobile
- Don't drive on wrong side
- Don't break speed barrier
- Don't drive in no-entry zone
- Turn lights to low-beam while driving in city limits
- Avoid use of tinted glasses on your car windows
- Don't drink and drive

अध्याय – 10
उपभोक्ता संरक्षण

भूमिका

भूमण्डलीकरण एवं उदारीकरण के दौर में दुनिया के देशों के बीच दूरियाँ कम हुई हैं। तकनीकी विकास, आय और शैक्षणिक स्तर में निरंतर वृद्धि उत्पादों में विविधता, विपणन गतिविधियों में बारीकी और संसाधनों एव आवश्यक वस्तुओं में कमी आदि ने उपभोक्ता आन्दोलन को अपरिहार्य बना दिया। विश्व के विकसित राष्ट्रों जैसे अमेरिका, इंग्लैण्ड, जापान सहित यूरोप के देशों में शिक्षा और उपभोक्ता हितों के प्रति जागरुकता के कारण उपभोक्ता आन्दोलन सशक्त है। जबकि भारत जैसे भारत जैसे विकासशील देश में मूलभूत सामाजिक एवं आर्थिक समस्याऐं, निर्धनता, अशिक्षा, क्रय शक्ति में कमी तथा उपभोक्ता अधिकारों के बारे में अज्ञानता के कारण उपभोक्ता शोषण की प्रक्रिया विद्यमान है।

उपभोक्ता नीतियों के विकास के इतिहास में **9 अप्रैल 1985** का दिन काफी महत्वपूर्ण है, इसी दिन संयुक्त राष्ट्र महासभा ने उपभोक्ता संरक्षण के लिए दिशा निर्देशों को मंजूरी दी थी, तथा सदस्य देशों को कानून बनाकर या नीतियों में बदलाव के जरिए उन्हें लागू करने के लिए राजी करने की जिम्मेदारी संयुक्त राष्ट्र महासचिव को दी गई थी।

औद्योगिक क्रान्ति और तकनीकी विकास की गति के परिणामस्वरुप अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हो रहे परिवर्तन ने भारत में उपभोक्ता आन्दोलन के नए स्वरुप की नींव डाली। यहां उपभोक्ता आन्दोलन सर्वप्रथम महाराष्ट्र में सन् 1904 में शुरु हुआ। स्वतन्त्र भारत में उपभोक्ता आन्दोलन को प्रारम्भ करने का श्रेय तत्कालीन मद्रास राज्य के मुख्यमंत्री श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी को जाता है, जिन्होंने वर्ष 1949 में उपभोक्ता के हितों की रक्षा के लिए उपभोक्ता संरक्षण परिषद की स्थापना की।

उपभोक्ता को राहत देने के लिए एमआरटीपी कमीशन 1969, नाप तोल मानक संबंधी अधिनियम 1976, आदि कुछ विशेष नहीं कर पा रहे थे। ऐसी स्थिति में एक ऐसे कानून की आवश्यकता महसूस की जा रही थी जो उपभोक्ता को हुए कष्ट तथा हानि की भरपाई कर पाता। इसी को ध्यान में रखकर 24 दिसम्बर 1986 को उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम संसद में पारित किया गया। तभी से 24 दिसम्बर का दिन उपभोक्ता दिवस के रुप में मनाया जाता है। इस अधिनियम की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए वर्ष 1997 में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय उपभोक्ता संरक्षण सम्मेलन में कहा गया था कि भारतीय उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम एक ऐसा कानून है जिसने उपभोक्ताओं के अधिकारों के क्षेत्र में एक नई क्रान्ति की शुरुआत की है और जिसका दुनिया में कोई सानी नहीं है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 : संक्षिप्त जानकारी

- उपभोक्ताओं के हितों को संरक्षित करने तथा उनके अधिकारों को बढ़ावा देने के उद्‌देश्य से उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम को बनाया गया है।

- यह अधिनियम सामाजिक–आर्थिक विधान के इतिहास में एक मील का पत्थर है। निःसंदेह यह देश में अलग तरह का कानून है, जो दोषपूर्ण सामान और त्रुटिपूर्ण सेवाओं के खिलाफ आम उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करने में सक्षम है।

- इसकी सबसे बड़ी विशेषता, सीमित समय–सीमा के अन्दर विवादों के शीघ्र और सस्ते निपटाने की व्यवस्था है, जबकि सिविल न्यायालय में मुकदमे मंहगे होते हैं और समय भी अधिक लगता है।
- इस अधिनियम में उपभोकताओं के अधिकारों की रक्षा के लिए केन्द्रीय, राज्य और जिला स्तर पर उपभोक्ता संरक्षण परिषदों की स्थापना तथा उपभोक्ता विवादों को निपटाने के लिए जिला, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर त्रि–स्तरीय निवारण तंत्र स्थापित किए गये है।
- इनको जिला उपभोक्ता मंच, प्रादेशिक आयोग एवं राष्ट्रीय आयोग के नाम से जाना जाता है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियिम, 1986 की प्रमुख विशेषताएँ :

- इस अधिनियिम का मुख्य उद्देश्य उपभोक्ताओं को दोषपूर्ण सामग्री, असंतोषजनक अथवा त्रुटिपूर्ण सेवा तथा अनुचित व्यापारिक व्यवहार के विरुद्व संरक्षण प्रदान करना है।
- भौगोलिक स्तर पर जम्मू–कश्मीर के अलावा यह अधिनियम पूरे देश में समान रुप से लागू होता है।
- केन्द्र सरकार द्वारा विशेष रुप से अनुसूचित वस्तुओं एवं सेवाओं को छोड़कर इसके दायरे में समस्त वस्तु एवं सेवाएं आती है।
- यह अत्यंत नवीन एवं प्रगतिशील समाज कल्याण कानून है।
- इस अधिनियम से उपभोक्ता आन्दोलन शक्तिशाली बना है।
- यह एकमात्र कानून है, जो सीधे बाजार व्यवस्था से जुड़ा हुआ है, तथा इससे उत्पन्न शिकायतों का निवारण करने में सक्षम है। इसकी विभिन्न व्यवस्थायें अत्यन्त व्यापक एवं प्रभाशाली हैं।

उपभोक्ता कौन है ?

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अनुसार निम्न में से कोई एक उपभोक्ता हो सकता है–

- वह व्यक्ति जो मूल्य अदा करके या अदायगी का वादा करके या किस्तों में भुगतान करने का वादा करके कोई वस्तु खरीदता है अथवा सेवा प्राप्त करता है।
- ग्राहक की सहमति से उस वस्तु अथवा सेवा का उपभोग करने वाला व्यक्ति भी उपभोक्ता होता है।
- उपभोक्ता की श्रेणी में वह व्यक्ति नहीं आता जो किसी वस्तु को पुनः बिक्री अथवा व्यापारिक उद्देश्य से खरीदता है।
- आजीविका चलाने या स्व–रोजगार के लिए खरीदी गई वस्तु का उपयोग व्यावसायिक उद्देश्य नहीं माना जाता।
- लाभ प्राप्ति के उद्देश्य से कोई भी आर्थिक गतिविधि अथवा लेन–देन व्यावसायिक उद्देश्य माना जाएगा।

उपभोक्ता के अधिकार

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत निम्नलिखित अधिकार प्रदान किए गए हैं –

- **सुरक्षा का अधिकार :–** ऐसी वस्तुएं जो जीवन व सम्पत्ति के लिए खतरनाक हैं, उनके वितरण व विपणन के खिलाफ सुरक्षा के अधिकार प्रदान किए गये हैं।

- **सूचना का अधिकार :—** इसके अन्तर्गत वस्तुओं या सेवाओं की गुणवत्ता, मानक, माप, मूल्य व शुद्वता आदि के बारे में सूचना प्राप्त करने का अधिकार है। जिससे उपभोक्ता अनुचित व्यापार प्रक्रिया से सुरक्षित रह सके।
- **चयन का अधिकार :—** उपभोक्ता को वस्तुओं की अलग—अलग किस्मों को प्रतियोगी मूल्य पर चयन करने का अधिकार है। एक ही प्रकार की सामग्री दिखाकर उसे खरीदने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता हैं।
- **सुनवाई का अधिकार :—** इस अधिकार के अंतर्गत उपभोक्ता की शिकायत को जिला, राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर पर सुनवाई का अधिकार है।
- **शिकायत के समाधान का अधिकार :—** इसके अन्तर्गत अनुचित व्यापार, व्यवहार तथा शोषण की शिकायत पर समाधान मांग करने का अधिकार प्रदान है।
- **उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार :—** उपभोक्ता को बाजार में उपलब्ध वस्तुओं व सेवाओं के प्रयोग तथा लाभ व हानि के बारे में जानकारी हासिल करने का अधिकार है।

दोषपूर्ण वस्तु एवं सेवा में कमी की परिभाषा

दोषपूर्ण वस्तु :— तत्कालीन नियम, विनिमय, एवं कानून के अंतर्गत वस्तुओं की गुणवत्ता, माप, असर, शुद्वता या मापदण्डों में त्रुटि अपूर्णता अथवा कमी जो विक्रेता द्वारा किए गए दावे के अनुसार नहीं है— वस्तु अथवा सामग्री में दोष माने जाते हैं।

वस्तु का आशय :— कोई भी चल सम्पत्ति है, (करेन्सी को छोड़कर) इसमें माल अथवा शेयर, उगी हुई फसल, घास या ऐसी चीजें जो जमीन से जुड़ी हुई हैं तथा जिन्हें बिक्री या बिक्री अनुबंध से पहले हटाया या काटा जा सकता है।

सेवा :— सेवा से तात्पर्य किसी भी प्रकार की सेवा है जो उसके संभावित प्रयोगकर्ता को उपलब्ध कराई जाती है, इसके अंतर्गत बैंकिग, बीमा, परिवहन, गृह निर्माण, रेलवे, बिजली, मनोरंजन, टेलीफोन, चिकित्सा आदि सभी प्रकार की सेवाएं सम्मिलित हैं। किन्तु इसके अंतर्गत निःशुल्क या व्यक्तिगत सेवा संविदा के अधीन सेवा किया जाना नहीं है।

उपभोक्ता शोषण के कारण –

भारत में उपभोक्ता शोषण के मूल में निम्न कारण दृष्टिगोचर होते है।

(1) मांग एवं पूर्ति में असंतुलन :— जनसंख्या में तीव्रगति से वृद्धि के कारण वस्तुओं एवं सेवाओं की मांग में वृद्धि हो रही है। मांग की तुलना में वस्तुओं एवं सेवाओं की उपलब्धि कम होने के कारण मांग व पूर्ति में असंतुलन हो जाता हैं ऐसी स्थिति में व्यवसायी घटिया वस्तुओं का उत्पादन कर उपभोक्ता से ऊँचा मूल्य वसुल करते है।

(2) एकाधिकार :— कुल वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन एवं वितरण पर एक व्यावसायिक समूह या किसी सावर्जनिक उपक्रम का एकाधिकार होता है। प्रतिस्पर्द्धा के अभाव में इन संस्थाओं द्वारा वस्तुओं एवं सेवाओं के ऊँचे मूल्य रखे जाते है तथा उनमें निरन्तर वृद्धि की जाती है। ऐसी स्थिति में अधिक मूल्य देने के अतिरिक्त उपभोक्ता के पास अन्य कोई विकल्प नहीं होता है।

(3) अशिक्षा :— भारत में अशिक्षा उपभोक्ता शोषण का मूल कारण है। शिक्षा के अभाव में उपभोक्ता को बाजार में उपलब्ध होने वाले उत्पादों के बारे में पूर्ण जानकारी नहीं होती है तथा नह ही उपभोक्ता अपने अधिकारों के प्रति जागरुक हो पाता है।

(4) उपभोक्ता की उदासीनता :– उपभोक्ता के असंगठित होने तथा अपने अधिकारों की जानकारी न होने के कारण वह अपने अधिकारों के प्रति उदासीन रहता है। जिन उपभोक्ताओं को कुछ जानकारी होती भी है तो संगठन के अभाव में उसकी प्रवृति समझौतावादी हो जाती है।

(5) उदारीकरण, निजीकरण एवं भूमण्डलीकरण :– विश्व व्यापार संगठन के अन्तर्गत हुये विभिन्न समझौतों के कारण वस्तुओं एवं सेवाओं का आयात–निर्यात सुलभ हुआ है। आन्तरिक उदारवाद के कारण निजी व्यापारिक संस्थाओं पर नियन्त्रण ढ़ीला हुआ है। प्रभावी नियंत्रण एवं वैधानिक प्रावधानों के अभाव में विदेशों से आने वाली घटिया वस्तुओं को ऊँचें मूल्य पर बेचकर उपभोक्ता का शोषण किया जा रहा है। विद्यमान कानूनों के प्रभावी क्रियान्वयन का अभाव एवं व्यापारिक जगत में बढ़ती अनैतिकता ने उपभोक्ता के शोषण की गति की ओर बढ़ाया है।

उपभोक्ता के कर्त्तव्य :– अधिकारों को प्राप्त करने के लिये उपभोक्ताओं को अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन करना आवश्यक है। उपभोक्ता के कर्त्तव्य निम्नानुसार है –

1. माल क्रय करने से पूर्व वस्तुओं व सेवाओं के बारे में सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करना।
2. डिब्बा बंद या पैक वस्तु पर लगे लेबल पर आवश्यक सूचनायें यथा वस्तु का नाम, उसमें प्रयुक्त संघटक, वस्तु के उत्पादक नाम व पता, शुद्ध वजन या माप, बैच नम्बर, पैकिंग तिथि, तथा उपयोग योग्यता की अंतिम तिथि आवश्यक रुप से देखना।
3. उपभोक्ताओं को क्रय करते समय आई.एस.आई. एगमार्क, एफ.पी.ओ. आदि मानक एवं प्रमाणन की मोहर लगे उत्पादों को प्रथमिकता देना।
4. वस्तु का माप–तोल पूरा हो इस हेतु प्रमाणित बाट या माप ही प्रयोग में लाये गये हो तथा माप–तोल सेन्टीमीटर–मीटर, ग्राम–किलोग्राम, लीटर मे हो इसकी सुनिश्चितता करना।
5. जिन वस्तुओं के लिये राजनियमों द्वारा मूल्य निर्धारित है या व्यापारी ने मूल्य सूची जारी की है तो उससे अधिक मूल्य नहीं देना।
6. वस्तु के विज्ञापन में बतायी गयी विशेषताओं का यथार्थ स्थिति में मिलान कर तथा गारन्टी या वारन्टी की शर्तों को ठीक से समझकर माल क्रय करना।
7. सामान क्रय करने पर नकद पत्र (केश मीमो) या वाउचर आवश्य प्राप्त करना। यदि नकद पत्र या वाउचर पर यह लिखा है कि बिका हुआ माल वापस नहीं होगा या बदल नही जायेगा या वाउचर देने से मना करता है तो उसे यह बताना कि यह नियमों के विपरीत हैं।
8. सरकार द्वारा उपभोक्ता संरक्षण हेतु बनाये गये नियमों, कानूनों की जानकारी रखना।
9. उपभोक्ता संगठनों तथा सरंक्षण परिषदों द्वारा समय समय पर दी गयी जानकारी से अपने आपको, परिवार व समुदाय को शिक्षित करना।
10. शोषण व अन्याय के विरुद्ध उपभोक्ता संगठनों को जानकारी देना तथा समक्ष अधिकारियों के सक्षम शिकायत प्रस्तुत करना।

शिकायत कौन दर्ज करा सकता है :–

निम्नलिखित द्वारा शिकायत दर्ज करायी जा सकती है –

- कोई उपभोक्ता।
- पंजीकृत स्वैच्छिक उपभोक्ता संगठन।
- केन्द्रीय सरकार।
- राज्य सरकार।

- एक या अधिक उपभोक्ता जिनके उभयनिष्ठ उद्देश्य हों।

कौन सी शिकायतें दायर की जा सकती हैं ?

- किसी व्यापारी ने अनुचित अथवा प्रतिबंधित व्यापारिक व्यवहार का पालन किया हो।
- खरीदी गई अथवा जिनके खरीदने के लिये सहमति बनी हो ऐसी वस्तुएं किसी एक अथवा अनेक दोषों से ग्रस्त हों।
- ऐसी सेवाएं जो प्राप्त की गयी हों अथवा जिन्हें प्राप्त करने के लिए सहमति बनी हो, किसी प्रकार की त्रुटि अथवा अपर्याप्ता से ग्रस्त हों।
- विक्रेता द्वारा किसी वस्तु अथवा सेवा के लिए तत्कालीन प्रभाव के किसी कानून का उल्लंघन करते हुए, तय मूल्य से अथवा अंकित मूल्य से अधिक धन राशि वसूल की हो।
- तत्कालीन प्रभावी कानूनों का उल्लंघन करते हुए ऐसी वस्तु जो आम जन–जीवन और सुरक्षा की दृष्टि से खतरनाक हो बिना उसमें प्रयुक्त सामग्री की जानकारी, प्रयोग विधि व प्रभाव के विषय में सूचना दिये विक्रय करना।

शिकायत कहां दर्ज कराएं ?

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत उपभोक्ता निम्नलिखित न्यायालयों मे अपनी शिकायत दायर कर सकते हैं।

जिला उपभोक्ता फोरम : 20 लाख रुपये तक के दावे के लिए।

राज्य आयोग : 20 लाख रुपये से अधिक और 1 करोड़ के दावे के लिए।

राष्ट्रीय आयोग : 1 करोड़ से ऊपर के दावे के लिए।

उपभोक्ता न्यायलयों का संगठनात्मक स्वरुप और क्षेत्राधिकार

जिला उपभोक्ता फोरम :– जिला उपभोक्ता फोरम की खण्डपीठ में तीन सदस्य होते हैं। जिनमें एक अध्यक्ष तथा दो सदस्य होते हैं। इन सदस्यों में एक महिला सदस्य का होना अनिवार्य है। जिला स्तर पर यह न्यायालय बीस लाख तक की राशि के मामले सुन सकते हैं।

राज्य आयोग :– प्रत्येक राज्य में एक राज्य उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग होता है, आवश्यकता पड़ने पर अतिरिक्त बैंच भी स्थापित की जा सकती है। राज्य आयोग में एक अध्यक्ष तथा कम से कम दो सदस्य होते हैं। जिसमें एक महिला सदस्य का होना अनिवार्य है। राज्य आयोग का अध्यक्ष उच्च्य न्यायालय का सेवानिवृत्त न्यायाधीश होता है। यह जिला उपभोक्ता फोरम द्वारा किए गये निर्णयों के विरुद्व अपील सुन सकता है।

राष्ट्रीय आयोग :– केन्द्रीय स्तर पर देश में एक राष्ट्रीय आयोग भी स्थापित है। इसमें एक अध्यक्ष तथा कम से कम चार सदस्य होते हैं। इसका अध्यक्ष **सर्वोच्चय न्यायालय** का सेवानिवृत्त न्यायाधीश होता है। इस आयोग में भी एक महिला सदस्य का होना अनिवार्य है। यह आयोग सभी राज्यों के आयोग द्वारा निर्णय किए गये मामलों को सुनाता है, साथ ही एक करोड़ से अधिक राशि के मामले सीधे सुन सकता है। इस आयोग के निर्णय के विरुद्व केवल सर्वोच्च न्यायालय में अपील की जा सकती है।

शिकायत दर्ज कराने के लिए लगने वाला शुल्क : – उपभोक्ता संरक्षण (संशोधन) नियम 2004 के तरह निम्नलिखित शुल्क का निर्धारण किया गया है।

- एक लाख रुपये तक – 100 रुपये
- एक लाख से पांच लाख रुपये के बीच – 200 रुपये

- पांच लाख से दस लाख रुपये के बीच – 400 रुपये
- दस लाख रुपये से बीस लाख रुपये तक – 500 रुपये

उपभोक्ता अदालत में शिकायत दर्ज करने की प्रक्रिया

शिकायत डाक द्वारा या स्वयं किसी अधिकृत व्यक्ति के द्वारा दर्ज कराई जा सकती है।

- अधिवक्ता की जरुरत नहीं होती।
- शपथ–पत्र या पक्के कागज की जरुरत नहीं होती।

उपभोक्ता अदालतों में शिकायत दर्ज कराने के लिए अनिवार्य बातें

- शिकायतकर्ता का नाम और पूरा पता।
- जिसके खिलाफ शिकायत दर्ज की जा रही है, उसका नाम व पूरा पता।
- शिकायत के बारे में संपूर्ण तथ्य।
- आरोपों के समर्थन में आवश्यक दस्तावेज आदि, यदि कोई हों।
- शिकायतकर्ता अपनी शिकायत के निवारण के रुप में किस प्रकार की राहत चाहता है।
- शिकायत पत्र पर शिकायतकर्ता के अथवा उसके द्वारा अधिकृत व्यक्ति के हस्ताक्षर होने चाहिए।

उपभोक्ता न्यायालय द्वारा दी जाने वाली राहत

उपभोक्ता न्यायालय द्वारा निम्नलिखित में से एक या अधिक राहत प्रदान की जा सकती है :

- वस्तुओं में मौजूद दोष को दूर करा देना।
- खराब वस्तु के बदले में नई वस्तु दिलवाना।
- दोषपूर्ण सामग्री के बदले में अदा की गई कीमत को वापस दिलवाना।
- वस्तु खराब होने के कारण हुए नुकसान के लिए मुआवजा दिलवाना।
- खतरनाक वस्तु की बिक्री पर रोक लगाना।
- यदि किसी उत्पाद अथवा सेवा से अधिक उपभोक्ताओं को नुकसान पहुंचा है और जिनकी पहचान सुविधाजनक न हो तो ऐसी स्थिति में फोरम एकमुश्त राशि अदा करने का आदेश दे सकती है। यह राशि फोरम द्वारा ही निर्धारित की जाएगी, लेकिन कुल मूल्य के 5 प्रतिशत से कम नहीं होगी।
- भ्रामक विज्ञापन से हुए नुकसान की भरपाई के लिए नये सिरे से संशोधित विज्ञापन देना।
- पीड़ित व्यक्ति को समुचित राशि दिलवाने की व्यवस्था करना।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा किस सन् में उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के लिए दिशा निर्देशों को मंजूरी दी।

(अ) 9 अप्रैल 1985 (ब) 9 अप्रैल 1986

(स) 10 अप्रैल 1985 (द) 9 अप्रैल 1986 ( )

2. MRTP कमीशन कब बना।

(अ) 1965 (ब) 1969

(स) 1972 (द) 1974 ( )

3. उपभोक्ता संरक्षण (संशोधन) नियम के तहत 1 लाख रुपये तक शिकायत दर्ज कराने के लिए लगने वाला मूल्य हे।

(अ) 50 रु. (ब) 100 रु.

(स) 150 रु. (द) 200 रु. ( )

4. जिला उपभोक्ता फोरम में कितने सदस्य होते है।

(अ) 3 (ब) 5

(स) 9 (द) 10 ( )

5. जिला न्यायालय कितने रुपये तक की राशि के मामले सुन सकते है।

(अ) 10 लाख (ब) 20 लाख

(स) 30 लाख (द) 50 लाख ( )

6. राष्ट्रीय आयोग में कितने सदस्य होते है।

(अ) 3 (ब) 5

(स) 4 (द) 9 ( )

7. राष्ट्रीय आयोग के निर्णय से असंतुष्टि की स्थिति में कितने दिन में अपील की जा सकती है।

(अ) 30 (ब) 90

(स) 60 (द) 15 ( )

8. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम कब पारित किया गया।

(अ) 1985 (ब) 1986

(स) 1987 (द) 1988 ( )

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. नाप तौल मानक संबंधी अधिनियम कब पारित हुआ?
2. 5 लाख से 10 लाख रु. के मामलों के लिए शिकायत दर्ज कराने के लिए कितना शुल्क लगता हैं ?
3. राज्य आयोग का अध्यक्ष कौन होता है?
4. राष्ट्रीय आयोग में कितने सदस्य होते है?
5. राष्ट्रीय आयोग में कितने मूल्य के मामले रखे जा सकते है?
6. राज्य आयोग का अध्यक्ष कौन होता है?
7. शिकायत कौन–कौन दर्ज करा सकता है?
8. वस्तु से क्या आशय है ?
9. 9 अप्रेल 1985 का दिन क्यो महत्वपूर्ण है?
10. उपभोगता दिवस कब मनाया जाता है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. सुरक्षा के अधिकार को समझाइए।
2. दोषपूर्ण वस्तु एवं सेवा को परिभाषित कीजिए।
3. उपभोक्ता अदालत में शिकायत दर्ज करने की प्रक्रिया को समझाइए।

4. शिकायत दर्ज कराने के लिए अनिवार्य बातों से क्या तात्पर्य है?
5. राष्ट्रीय आयोग को समझाइए।
6. उपभोक्ता शिक्षा के अधिकार को समझाइए।
7. उपभोक्ता कौन हैं?
8. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 की प्रमुख विशेषताऐं बताइए।

निबंधात्मक प्रश्न –

1. उपभोक्ता के विभिन्न अधिकार कौन–कौन से है।
2. उपभोक्ता न्यायालयों का स्वरुप एवं क्षेत्राधिकार स्पष्ट कीजिए।
3. उपभोक्त संरक्षण अधिनियम 1986 क्या हैं विशेषताऐं भी बताइए।
4. उपभोक्ता के कर्त्तव्यों पर प्रकाश डालिए।

प्रोजेक्ट –

1. आपके विद्यालय में उपभोक्ता दिवस पर आयोजित कार्यक्रम में आपके भागेदारी निधारित करें।
2. उपभोक्ता संरक्षण के लोगों और इससे सम्बन्धित गतिविधियों के पोस्टर तैयार करें।
3. शिक्षक की मदद से कोई समस्या गठित करायें और चर्चा कर विधि सम्मत हल ढूंढें।